स्वास्थ्य का राजमार्ग

[सुप्रसिद्ध अमेरिकी डॉ० चास० ए० टाइरेल, एम० डी०
(Dr. Chas A. Tyrell M D.) की प्रसिद्ध कृति
'The Royal Road to Health or
The Secret of Health Without
Drugs' के आधार पर लिखित]

□

रूपान्तरकार

प्रभुदयाल हिम्मतसिंहका

□

१ जनवरी, १९८०

प्रकाशकीय

पुस्तक के रूपान्तरकार श्री प्रभुदयाल हिम्मतसिंहका प्राकृतिक जीवन, व्यायाम, योगासनो एव युक्त आहार मे अटूट श्रद्धा रखते है और इसी पद्धति का बराबर अनुशीलन करते है और इस प्रकार के कार्य के प्रचार मे आप सब तरह से सहयोग देते रहते है। प्राकृतिक चिकित्सा के कट्टर पक्षपाती होने के कारण आप ऐलौपैथिक दवा सेवन नही करते है। जब आप १५ साल तक ससद सदस्य रहे, तब आप प्राकृतिक चिकित्सा को बढावा देने के लिए सरकार पर बहुत जोर देते थे और अब भी इस दिशा मे पूर्ण प्रयत्नशील है। जब कभी आप की किसी रोगी से भेट होती है तो आप उसे प्राकृतिक चिकित्सा की ओर खीच लाने का प्रयास करते हैं और सफल भी हो जाते है। ६० वर्ष की आयु मे भी आपका स्वास्थ्य बहुत अच्छा है जिसका रहस्य प्राकृतिक जीवन ही है। प्राकृतिक चिकित्सा के व्यवहारिक ज्ञान के साथ-साथ आपको इस विषय का पुस्तक ज्ञान भी व्यापक है। आपने देश-विदेश के लेखको की प्राकृतिक चिकित्सा विषयक पुस्तको का बारिकी से अध्ययन किया है जिसके परिणाम स्वरूप सुप्रसिद्ध अमेरिकी डॉ० चास० ए० टाइरेल की "रॉयल रोड टू हैल्थ" का रूपान्तर ही "स्वास्थ्य का राजमार्ग" है।

प्रस्तुत प्रकाशन के ६ अध्यायो मे–दवाओ का प्रयोग हानिकारक, रोग का सच्चा कारण, विवेक-पूर्ण स्वास्थ्यप्रद उपचार, प्रयोग का तरीका (एनिमा), व्यवहारिक स्वास्थ्य विज्ञान, व्यायाम, भोजन सम्बन्धी प्रश्न, रोगों का उपचार एव कुछ उपयोगी सुझाव मे श्री हिम्मतसिंहका जी ने वास्तव मे स्वास्थ्य का सरल रहस्य इस प्रकाशन मे पाठको के समक्ष रख दिया है। पुस्तक मे बिना दवा के अच्छा स्वास्थ्य बनाए रखने की बहुमूल्य बातें सीधी-सादी सरल बोलचाल की भाषा मे प्रस्तुत की गई है जो आज के युग मे मिलनी दुर्लभ है। आशा है यह प्रकाशन प्राकृतिक चिकित्सा ससार मे एक बहुमूल्य कृति होगी।

निवेदन

कबीर जी की उक्ति है

"मिट्टी ओढन, मिट्टी बिछावण, मिट्टी का सिरहाना,
कहत कबीर सुनो भाई साधो, मिट्टी मे मिल जाना ।।

यद्यपि यह वाणी मानव जीवन की नि सारता की ओर सकेत करती है पर हमारे जीवन मे मिट्टी का कितना अधिक महत्व है, यह तथ्य भी इसमे निहित है। शरीर विज्ञान के अनुसार यह निर्विवाद है कि यह भौतिक शरीर पृथ्वी, जल, आकाश, अग्नि और वायु इन महाभूतो से बना है। इन तत्वो का सन्तुलन बिगडने से शरीर मे रोग उत्पन्न होते हैं और रोग मुक्ति के लिये अथवा आरोग्य प्राप्ति के लिये आदिकाल से मनुष्य भिन्न भिन्न प्रकार के उपचारो तथा पद्धतियो का आश्रय लेता आया है। पुराने समय मे मनुष्य का रहन-सहन आहार विहार आदि सरल था तो रोग कम होते थे और उनकी चिकित्सा भी प्रकृति के अनुकूल ही होती थी। सभ्यता के विस्तार के साथ साथ मनुष्य की भौतिक सुख सुविधाओ मे भी बहुत परि-वर्तन आया है। रहन-सहन आहार विहार भी बहुत बदल गया है। फलत आज का मनुष्य अपनी जटिल समस्याओ मे उलझा हुआ प्राणी है। उसका शरीर नीरोग नही है। उसके मन मे शान्ति नही है। सब कामो को जादुई चमत्कार की तरह से अल्प समय मे ही कर डालने की उसकी प्रवृति रहती है। रोग मुक्ति के लिये भी ऐसे ही उपायो का अवलम्बन लेना चाहता है, जिसमे थोडे से समय मे ही विना कुछ किये राहत मिल जाय।

रोग मुक्ति की उतावलेपन की इस प्रवृति मे ऐलोपेथी चिकित्सा प्रणाली से उसे और अधिक प्रश्रय मिल जाता है। थोडी

तबियत विगडी तुरन्त डॉक्टर बुलाया और डॉक्टर ने दवा लिख दी। कैमिस्ट की दुकान से दवा मँगाई और उसे तुरन्त मुँह मे डाल ली। आज सभी सम्पन्न घरो मे भोजन से कही अधिक खर्च दवाओ पर होता है। दवाये भी कितनी कीमती और कितने किस्म की आने लगी, इसकी कोई गणना नही है। आज जो दवा कामयाव या रामवाण मानी जाती है, कल उसी दवा का प्रयोग घातक समझकर वन्द कर दिया जाता है। आज-कल हर दवाओ की पैकिंग पर उनके प्रयोग के दुष्परिणामो के वारे मे कुछ न कुछ लिखा रहता है। फिर भी दवाओ का प्रयोग तीव्रगति से वढता ही जा रहा है। असली रोग का तो इलाज होता नही और विषैली दवाओ के अत्यधिक सेवन से शरीर मे और नये नये उपद्रव खडे होते जाते है। एक सीधा सा तथ्य है कि जव तक हम रोग होने के कारण नही समझेंगे और उसका निवारण नही कर सकेंगे, तव तक रोग मुक्ति होना या आरोग्यता प्राप्ति की आशा करना केवल आत्म प्रवचन मात्र है।

अमेरीका जैसे सभ्य और धनाढ्य देश मे सवसे अधिक डॉक्टरी दवाओ का आविष्कार, निर्माण और उपयोग होता है। वहाँ तो लोगो को नीद भी विना दवा सेवन किये नही आती। ऐसी दयनीय दशा है, वहाँ के लोगो की। जिस देश मे सवसे अधिक ऐलोपेथी की दवाओ का निर्माण और सेवन होता है, उसी देश मे डाक्टरी पास ऐसे मनीषि, प्रकृति प्रेमी विद्वान हुए है, जिन्होंने औषधियो के प्रयोगो के विरूद्ध अपनी आवाज उठाई है। उन्होने स्पष्ट घोषित किया है जिन पदार्थों का. जीवनी शक्ति एव प्रकृति से सम्वन्ध नही है वे आरोग्य प्राप्ति मे कभी सहायक नही हो सकते। नये नये लेवलो सहित आने वाली इन दवाओ का सेवन निरा धोखा नही वरन् खतरनाक भी है। उन्होने वताया कि अगर मनुष्य के गलत खान-पान अथवा गलत रहन-सहन से रोग हो गया है तो उसकी चिकित्सा भी हवा, पानी, आहार,

प्रकाश, तापमान, व्यायाम, विश्राम, निद्रा एव मानसिक प्रसन्नता आदि के सम्यक सन्तुलन से ही हो सकती है।

न्यूयार्क के ऐसे ही प्राकृतिक चिकित्सा प्रेमी डॉ० चास ए. टाइरेल एम डी (Dr Chas A. Tyrele, M. D) हुए है जो ऐलोपेथी मे एम डी डिग्री प्राप्त डॉक्टर थे। वहुत लम्वे समय उन्होने ऐलोपैथी की प्रैक्टिस की थी। फिर भी वाद मे जाकर उन्होने औपधियो की घोर निन्दा की है और प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति पर वैज्ञानिक ढग से अनुसन्धान करके उसको उपयोगी सिद्ध किया है।

डॉ० टाइरेल बडे ही निर्भीक और स्पष्ट वक्ता थे। उन्होने प्राकृतिक चिकित्सा पर कई पुस्तके लिखी है। उनकी पुस्तक "The Royal Road to Health or The Secret of Health Without Drugs" अत्यन्त उपयोगी पुस्तक है जो उन्होंने पहले पहल १९०७ मे लिखी थी। १९१७ तक इस पुस्तक के १८० सस्करण निकल चुके है। इससे स्पष्ट है यह पुस्तक वहुत लोकप्रिय हुई। और इस प्रकार के साहित्य के पढने से लोगो मे दवाओ के घातक परिणामों के सम्वन्ध मे जानकारी प्राप्त हुई और प्राकृतिक चिकित्सा के प्रति आकर्पण वढा।

प्राकृतिक चिकित्सा मुझे आरम्भ से ही प्रिय है। इस विपय पर लिखे गये देशी विदेशी साहित्य का मैंने गहरा अध्ययन-मनन किया है। अग्रेजी दवाओ से मुझे परहेज है। आज ९० वर्प की उम्र मे भी मैं कभी दवाओ का प्रयोग नही करता। प्राकृतिक चिकित्सा पर आधारित अपना आहार और दिनचर्या वना रखी है। इस उम्र मे स्वास्थ्य ठीक रहने का भी यही रहस्य है।

डॉ० टाइरेल की The Royal Road to Health को मैंने कई बार पढा। मुझे यह पुस्तक अधिक रूची। लेखक ने निर्भय होकर सच्चाई को अपनी पैनी लेखनी द्वारा अकित किया है। उन्होने अपने काल मे डॉक्टरी पेशेवारो को चुनौती दी थी, वे इस प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति को गलत प्रमाणित करे। उनकी ओजस्वी लेखन शैली से प्रभावित होकर उनकी इस पुस्तक के सार का हिन्दी रूपान्तर 'स्वास्थ्य का राजमार्ग' के नाम से किया गया है।

इस सन्दर्भ मे मैं यह भी स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि यह हिन्दी रूपान्तर इस पुस्तक का पक्तिश अनुवाद नही है। डॉ० टाइरेल के केन्द्रीय विचारो के साथ भारतीय विचारधारा एव आधुनिक अनुसधानो का पूरा ध्यान रखा गया है। इसी उद्देश्य से कई जगह मूल मे काफी परिवर्तन व सवर्धन किया गया है। डॉक्टरी पेशे और ऐलोपैथिक औषधियो के विपय मे इस विषय मे जगह जगह कटु आलोचना की गई है। वहाँ लेखक के विचारो को जैसे का तैसा रख दिया गया है। ऐलोपैथी ने आयुर्विज्ञान के सम्बन्ध मे बहुत बड़े अनुसधान करके मानव मात्र की सेवा की है, बडे बडे रोगो की रोक थाम मे वे सफल हुए है। उनके द्वारा औषधियो के अधिक प्रयोग के सम्बन्ध में जो धारणा है, वह गलत है। उसे ठीक करने की आवश्यकता है, जिससे समाज का कल्याण हो सके।

मुझे विश्वास है कि प्राकृतिक चिकित्सा प्रेमियो के मन मे यह पुस्तक प्राकृतिक चिकित्सा के प्रति आस्था दृढ करने मे सहायक होगी और ऐलोपैथी के समर्थको की विचारधारा मे परिवर्तन ला सकेगी। यद्यपि दिगभ्रम होकर अपने स्वास्थ्य लाभ के लिये हम जगह जगह भटक रहे है, फिर भी प्रकृति माता का हर समय हमारे लिए आह्वान है। भूले भटके भी अगर हम

उसकी शरण मे जाएँ तो निश्चय ही वह हमे अपनी अक मे स्थान देगी और हमारा खोया हुआ स्वास्थ्य पुनः लौटा देगी।

इस कार्य मे मेरी पौत्र-वधू श्रीमती आभा हिम्मतसिंहका, एम ए एव मेरे आफिस के एडवोकेट श्री बनवारीलाल शर्मा ने मेरी सहायता की है, ये सभी धन्यवाद के पात्र है।

कलकत्ता
१ जनवरी, १६८०

—प्रभुदयाल हिम्मतसिंहका

पौत्र-वधू सुशील हिम्मतसिंहका

की

पुण्य-स्मृति

मे

सस्नेह समर्पित

—प्रभुदयाल हिम्मतसिंहका
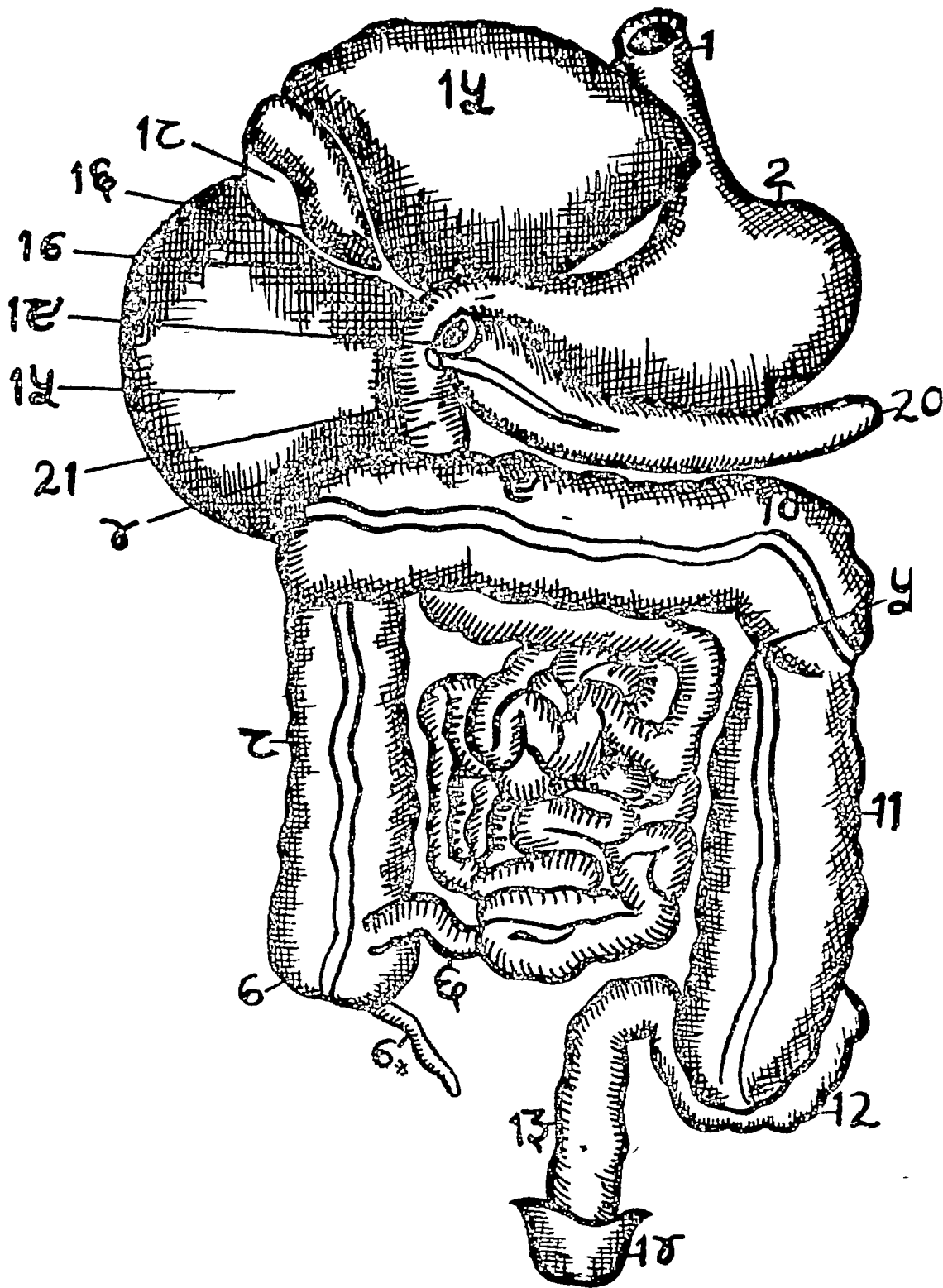
पाचन संस्थान के विभिन्न अवयव

१. ग्रास नली (Esophagus or Gullet)

२. पेट का हृद्-सिरा (Cardiac end of Stomach)

३ जठरनिर्गय-सिरा (Pyloric end of stomach)

४ ग्रहणी (Duodenum)

५, ६. क्षुद्रान्त्र के सवलन (Convolutions of Small Intestines)

७ अन्धान्त्र (Caecum)

७ * उँडुकपुच्छ (Opendicula Vermiformis)

८ आरोही बृहदान्त्र (Ascending colon)

९, १० अनुप्रस्थ बृहदान्त्र (Transverse colon)

११ अवरोही बृहदान्त्र (Descending colon)

१२ अवग्रहान्त्र वंक (Sigmoid Flexure)

१३ गुद (Anus)

१४, १५ यकृत् (Lobes of the Liver, raised and turned back)

१६ यकृत् वाहिनी (Hepatic Duct)

१७ पित्राशय वाहिनी (Cystic Duct)

१८ पित्ताशय (Gall Bladder)

१९. सामान्य पित्तवाहिनी (Common Bile Duct)

२० अग्न्याशय (Pancreas)

२१ अग्न्याशय-वाहिनी (Pancreatic Duct)

विषय-सूची

पहला भाग

दवाओं का प्रयोग हानिकारक

आधुनिक सभ्यता की अनेक गम्भीर समस्याओ का एक पहलू मानव जीवन के अस्तित्व से सम्बन्धित है, जो अत्यन्त उलझा हुआ एव निराशाजनक प्रतीत होता है। यद्यपि आधुनिक चिकित्सा-शास्त्र के ज्ञाता अन्यतम ज्ञान-वान होने का दावा करते है और प्रत्येक रोग के यथार्थ निदान का दम भरते है तथापि उनकी अपनी ही मान्यता के अनुसार असाध्य रोगो की जो सूची प्राप्त होती है, वह अपने आप मे एक गम्भीर प्रश्न-चिह्न बनकर उभरने लगती है। आधुनिक चिकित्सा-शास्त्र की ऊँची वैज्ञानिक दौड के आधार पर ही यह प्रश्न स्वभावत उठता है कि क्या वास्तव मे असाध्य रोग जैसी भी कोई स्थिति सहज सम्भव है।

स्वस्थ शरीर प्रकृति की देन है, यह एक अमूल्य वरदान है। दुर्भाग्य की बात तो यह है कि अनेक वैद्य-डाक्टर भी जीवन का सही मूल्याकन नही कर पाते और तब तक सतर्क नही होते जब तक मौत के शिकजे रोगी को जकड नही लेते। शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति हो जिसने स्वास्थ्य के इस ईश्वरीय वरदान, इस अमूल्य निधि की सरहाना न की हो। एक बहुत प्रचलित कहावत है—"पहला सुख नीरोगी काया।" यह लोकोक्ति कितनी सत्य, कितनी सारगर्भित है। स्वस्थ शरीर के बिना प्रचुर वैभव भी निरर्थक प्रतीत होता है, स्वस्थ शरीर ही जीवन को सुखमय और सरस बनाने का महत्वपूर्ण माध्यम है, स्वस्थ व्यक्ति ही जीवन के विभिन्न क्रिया-कलापो मे सम्यक् योगदान करने मे सफल हो सकता है। इसके विपरीत रूग्ण-शरीर स्वय अपने ही लिए निरर्थक और दूभर हो जाता है।

निराशा की विषम परिस्थितियो मे भी आशा की किरण विद्यमान है, ऐसा भी ज्ञान अथवा राज-मार्ग है जिसके माध्यम से

स्वास्थ्य को स्थायी बनाए रखा जा सकता है। रुग्ण व्यक्ति भी, जिसकी एक अमूल्य निधि नष्ट प्राय हो चुकी है, स्वस्थ होकर अपने उस खोए हुए स्वास्थ्य को पुन प्राप्त कर सकता है। प्रस्तुत पुस्तक के लिखने का उद्देश्य उस ज्ञान को, उस राजमार्ग को, प्रशस्त करना है। विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि रुग्ण व्यक्ति अपनी खोयी हुई निधि, अपने स्वास्थ्य को पुन प्राप्त कर सकता है बशर्ते कि वह स्वास्थ्य के प्राकृतिक नियमो का पालन करे। रुग्ण व्यक्ति के लिए भी जीवन एक बार वास्तव मे पुन सार्थक और उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

आपके सामने औषधि-प्रयोग का नया तरीका रखा जा रहा है। नए तरीको को समझने के लिए पहले औषधि-प्रयोग के पुराने तरीको पर भी समुचित प्रकाश डालना अनिवार्य हो जाता है। यह कार्य बडा जटिल है। किसी भी समस्या का सम्यक् निदान करने के लिए पुराने तरीको के गुण व दोषो का तर्क के साथ विवेचन आवश्यक हो जाता है। मानव स्वभावत ही पुरातन से जुडा रहना चाहता है, सुदीर्घकाल पर्यन्त अपने ही द्वारा प्रतिपादित मान्यताओ का खडन कभी-कभी गम्भीर विचारको को भी विचलित कर देता है, कभी-कभी कुछ लोग उपर्युक्त प्रयास को व्यक्तिगत अपमान भी समझ बैठते है। ऐसी स्थिति बडी विषम हो जाती है।

आपके सम्मुख यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया जाएगा कि रोग के उपचार मे किसी भी औषधि का प्रयोग कितना भ्रमपूर्ण एव गलत है। इस प्रयास मे उन डाक्टरो के प्रति जो उपचार हेतु विभिन्न औषधियो के प्रयोग का लिखित आदेश देते है और उन दवाओ के निर्माताओ और विक्रेताओ की पोल खोलते हुए उनके विरुद्ध भी, लिखना पड सकता है।

औषधि-प्रयोग द्वारा रोग के उपचार करने की पद्धति कितनी गलत है इसका अनुमान तब हो सकता है, जब उस पद्धति की

सम्यक् विवेचना की जाए। यह विश्वास है कि सत्य से परिचित होने पर विशेषज्ञ भी और सामान्य व्यक्ति भी औषधियो द्वारा किए गए उपचार की पद्धति के दोषो को जानकर उसका बहिष्कार करेंगे और फलत इस पद्धति का प्रचलन समाप्त हो जाएगा।

आधुनिक वैज्ञानिक चिकित्सा-प्रणाली के अनुसार किसी भी रोग का उपचार अवश्य ही शीघ्रतम हो जाता है, परन्तु अनजाने ही कितने नए रोगो का जन्म कब हो जाता है यह अज्ञात ही रह जाता है। यह एक दु'खद तथ्य है कि आधुनिक चिकित्सा प्रणाली द्वारा डाक्टर एक रोग का उपचार करते हुए अन्य अज्ञात रोगो की एक ऐसी श्रृ खला अनजाने मे ही बनाते जाते है कि कालान्तर मे रोगी स्वय मूर्तिमान रोग बनकर रह जाता है। साथ ही औषधियो का दास बन जाता है। एक दिन ऐसा भी आता है जब कि रोगी औषधियो को नही खाता अपितु औषधियाँ ही रोगी को खाने लगती है। आधुनिक चिकित्सा-प्रणाली के प्रसिद्ध एव प्रमुख विशेषज्ञ डाक्टरो की उक्तियॉ ही इस उपर्युक्त कथन का प्रमाण है जिन पर आगे आने वाले अध्यायो मे प्रकाश डालने का प्रयत्न किया गया है।

ऐसे कुछ जाने-माने अनुभवी डाक्टरो ने जिन्होने रोगियो की सेवा मे ही अपना जीवन अर्पित कर दिया, ऐसे मनीषियो ने भी अपने अनुभव से यही सार निकाला है कि औषधि-प्रयोग से रोगी स्वस्थ तो होता ही नही अपितु उनकी प्रतिक्रिया-स्वरूप उसका स्वास्थ्य और अधिक बिगड जाता है, क्योकि औषधियो का प्रयोग प्राकृतिक प्रक्रिया मे बाधक होने लगता है। इस प्रकार यही सिद्ध होता है कि गत तीन हजार वर्षों मे हजारो प्रकार की औषधियॉ आविष्कृत हुई है फिर भी अनुभवी लोगो का यही कहना है कि रोग का जन्म रहस्यमय है। शरीर पर औषधियो की क्या प्रतिक्रिया होती है यह बात निश्चित रूप से तो नही कही जा सकती। परिणामत दवा और रोग जिनके उपचार के लिए दवा दी जाती है इन दोनो के विषय मे आज भी स्थिति अनिश्चित सी ही है।

औषधियो का प्रभाव शरीर पर हानिकारक है। ऐसी स्थिति मे औपधियाँ रोग को ठीक करने की अपेक्षा एक नए रोग को जन्म देती है। क्या जहर, जहर को ख़तम कर सकता है ? क्या हमारा शरीर रोग और औपधि दोनों का दोहरा भार अपने ऊपर लेने मे समर्थ है ?

इसमे कोई सन्देह नही कि शरीर की ऐसी स्थिति होने के जिम्मेवार हम लोग ही है। किसी अनुभवी सज्जन का कहना है कि डाक्टरी-पेशा समाज के प्रति अन्याय है। इस पेशे के दुष्परिणामो का अन्दाजा हम इसके द्वारा उत्पन्न किए रोगो द्वारा ही लगा सकते है। वह डाक्टर जो कि अपने धनवान रोगी को महीनो शैय्या का सेवन करा सकता है, उसे पैसा और इज्जत दोनो ही वहुतायत मे मिलते है, जवकि दूसरा डाक्टर उसी रोगी को सप्ताह भर मे ठीक कर दे तो उसे न तो यश ही मिलेगा और न धन ही। यदि डाक्टर साधारण ज्वर की चिकित्सा प्रकृति पर छोड दे तो वह ज्वर दो या तीन दिन मे अपने आप ही ठीक हो जाएगा। पर डाक्टर कभी ऐसा नही करेगा। उसका यश और उसकी जेब तभी गरम होगी जवकि रोगी की बीमारी अधिक दिनो तक चले। वह रोगी को तरह-तरह की औपधियाँ देकर उसके शरीर मे नयी बीमारियो को जन्म देता है, और रोगी की दुर्दशा महीनो तक चलती रहती है।

वहुत से लोगो को आपने यह कहते सुना होगा कि "मेरा डाक्टर बहुत ही अच्छा आदमी है, अपने विषय का ज्ञाता है और मुझे उस पर पूरा-पूरा विश्वास है।" लेकिन क्या आपको मालूम है कि उसका तरीका गलत नही है ? आपको उस पर विश्वास है या उसके तरीको पर। अगर आपको डाक्टर के तरीको पर विश्वास है तो आप दया के पात्र है और अगर आपको उस डाक्टर पर विश्वास है तब तो आपके लिए यही उचित होगा कि न तो आप उसकी नेक सलाह ही ले, और न उसकी खराव औषधि।

हम सबको चीन के लोगो से सबक सीखना चाहिए। हर चीनी अपने डाक्टर को पैसा तब तक ही देता है जब तक वह नीरोग रहता है। जरा भी अस्वस्थ होने पर उसे पैसा देना बन्द कर देता है। डाक्टर का अपने रोगी के स्वास्थ्य से बडा घनिष्ट सम्बन्ध होता है। आदमी जब बीमार होता है तो वह कमाने लायक नही रहता। अगर वह स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमो का ठीक से पालन करे तो उसे कभी भयकर बीमारी जैसी चीज हो ही नही सकती। डाक्टर का काम है कि वह व्यक्ति को रोगी होने से बचाए। स्वास्थ्य सबधी नियमो का पालन करना सिखाए।

डा. ओलिवीय वूडेल होम्स (Dr Olivea Woodell Holmes) का कहना था कि "अगर सारी दवाओ को उठाकर समुद्र मे फेक दी जाए तो सम्पूर्ण मानव जाति का बडा कल्याण होगा। लेकिन सम्भावना तो इस बात की हो जाएगी कि समुद्र की मछलियों पर भी इसका बहुत ही बुरा प्रभाव पडगा।"

स्वास्थ्य को बनाए रखने का सबसे अच्छा उपाय यही है कि औषधियो का सेवन ही न किया जाए जो अपने आप मे जहर होती हैं। यह तरीका दवाओ को छोडकर हर अच्छी वस्तु पर आधारित है। प्रकृति के नियमो के अनुकूल कोई भी चिकित्सा-प्रणाली नि:सकोच स्वीकार की जा सकती है ऐसे चिकित्सक उन लोगो से अधिक प्रगतिशील माने जा सकते है जो डाक्टरी पेशे मे हैं और जो रोग के निदान के लिए किसी भी नई पद्धति को मानने को कतई तैयार नही है। होना तो यह चाहिए कि जिन उपचारो से मानवता की भलाई हो उन तरीको को अपनाया जाए, लेकिन होता उल्टा है। उन आविष्कारो का स्वागत होना तो दूर, लोग उनके बारे मे सुनना भी पसन्द नही करते। ये डाक्टर, किसी भी नए डाक्टर के नए आविष्कार को प्रयोग में लाना तो दूर, सुनना भी अपना अपमान समझते है। डाक्टरी पेशे मे कुछ लोग ऐसे भी हैं जो यह मानते हैं कि मस्तिष्क केवल डाक्टरो की ही धरोहर है।

फिलाडेलफिया के जिलफरसन मेडिकल कालेज के डा. ए. ओ. लीयरा ने कहा है कि रोग के उपचार के बारे मे उन्ही लोगों का योगदान सबसे अधिक है जिनके पास कोई डाक्टरी डिग्री नही है।

प्रोफेसर वाटर हाऊस के अनुसार, जिन लोगो को डाक्टरी ज्ञान जरा भी नही है, वे ही लोग रोग के उपचार मे मदद करते है। डाक्टर लकीर के फकीर होते है, वे किताबी कीडे, रोगो और उनकी औषधियो के नाम बडे-बडे ग्रीक और लैटिन भाषा के शब्दो मे देते रहते है, जबकि आम लोग अपने वर्षो के अनुभव के आधार पर रोगी का ऐसा प्राकृतिक उपचार करते है जिससे रोग सम्पूर्ण ही नष्ट हो जाता है।

डाक्टरी पेशे मे भी बहुत ऐसे अनुभवी और नेक लोग है, जिन्होने अपना सब कुछ मानवता की सेवा के लिए समर्पित कर दिया है। उनकी अच्छाई व नि स्वार्थता भी अन्त मे निरर्थक सिद्ध होती है क्योकि उनकी उपचार-प्रणाली दोषपूर्ण है। गलत प्रणाली का प्रयोग होने पर परिणाम कभी भी सही नही हो सकता।

यहाँ किसी भी डाक्टर से व्यक्तिगत विरोध की बात नही है फिर भी उनके उपचार के तरीको से विरोध है और उनके द्वारा बनाए गए सिद्धान्तो से विरोध है। वे रोग का सही कारण जाने बिना ही उपचार करने मे जुट जाते है। बडी ही सीधी सी बात है कि कारण जाने बिना निवारण असभव ही है।

प्रत्येक डाक्टर यही मानकर चलता है कि रोगी को नीरोग करने की पद्धति एक ही नियम पर आधारित है और वह नियम है रोग मुक्ति का सामान्य नियम।

रोग मुक्ति का नियम :

डाक्टर, वैद्य, हकीम, प्राकृतिक चिकित्सक सभी "ला आफ क्योर" (Law of cure) के सिद्धान्त को ही मानकर चलते है,

और इसी नियम मे विश्वास रखते है। किन्तु प्रत्येक की परिभापा एक दूसरे की परिभापा से भिन्न है। डाक्टरो की परिभापा अपनी अलग है। उनकी परिभाषा मे इसे Contraria Contrarıs Curantur बोलते है तो होमियोपैथ इसे Sımılıa Sımılibus Curantur के नाम से जानते है, और Eclectics इसे Sanatıve Medıcatıon कहते है। हर एक सिद्धान्त एक दूसरे के विपरीत है, जैसे कि दक्षिणी ध्रुव और उत्तरी ध्रुव। एक सामान्य व्यक्ति बीमार पडने पर जब इनके पास जाता है, उसकी दशा की कल्पना आप स्वय कर सकते है। उसका रोग दूर होने की जगह अन्य और रोगो के साथ शरीर मे विस्तार पूर्वक फैलने लगता है, वह घबरा कर कभी डाक्टर, कभी होमियोपैथ, कभी हकीम, कभी वैद्य के पास जाता है, सब उसे एक दूसरे के विपरीत उपचार करने की राय देते है। उसका मस्तिष्क जवाब दे देता है और यह निर्णय नही कर पाता कि कौन सा उपचार उसे नीरोग करने मे सहायक होगा।

ऐसे लोगो को यही राय दी जा सकती है कि इनमे से कोई भी उपचार ठीक नही है। रोग-मुक्ति का नियम (Law of cure) जैसी कोई भी स्थिति यथार्थ नही है। यह सिद्धान्त ही एकदम काल्पनिक है। नीरोग रहने की एक ही शर्त है वह है प्रकृति के प्रति आज्ञाकारिता। प्रकृति के बनाए नियमो का उलघन करने पर प्रकृति दड देती है। प्रकृति उस दड को कम करने के लिए औपधि नही भेजती।

डाक्टर रोग का सही कारण जाने बिना ही उपचार करने लगते है। यह तरीका सर्वथा गलत है। वे रोग के लक्षणो को अपनी तेज व जहरीली दवाओ द्वारा दबाने का प्रयत्न करते है। अगर इन्ही रोग के लक्षणो का सम्यक् निदान कर उपचार किया जाए तो ये ही लक्षण रोगी को नीरोग करने मे सहायक बनेगे।

डाक्टर जीवित और मृत पदार्थो का सम्बन्ध समझ नही

पाते । युनाइटेड स्टेट्स डिसपेन्सरी के अनुसार दवा शरीर पर बहुत ही बुरा प्रभाव डालती है । अगर रोग के बारे मे गलत जानकारी हो तो उपचार के लिए बनाए गए सभी सिद्धान्त स्वभावत ही गलत सिद्ध होगे । औषधि ही जीवित अगो पर अपना प्रभाव नही डालती बल्कि जीवित अगो का प्रभाव दवा पर पडता है । ये जीवित अग औषधि को अपनी शारीरिक क्रिया मे बाधक समझते है और अपनी प्रणाली से उसे बाहर निकालने का पूरा प्रयत्न करते है । अगर यह बात सही नही होती और औषधियाँ ही जीवित अगो पर अपना असर करती तो उन औष-धियो का असर मौत के बाद भी होता किन्तु ऐसा नही होता । प्रकृति शरीर के अन्दर बाहरी किसी भी वस्तु का आना पसन्द नही करती । किसी भी बाहरी वस्तु के आने पर उसे बाहर निकालने के लिए प्रकृति अपनी पूरी शक्ति लगा देती है ।

ऐसे बेकार के पदार्थ, जिनका शरीर के लिए कोई भी उपयोग नही है, उदाहरणत शरीर के नष्ट हुए तन्तु और पाचन करने के बाद बचा नीरस पदार्थ आदि, को शरीर का हर चेतन अग निकालने मे जुट जाता है । सारे शरीर की क्रिया स्वयमेव बढ जाती है । शरीर के खराब हुए हिस्सो की मरम्मत हेतु उन हिस्सो मे रक्त का सचालन तीव्र गति से हो जाता है । इस प्रकार शरीर का तापमान बढ जाता है और उस स्थिति को ज्वर के नाम से जाना जाता है । किसी भी रोग का आरम्भ ज्वर द्वारा ही होता है जिससे यह पूर्णत सिद्ध होता है कि बीमारी एक ऐसी क्रिया है जिसका काम खराब हुए अगो को ठीक करना है अथवा दूषित रक्त को शुद्ध करना है ।

इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि औषधियो के लेने से शरीर मे इकट्ठे बेकार पदार्थों मे और भी वृद्धि हो जाती है, और रोगी का शरीर अधिक समय तक के लिए रोग-ग्रस्त हो जाता है । फलत औषधि लेना ही शरीर की सहज क्रिया मे बाधा पहुँचाना है ।

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि रोग मुक्ति के नियम (Law of cure) जैसी कोई चीज नही है सिर्फ है तो रोग मुक्ति की शर्त 'कन्डीशन आफ क्योर' (Condition of cure) और वह स्थिति है प्रकृति की आज्ञा का पालन करना। जिसका मतलब है उपचार का ऐसा तरीका जो कि प्रकृति के नियमो का पालन करने मे सहायक हो। जैसे-जैसे डाक्टर अपने अनुभवो मे सिद्ध-हस्त होता जाता है वैसे-वैसे वह प्रकृति पर अधिक आस्था रखने लगता है, क्योकि रोग का सही उपचार तो प्रकृति द्वारा ही होता है, इसलिए उन्ही तरीको को प्रयोग मे लाना चाहिए जो कि प्रकृति के नियमो मे सहायता दे और बाकी सब कुछ प्रकृति पर छोड दिया जाए, क्योकि प्रकृति अपने नियमो का पालन करने मे कभी भी गलती नही करती। यह बात दावे के साथ कही जा सकती है कि यदि औषधियाँ देकर प्रकृति के नियमो मे बाधाएँ न पहुँचायी जाएँ तो ९० प्रतिशत बीमारियो का उपचार प्रकृति पर छोड देने से स्वयमेव ही हो सकता है।

—∞—

दूसरा भाग

रोग का सच्चा कारण

पिछले अध्याय को पढकर सहज ही यह प्रश्न उठता है कि अगर औषधि-विज्ञान वीमार के उपचार के सम्वन्ध मे गलत राय देता है तो हमे रोगो का उपचार किस प्रकार करना चाहिए, औषधि के स्थान पर रोग के उपचार के लिए कौन सा साधन उपयुक्त है ?

इस जिज्ञासापूर्ण किन्तु स्वाभाविक प्रश्न का सही उत्तर है उपचार का तरीका वर्षो के परीक्षण का परिणाम है। यह विश्वास पूर्वक कहा जा सकता है कि उपचार का यह नवीन तरीका, पाठको को निश्चय ही मान्य होगा क्योकि इस उपचार की नीव प्राकृतिक नियमो पर ही आधारित है।

उपचार के नए तरीको को जानने के पहले आपको रोगो के वारे मे एक जरूरी बात को जान लेना उपयोगी होगा, जिससे आपको इस सिद्धान्त को समझने मे आसानी होगी।

हर रोग का कारण केवल एक है

प्रत्येक रोग का केवल एक ही कारण है। अधिकतर लोग प्रत्येक रोग का भिन्न और विशिष्ट कारण समझते है। ऐसे लोगो से यह कहना कि 'प्रत्येक रोग का केवल एक ही कारण होता है' बडा ही अटपटा लगेगा। डाक्टर या हकीम भी साधारणत इस विचार से सहमत नही होगे। किन्तु सत्य तो यही है कि प्रत्येक रोग का कारण एक ही होता है और उसका ही प्रकाशन नाना प्रकार से होता है। वह कारण है शरीर के विभिन्न सस्थानो मे निरर्थक पदार्थों का, जो भोजन मे से उसके पोषक तत्वो को निकालने के बाद वच रहते हैं, इकट्ठा रह जाना है। ये विजातीय पदार्थ कई अर्थों मे शरीर पर अपना अधिकार जमाए रखते हैं।

ये पदार्थ गैस के रूप मे या तरल व ठोस पदार्थो के रूप मे शरीर के विभिन्न अगो मे एकत्रित हो जाते हैं। इसी कारण शरीर की स्वाभाविक क्रिया अव्यवस्थित हो जाती है और शरीर मे रोग का जन्म होता है। वर्तमान युग मे शरीर-विज्ञान और स्वास्थ्य-विज्ञान की जानकारी अति आवश्यक है। यह जानकारी इसलिए और भी आवश्यक हो जाती है कि हम लोगो मे से अधिकतर लोग इस बात को नही जानते कि एक बार स्वास्थ्य खोकर पुन. आरोग्य लाभ किस प्रकार किया जा सकता है। स्वास्थ्य के नियमो की सही जानकारी प्राप्त करके निश्चित रूप से पुन स्वास्थ्य की चेतना को अनुभव किया जा सकता है।

शरीर को स्वस्थ रखना मनुष्य का धर्म है। स्वस्थ व्यक्ति ही जीवन के विभिन्न सुखो को भोग सकता है। उसके लिए जीवन कितना सुन्दर होता है। जबकि रोगी व्यक्ति जीवन की कुरूपता पर रोता बिलखता अपने दुर्भाग्य की दुहाई देता हुआ असमय ही इस ससार से चल बसता है।

शरीर मे पोषक तत्त्वो के बनने से शरीर के निर्माण का कार्य होता है एव उसके अन्दर निरर्थक एव विजातीय पदार्थों के एकत्रित हो जाने से शरीर नष्ट होने लगता है। यह कार्य बिना किसी रुकावट के बराबर होता रहता है। निरर्थक पदार्थो का एकत्रित न होना अच्छे स्वास्थ्य का कारण है। जितने भी ऐसे पदार्थ कम मात्रा मे एकत्रित होगे स्वास्थ्य उतना ही अच्छा होगा।

ये विजातीय पदार्थ शरीर के उत्तको (Tissues) को नष्ट करते हैं। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि इस विजातीय पदार्थ को शरीर मे से शीघ्र ही हटाया जाय। प्रकृति ने अनावश्यक पदार्थों को शरीर से निकालने के अनेक रास्ते दिए है। प्रमुख रास्ते है फेफडे, त्वचा और आते। इन तीनो मे सबसे मुख्य है आते, क्योकि भोजन को ठीक से पचा कर उसमे से पोषक

तत्व को ग्रहण कर, निरर्थक व नीरस शेप को वाहर फेंक देने की महत्वपूर्ण क्रिया आतो के ही द्वारा होती है। यदि आते ठीक तरह से काम न करे तो शरीर की प्रत्येक आवश्यक क्रिया मे वाधा उत्पन्न होगी और साथ ही अनावश्यक अनपचा अर्धतरल पदार्थ या तरल पदार्थ सीधे रक्त सचालन के साथ मिल जाता है। इस प्रकार वृक्क (किडनी)पर दोहरा भार पड जाता है, उसे इन अनावश्यक पदार्थों को भी निकालने का काम करना पडता है जिसके कारण किडनी नष्ट हो जाने से शरीर मे विप फैल जाता है और व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है।

घडी मे वालू का एक कण पड जाने से घडी की चाल को वन्द न भी करे तो उसे धीमा अवश्य कर देता है। नियमित रूप से ठीक की हुई भौतिक तुला को, जो कि कण का हजारवा भाग भी तौल सकती है, उसे वडी ही सावधानी से शीशे मे सुरक्षित रखा जाता है। क्योकि धूल का एक छोटा सा कण भी उसके सतुलन को विगाड देता है। मानव द्वारा परिश्रम से वनाई हुई किसी भी वस्तु की तुलना हम शरीर जैसे यत्र से नही कर सकते। स्वास्थ्य लाभ के लिए शरीर मे से वेकार के सचित पदार्थ को शीघ्रातिशीघ्र ही हटा देना अति आवश्यक है।

अब हम देखेगे कि किस प्रकार ये विजातीय पदार्थ एकत्रित होकर हमारी शारीरिक प्रणाली को अव्यवस्थित कर देती हैं। उनका हमारी शारीरिक प्रणाली पर तीन प्रकार का असर होता है। यान्त्रिक (mechanical), गैसीय (gaseous) ओर शौषक (absorptive) शोपक प्रभाव ही सवसे अधिक घातक है। हम पहले यान्त्रिक अग को ही समझेगे। प्रकृति ने वडे ही सुन्दर ढग से उदर गुहा मे प्रत्येक यत्रो के लिए जितनी आवश्यक है उतनी ही जगह बनाई है। किसी भी यत्र के आकार मे वृद्धि सारी प्रणाली को अव्यवस्थित कर देती है। भोजन पेट मे अच्छी तरह दोहन हो कर गुथे हुए रूप मे पेट को छोडता है, वहाँ से वह

पक्वाशय (duodemun) मे जाता है। वहाँ काफी मात्रा मे यकृत (लीवर) और अग्नाशय (pancreas) से निकला पाचन के लिए रस उस घुले हुए भोजन मे मिलता है, वहाँ से वह मथा हुआ और विभिन्न रसो से मिला भोजन छोटी आतो में पहुँचता है। वहाँ फिर अच्छी तरह से मथा जाता है। इस तरह उसका रूप छोटा हो जाता है और कम भी हो जाता है। छोटी आतो की दीवालो पर वालो के जैसे अनेक छोटे-छोटे महीन अकुर लटके रहते हैं जिन्हे रसाकुर (villi) कहते है। भोजन का जो भी पदार्थ पाचक रसो के मिलने से घुलनशील हो जाता है वह छोटी आंतो की दीवार पर लगे रसाकुरों द्वारा खीच लिया जाता है। यदि पाचन क्रिया ठीक प्रकार से हो तो वडी आत मे पहुँचने से पूर्व भोजन के समस्त पाचन योग्य पदार्थ, २२ फुट लम्वी छोटी आंत की यात्रा मे शोषित हो जाते है। वचा हुआ बेकार का भाग वडी आत मे पहुँचता है। यदि पाचन क्रिया ठीक से नही होती है तो वडी आत की दीवालो पर यह मल चिपक जाता है, यह एकत्रित होने वाला पदार्थ दिन पर दिन वढता चला जाता है जिससे वडी आंत अपने स्वाभाविक आकार से काफी वडी हो जाती है। ऐसे भी उदाहरण देखे गए है कि आतो के आकार मे वृद्धि कभी-कभी गर्भ अथवा यकृत (लीवर) की वृद्धि का भ्रम पैदा कर देती है। वहुत दु:ख की वात तो यह है कि आज के सभ्य जगत मे ९० प्रतिशत मनुष्यो की वडी आतो की दशा यही है, कुछ व्यक्तियो की आतो की हालत तो इससे भी वुरी अवस्था मे पाई जाती है। लदन मे एक सर्जन ने एक रोगी की वडी आतो को निकाला जिसकी परिधि २० ईच की थी और उसमे तीन गैलन वेकार का पदार्थ भरा हुआ था।

यह वात हमारी कल्पना से भी परे है कि उदर-गुहा मे वडी आतो का दुगना या तिगुना स्थान घेरने से कितनी खरावी हो सकती है, दूसरे अन्य अगो को अपना कार्य करने मे कितनी अधिक वाधा पहुँच सकती है।

शारीरिक प्रणाली पर यान्त्रिक दवाव के कारण बुरा प्रभाव पड़ता है ऐसी बात नही है। इस तरह की आत के आकार की वृद्धि छोटी आत के कार्य मे भी बाधा पहुँचाती है। परिणाम स्वरूप छोटी आतो मे भी मल, जिसे वडी आतो मे पहुँच जाना चाहिए था, वही रह जाता है और सडने लगता है। इस प्रकार तन्त्रिका नलिकाओ (nerve terminals) पर दवाव पड़ने के कारण उनमे विकार पैदा होता है।

दूसरे अग है, गैसीय प्रभाव वाले भोजन-नलिका मे गैस के कारण कौन से रोग कैसे पैदा हो जाते है, उसका पूरा ज्ञान अभी तक नही हो पाया है। सबसे पहला प्रत्यक्ष परिणाम जो दिखाई देता है वह है पेट का फूलना। इस तकलीफ का सम्बन्ध भोजन से है। लोग इस बात को समझते हुए भी इस पर ध्यान नही देते है। पाचन क्रिया के ठीक से न होने से गैस बनने लगती है। आतो मे अपचे भोजन के रह जाने से गैस बनने लगती है जो मल को सड़ाने मे विशेष सहायक सिद्ध होती है।

ईश्वर ने बडी आतो की दीवालो को फूलने से बचाने के लिए सल्फरेटेड हाईड्रोजन (sulphuretted hydrogen) और कार्बोरेटेड हाईड्रोजन (carboretted hydrogen) पर्याप्त मात्रा मे दिया है। आमाशय और छोटी आतो मे आक्सीजन, हाईड्रोजन, नाईट्रोजन और कार्बोनिक एसिड गैसे पाई जाती है। इन गैसो के आवश्यकता से अधिक होने से शरीर की स्वाभाविक क्रियाओ मे बाधा पहुँचती है। कार्बोनिक ऐसिड गैस या हाईड्रोजन गैस का किसी भी मासपेशी पर लगातार दवाव पडने से पक्षाघात हो जाता है। हर्निया और मूत्राशय का अपनी जगह से हट जाने का एक मात्र कारण भी यही है। गैसो का प्रभाव यह भी होता है कि अगल बगल के तन्तुओ (tissues) मे ये गैसे घुस जाती है। इन गैसो के ननाव्न के द्वारा नाड़ियो की दुर्बलता बढ़ती है। आजकल अधिकतर लोग इस रोग से ग्रसित पाए जाते है।

लेकिन सबसे गम्भीर परिणाम बेकार के तरल पदार्थ (liquid waste) के रक्त में मिलने से होता है। रक्त ही जीवन है। रक्त द्वारा ही नए ऊतकों (tissues) का निर्माण होता है। स्वच्छ अंगो का निर्माण दूषित रक्त से नही हो सकता।

बडी आतो मे बचा हुआ बेकार तरल पदार्थ का शरीर के लिए कोई भी उपयोग नही है और इस तरह का निरर्थक और त्याज्य पदार्थ शरीर मे रहकर जहर के समान हो जाता है। ये पदार्थ जहरीले कीटाणुओ को जन्म देते है। जुलाब (cathartus) की क्रिया बडी आतो के खाली हिस्सो को गन्दे पदार्थ से भर देती हैं और टोमेन्स लुकोमैनस (ptomaines and laucomances) को सोखने मे मदद करती हैं। अब यह बात सिद्ध हो चुकी है कि इस गन्दे पदार्थ का तीन चौथाई हिस्सा शरीर मे जहरीले कीटाणुओं को पहुँचा देता है।

डा० मुरचीसन के अनुसार मल के तरल भाग और रक्त का बराबर सचालन होता रहता है, इस बात की जानकारी बहुत कम लोगो को है। डा० पारकर का कहना है कि रक्त मे से विभिन्न मात्रा मे लगातार एक तरह का तरल पदार्थ निकलता रहता है जो भोजन की प्रणाली (alimentary canal) मे जाता है। उन्होने इस बात की भी पुष्टि की है कि रक्त का हर एक कण चौबीस घटे मे भोजन की नली मे से होकर कई बार गुजरता है।

प्रो आई आई मेटचीनकोफ ने अपने एक भाषण मे बताया कि बडी आत के सूक्ष्म कीटाणु ही हानिकारक होते है। ये कीटाणु और उनसे निकले हुए पदार्थ (ptomaines) और अल्कालोइड (alkaloids) खून मे मिलकर उसे दूषित कर देते है और जहर प्रसार इन कीटाणुओ के द्वारा ही होते है। इस प्रकार हम देखते है कि विभिन्न प्रकार के जहरीले कीटाणु बडी आत मे जन्म लेते है और वहाँ से रक्त सचालन के साथ ही साथ घूमते हुए विभिन्न अंगो मे पहुँच जाते है।

हमारे शरीर मे अनेक नलिया है जिनके द्वारा निरन्तर खून का सचार होता रहता है जिन्हे धमनियो और शिराओ (arteries and veins) के नाम से जाना जाता है। रुधिर-सचरण की प्रणाली को बराबर गतिमान रखने का मुख्य कार्य हृदय करता है। धमनियाँ हृदय से शरीर के विभिन्न अगो मे शुद्ध रख ले जाती है जो जीवनी-शक्ति देने वाला होता है जब कि शिरायें शरीर के अशुद्ध रक्त को शोधने के लिए हृदय और फेफडे में ले जाती है। इस रक्त सचरण के साथ ही रोग के कीटाणुओ का भी सचरण सहज सम्भव हो जाता है।

रक्त को अगर हम यत्रो के द्वारा ध्यान से देख तो हमे असख्य छोटे-छोटे कण तैरते दिखाई देगे। इन को रुधिर-कणिका (blood corpuscles) कहते हैं। इन्ही कणो के कारण रक्त का रग लाल दिखाई देता है। रक्त मे थोडी मात्रा मे श्वेत कण भी होते है जो फागोसाईटीज (phagocytes) कहलाते हैं। इन श्वेत कणो का कार्य रक्त मे प्रविष्ट रोग के छोटे से छोटे कीटाणुओ को नष्ट करना होता है।

जुकाम लगने पर त्वचा के सभी छिद्र वन्द हो जाते हैं और साथ ही साथ वडी आत भी सिकुड जाती है जिससे शरीर से गन्दगी निकलने के दो महत्वपूर्ण रास्ते वन्द हो जाते है। इस तरह बीमारी के कीटाणु शरीर से वाहर नही निकल पाते और गन्दगी मे पनपने लगते हैं। ये ही जहरीले कीटाणु अन्य स्थान न मिलने के कारण फेफडे और वृक्क (किडनी) मे जा वैठते हैं। इसी अवस्था को बुखार कहते है। वीमारी के इन कीटाणुओ को नष्ट करने का काम भी रक्त मे स्थित श्वेत कणो के कन्धो पर आ पडता है। इस तरह श्वेत कणो का काम और भी वढ जाता है।

मान लीजिए कि वडी आत मे टी वी के कीटाणुओ ने जन्म ले लिया है और वे कीटाणु रक्त मे मिल गए है और उस समय श्वेत कण बुखार के कीटाणुओ को मारने मे व्यस्त है इसलिए श्वेत

कणों की बिना किसी रोकथाम के अन्य रोग के कीटाणु जीवित रहकर फेफडो मे बैठ जाते है। वहाँ पहुँचने पर ये कीटाणु सक्रामक रूप से रोग को वढाने लगते है। परिणाम स्वरूप रोगी की खाँसी भयकर रूप से वढ जाती है और डाक्टर इस अवस्था के वीमार को यक्ष्मा या टी वी का रोगी घोषित कर देते हैं। मोतीझरा या मियादी की शुरुआत भी बडी आतो मे ही होती है। इस प्रकार शरीर मे जीवन-रक्षक और जीवन-भक्षक कीटाणुओ मे भयकर युद्ध चलता रहता है।

वडे दु.ख की वात है कि हजारो लोगो की मृत्यु समय से पहले ही मिरगी, पक्षाघात, जलधर, क्षय आदि रोगो से हो जाती है। क्या थोडी सी दवा रक्त को शुद्ध कर सकती है ? थोडी देर के लिए अगर हम यह सही मान भी ले कि दवाएँ रक्त को शुद्ध कर सकती हैं, तो भी ऐसा अमाशय जो कि दुर्गन्ध और गन्दगी से भरा हुआ है, जिसमे कि वडी आत के आकार मे वृद्धि होने के कारण अनगिनत कीटाणुओ ने जन्म ले लिया है और रक्त सचार मे लगातार पहुँच रहे हैं उन दवाओं के बावजूद भी क्या रक्त को शुद्ध होने देंगे ?

यह प्रश्न जरूर पूछा जा सकता है कि पहले इस बात की खोज क्यो नही की गई ? सर्व प्रथम चीरफाड (ओपरेशन) मे वडी आत पर कम ध्यान दिया गया लेकिन पिछले कुछ वर्षो से अपेन्डीसाइटिस (appendicitis) ने लोगो को इस ओर सोचने को वाध्य किया। वडी आत की महत्ता इसलिए नही सोची गई क्योकि लोगो का ध्यान परिसचरण और तत्रिका तन्त्र (circulatory and nervous systems) की ओर अधिक था। यहाँ तक कि मरने के पश्चात् की गई चीरफाड (पोस्टमार्टम) मे भी वडी आत पर बिना ध्यान दिए उसे काट कर हटा दिया जाता था। बड़ी आत मे मल हमेशा भरा हुआ मिलता था। किसी ने इस बात पर ध्यान नही दिया कि आत मे मल का भरा रहना

स्वाभाविक है या नही। इस प्रकार लोग इस महत्वपूर्ण अंग के बारे मे बहुत कम जानते थे।

आश्चर्य तो इस बात पर होता है कि प्रतिवर्ष हजारो नए डाक्टर बनते है किन्तु एक ने भी इस प्रश्न के बारे मे अपनी उत्सुकता नही दिखाई। यह गन्दगी से भरा थैला न जाने कितनी दुर्गन्धयुक्त वस्तुओ से भरा हुआ होता है। परन्तु एक क्षण के लिए भी वह हमारे शरीर से अलग नही होता। इस गन्दगी से भरे थैले को हर समय साथ लिए घूमना क्या हानिकारक नही है ?

आतो की मासपेशियाँ गोलाकार और लम्बी है। बडी आत के लम्बे रेशे आत की लम्बाई से छोटे है। इनकी लम्बाई कम होने के कारण (केविटी) खोखला स्थान बन जाता है। और इन्ही (केविटी) खोखली जगहो मे बेकार का गन्दा पदार्थ एकत्रित होता रहता है। यह गन्दा पदार्थ इस प्रकार छिपा रहता है कि अधिकतर चिकित्सको की नजर इस पर नही पडती। इन रिक्त स्थानो मे दिन प्रतिदिन अधिक मल भरता जाता है। इसी गन्दगी के एकत्रित होने के कारण जुकाम से लेकर अन्य बडी बीमारियो के लक्षण दिखाई देने लगते हैं। इस प्रकार कभी-कभी गम्भीर परिस्थितियो का सामना कर जाना पडता है। केवल रिक्त स्थानो के भरे रहने तक भी बडी आत मे किसी प्रकार की भी गडबडी नही होती। साधारणत· बडी आत के सिग्मायड फ्लेक्शर (sigmoid flexure) और काइक्यूम (caecum) ही आकार मे बढते है लेकिन ये बेकार की गन्दगी बडी आत के किसी भी हिस्से मे इकट्ठी हो सकती है। पुरानी एकत्रित गन्दगी उर्ध्वगामी बडी आत (ascending colon) मे पाई जाती है। अधोमुखी बडी आत (decending) मे नही। इसलिए उर्ध्वमुखी बडी आत की महत्ता अधिक है। आशिक रूप से इसका कारण यह है कि उर्ध्वमुखी बडी आत के पदार्थो को

गुरुत्वाकर्षण शक्ति के विरुद्ध अपना कार्य करना पडता है और अधिक श्रम से वडी आत की मासपेशियाँ निष्क्रिय हो जाती है, इस कारण वहाँ अर्ध पक्षाघात की अवस्था हो जाती है। वडी आंत मे एकत्रित पदार्थ की अधिकता होने पर उसके आकार मे वृद्धि होती है इस तरह वही आत अपने स्थान से हट जाती है। यदि यह वात पार्श्वमुखी वडी आत (transverse colon) में होती है यानि कि वहाँ गन्दगी के एकत्रित होने के कारण वडी आत की वृद्धि होती है तो वह हिस्सा वस्ति प्रदेश (pelves) तक फैल जाता है। यह पदार्थ मात्रा मे इतना अधिक हो सकता है कि अमाशय के किसी भी अग पर दवाव डालकर उस अग के कार्य मे वाधा उत्पन्न कर देता है। उदाहरण स्वरूप अगर हमारे यकृत पर दवाव पडता है तो पित्त-रस के वनने मे वाधा उत्पन्न होगी। मूत्राशय पर दवाव पडने पर उसके कार्य मे बाधा उत्पन्न होगी। निश्चय ही इतनी अधिक मात्रा मे गन्दगी का एकत्रित होना असामान्य स्थिति ही है। इतनी वढी हुई स्थिति को कोई भी चिकित्सक दूसरी स्थिति मे सोच सकता है। इसलिए आपका ध्यान इस स्थिति की ओर आकर्षित होना आवश्यक है जब कि गन्दे-पदार्थों के एकत्रित होने कि क्रिया का आरम्भ होता है, जिसके शिकार हम मे से अधिकाश होते हैं। ऐसे लोगो से अगर यह पूछा जाए कि आपका स्वास्थ्य कैसा है तो वे लोग हमे यही वताएँगे कि उनका पेट रोज ठीक तरह से साफ होता है। और वे स्वस्थ है लेकिन चेहरे का रग और जीभ वता देती है कि वे कब्ज के शिकार है।

हमे लगता है कि हमारा पेट रोज साफ होता है। हमे यह पता नही चलता कि हमारे पेट मे गन्दा पदार्थ कितना एकत्रित है। सवसे ज्यादा कब्जियत उन लोगो मे पाई जाती है जो यह कहते है कि उनका पेट रोज साफ होता है। मल के रग से ही कब्जियत की पहचान हो सकती है। मल का रग अगर काला और गाढे हरे रग का हो तो निश्चित ही वह मल बहुत पुराना

और आतो मे जमा हुआ है। तुरन्त वने हुए मल का रग अधिक या कम पीला होता है।

जिन रोगियो के पेट मे गन्दगी बहुत दिनो से एकत्रित है और जब वह सडने लगती है तो उन्हे वहुत कष्ट होता है। इस स्थिति मे पेट मे स्थित वायु पेट को फुला देती है और वायु के कारण हृदय पर भी दबाव पडने लगता है जिससे वहाँ भी दर्द होने लगता है। साँस लेने मे तकलीफ होने लगती है जिससे हृदय के स्पन्दन मे वाधा होने लगती है। मस्तिष्क मे भी रक्त सचालन ठीक से नही होता इसलिए सिर मे दर्द रहने लगता है। दवाव पडने के कारण सेक्यूम (caecum) और सिग्मायड फ्लेक्शर (sigmoid flexure) के अधिक फूल जाने से जलधर रोग, वेहोशी और वडी आत के दाहिने और वाएँ तरफ के नीचे के हिस्से मे ऐंठन होने लगती है। वडी आंतो के पोस्टमार्टम से वडी भयानक वातो का पता चला है। ईश्वर निर्मित सुन्दर कृति को इस तरह कुरूपता से ढलते देख कपकपी-सी होने लगती है। वडे ही दु ख की वात है कि औसत मनुष्यो के ये यत्र गन्दगी से भरे होते हैं।

इस पुस्तक मे यही वताने का प्रयास किया गया है कि रोगों का असली कारण क्या है और उसकी रोकथाम और उपचार किस प्रकार किया जा सकता है। ये उपचार सरल एव सस्ते हैं और स्वास्थ्य के नियमो के अनुकूल है। वहुत सालो के परीक्षण के वाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे है। ये उपचार पूर्णत हानि रहित, क्रिया मे स्वाभाविक और शरीर को औषधि से मुक्त रखते है।

—∞—

तीसरा भाग

विवेकपूर्ण स्वास्थ्यप्रद उपचार

रोग के लक्षण और उसके कारण के बारे मे उचित व्याख्या करने और यह वताने के बाद कि रोगी की अवस्था को ठीक करने के लिए औषधि अपर्याप्त है, अव आपको उपचार की ऐसी पद्धति वताई जाएगी जो सरल और सुगम है। इस पद्धति की नीव सामान्य ज्ञान और स्वास्थ्य के नियमो पर आधारित है। प्रत्येक व्यक्ति इसके सरल, अच्छे एव चमत्कारपूर्ण परिणाम को देखकर विना हिचक के इस पद्धति को अपना सकता है।

सदियो पहले खेले गए एक नाटक मे, नायक डाक्टरी पेशे के वारे मे कहता है कि "औषधि रोगी के लिए केवल मात्र एक भुलावा है। रोगी का सही उपचार तो प्रकृति स्वय ही करती है।" इस कथन मे एक वहुत वड़ा सत्य छिपा हुआ है। प्रकृति ही रोग का उपचार कर सकती है। प्रकृति ने हमे स्वस्थ रहने के लिए शुद्ध वायु, शुद्ध पानी, सूर्य का प्रकाश, भोजन और व्यायाम जैसे साधन दिए है। तव डाक्टर का काम बहुत ही कम रह जाता है। डाक्टर को तो प्रकृति द्वारा प्रदत्त स्वास्थ्य के लिए वनाए गए साधनो मे आई रूकावट को दूर करने का ही काम करना चाहिए। प्रकृति अपने रहस्यपूर्ण तरीको से नए ऊत्तको (tissues) का निर्माण करती है और साथ ही साथ रोग के द्वारा नष्ट हुए उत्तको (tissues) की मरम्मत भी धीरे-धीरे निश्चयात्मक रूप से करती चलती है।

क्या कोई किसान अनाज को पैदा करता है ? नही, कदापि नहीं। उसका काम तो मात्र अच्छी उपज के लिए साधनो को जुटाना है। वाकी का कार्य तो प्रकृति स्वय करती है।

रोग ऊत्तको (tissues) का विनाश करता है और अच्छा स्वास्थ्य उनका निर्माण। डाक्टर को वीमारी ठीक करने का श्रेय

देना मूर्खतापूर्ण और हास्यास्पद विचार है। डाक्टर को तो सिर्फ इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि प्रकृति द्वारा निर्मित स्वास्थ्यप्रद नियमो का उल्लघन न हो और उन नियमो की क्रियाओ मे किसी भी प्रकार की रूकावट पैदा न हो। इस प्रकार चिकित्सक रोग के उपचार मे प्रकृति की मदद कर सकता है। स्वास्थ्य को सुरक्षित रखने मे व रोग के उपचार के लिए सबसे आवश्यक है बडी आतो को साफ रखना। किसी भी रोग का दूर होना असभव है जब तक उसके सही कारणो को दूर नही किया जाए। जिस तरह अपने घर की गन्दगी ले जाने वाली मुख्य नाली अगर बन्द हो जाए तो गन्दगी न निकलने के कारण बीमारी के कीटाणुओ का जन्म होगा और घातक बीमारियाँ फैलाने वाली गैसे उत्पन्न होगी। परिणामस्वरूप सक्रामक रोगो का जन्म विषैला वातावरण उपस्थित कर देगा। जब तक मुख्य नाली की सफाई ठीक से नही की जाएगी, दुर्गन्ध दूर करने और घातक रोगो को फैलने से रोकने के सारे प्रयत्न व्यर्थ जाएँगे। इसी तरह बडी आत हमारे शरीर की मुख्य नली है। स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए बडी आत की ठीक से सफाई अत्यन्त आवश्यक है। एक और उदाहरण आपके सामने रखा जाता है। कोयले का चूल्हा काफी देर तक जलते रहने पर उसकी आँच कम हो जाती है क्योकि कोयले पर राख जम जाती है। इस चूल्हे मे हम कितना ही कोयला क्यो न डाले, उसकी आग को प्रज्वलित करने का कितना भी प्रयत्न करे, सब कुछ व्यर्थ हो जाता है क्योकि राख वहाँ पहले ही अधिक मात्रा मे जमा है। हमे आग जलाने के लिए चूल्हे को साफ करके सारी राख को फेंक कर नयी आग जलानी होगी। इसी प्रकार हम देखते है कि पुन स्वास्थ्य लाभ के लिए मनुष्य को शरीर से सारी गन्दगी को दूर करना होगा और उसके लिए बडी आंत की अच्छी तरह सफाई होनी आवश्यक हो जाती है।

यह पहले ही बताया जा चुका है कि बडी आत मे गन्दे

पदार्थ रोग के सूक्ष्म कीटाणुओ को जन्म देते है और जहरीली गैसे उत्पन्न करते हैं जो रोग का कारण है। ये कीटाणु दो प्रकार के होते है। एक हानि-रहित और दूसरे हानिकारक। हानिकारक कीटाणुओ की अपेक्षा लाभकारी कीटाणु अधिक होते है। किन्तु कुछ रोगो के कीटाणु ऐसे भी होते है जिनके अस्तित्व का पता ही नही चलता, जैसे क्षय रोग के कीटाणु। इन सूक्ष्म कीटाणुओ का स्थान असीमित है। वे हवा, जमीन और पानी, हर जगह समान रूप मे अपना अधिकार जमाए रखते हैं। प्राय वे खाने व पीने की चीजों पर अपना घर बना लेते है।

हमारा मुँह उनके छिपकर बैठने की जगह बन जाता है। बाल और नाखून आदि भी उनके लिए सुविधाजनक रास्ते बन जाते है। इन्ही रास्तो से वे कीटाणु रक्त मे पहुँचते है। पहले लोगों ने कभी भी इन सूक्ष्म कीटाणुओ पर ध्यान नही दिया था। इन कीटाणुओ से हमे सतर्क रहना चाहिए। क्योकि ये कीटाणु हमेशा छिपकर नए शिकार की ताक मे रहते है।

आमाशय मे गन्दगी के सडने पर ही कीटाणुओ का जन्म होता है। अनपचे भोजन का प्रत्येक कण इन सूक्ष्म कीटाणुओ को जन्म देता है। जो भोजन पेट मे पहुँच कर गैसट्रीक रस (gastric juice) बन जाता है वह शीघ्र सडने लग जाता है। इस कारण भोजन ठीक से पच नही पाता है। ये सूक्ष्म कीटाणु शरीर मे कई तरह से पहुँचते है जैसे किसी रोगी के सम्पर्क मे आने से, या काफी आबादी वाले मकान मे रहते हुए वहाँ की दूषित हवा को ग्रहण करने से, गन्दी सडको पर चलते हुए सास लेने से। स्वास्थ्य के खराब होने पर ये कीटाणु बहुत शीघ्र सख्या मे बढने लगते है और ऊत्तको (tissues) मे छेद करके उनके टुकडे-टुकडे कर डालते है।

भोजन का हर कण खुले मे रहने पर सूक्ष्म कीटाणुओ को अपनी ओर आकर्षित करता है तथा सक्रामक रोगो का केन्द्र बन

जाता है। धूल के कण मे जीवाणु रहते है उनकी परीक्षा करने पर उसमे हम मोतीझरा, डिप्थीरिया, स्कारलेट बुखार और क्षय रोग के कीटाणु पाते हैं। ये कीटाणु हवा के साथ उडकर श्वास के जरिए फेफडे तक पहुँच जाते है। इन कीटाणुओ के फेफडे तक पहुँचते ही व्यक्ति की मृत्यु हो जाए ऐसी वात नही है। जिन लोगो मे वीमारी के विरुद्ध लडने की शक्ति नही होती वे ही रोगी होते है। इस बात का पता सप्ताहो बाद लगता है। अतएव शरीर को नीरोग रखने के लिए शरीर मे एकत्रित गन्दगी को सडने से वचाने का प्रयत्न करना चाहिए क्योकि यही गन्दगी वाहर से आए कीटाणुओ की सख्या वढाने मे मदद करती है। अगर शारीरिक प्रणाली स्वस्थ रहेगी तो रोग के कीटाणु वहाँ पहुँचने पर भी जिन्दा नही वचेंगे। यह तभी सम्भव है जब कि हम वडी आत को एकदम साफ रखे और इस प्रकार रक्त-प्रवाह को दूषित होने से बचाएँ।

अब प्रश्न है कि वडी आत को किस प्रकार साफ रखा जाए ? जुलाब (eathartics) बडी आत की सफाई करने मे अधिक उपयोगी नही है क्योकि उसमे स्थित गन्दगी पर उसका असर नही के वरावर ही होता है। कब्ज का रोगी ठीक होने के लिए पहले जुलाव का ही प्रयोग करता है और धीरे-धीरे उसकी मात्रा वढाता चलता है। परिणाम स्वरूप जुलाब अपना असर ही नही कर पाती।

जुलाव का असर किस प्रकार होता है इस पर प्रकाश डालना आवश्यक है। प्राय लोग समझते है कि औषधि आमाशय से छोटी आत मे जाती है और वहाँ पर भोजन को तरल कर देती है। वहाँ से औषधि वडी आत मे जाती है वहाँ पर भी ठोस कणो पर यही असर होता है और आत को खाली कर देती है। परन्तु यह विचार निराधार है, जुलाब की प्रक्रिया ऐसी नही होती।

किसी भी प्रकार का जुलाव, हल्का हो या तेज, सब आमाशय मे जाकर रस की सहायता से घुल जाता है। भोजन की तरह उन पर भी पाचन क्रिया होती है। पहले जुलाव भी भोजन की तरह आंत मे जाता है फिर सचालन के साथ मिल जाता है। तात्रिकाओ अथवा नस नाडियो की उत्तेजना से स्राव (secretary) और उत्सर्जन (excretary) से सम्बद्ध पद्धतियाँ असाधारण तरीके से क्रियाशील हो जाती है। फलत तरल पदार्थ अधिक मात्रा मे बडी आतो मे चला जाता है। यदि हम मुख्य नाली की सफाई के लिए ऊपर के तल्ले की नाली मे बाल्टी भर कर पानी डाल दे और मान ले कि मुख्य नाली की सफाई हो जाएगी तो वह सर्वथा गलत होगा। जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि जुलाव मल द्वार और बडी आत के घुमाओ को गन्दे तरल पदार्थ से भर देती है, जो कि बडी आत की दीवारो को बार-बार उत्तेजित करता रहता है तथा शोषण क्रिया द्वारा auto-infection की क्रिया को जरूरत से ज्यादा बढा देता है। जुलाव की इस क्रिया के बाद शरीर के अन्य महत्वपूर्ण हिस्सो पर बोझ अथवा तनाव पडता है और इस क्रिया के बाद बहुत थकान महसूस होती है।

इन उत्तेजक वस्तुओं के प्रयोग से बडी आत को खाली करना वैसा ही प्रतीत होता है जैसे बूढे घोडे को दौडाने के लिए चाबुक मारना।

जुलाव शारीरिक प्रणाली को उत्तेजित कर देती है। इसलिए इसका असर बडा ही घातक होता है। जुलाब के बार-बार प्रयोग से नाजुक तत्रिकाओ पर जोर पडता है। जुलाव लेने के विपक्ष मे उपरोक्त बाते ही काफी नही है। गन्दगी से भरी बडी आत को दवाई द्वारा साफ करना गलत है। शारीरिक प्रणाली पर बिना जोर डाले, बडी आत मे चिपकी गन्दगी की सफाई केवल पानी की धुलाई द्वारा ही सम्भव है।

पेट की सफाई :

साधारणत स्वास्थ्य को सुरक्षित रखना आंतो की सफाई पर ही निर्भर करता है। इस सफाई के लिए गरम पानी से उत्तम कोई चीज नही है। आश्चर्य तो यह है कि इतनी साधारण सी वात भी किसी को मालूम नही है। इस पद्धति की जानकारी भी पहले हो चुकी है। इसकी खोज वहुत पुरानी है। हजारो साल पहले इजिप्ट के लोगो ने इस वारे मे जानकारी हासिल की थी। इस पद्धति की जानकारी एक चिडिया के द्वारा हुई जो 'आईविस' (IBIS) के नाम से जानी जाती थी। यह चिडिया नील नदी के तट पर पाई जाती थी। उसका भोजन कब्जियत करने वाला था। चिकित्सको ने देखा कि यह चिडिया अपनी लम्वी चोच से पिचकारी की तरह पानी खीचती है फिर घुमाकर गुदा मे डालती है, जिससे इसके पेट की सफाई ठीक तरह से होती है। डा प्लीनी (Dr Plıny) का कहना है कि आईविस (IBIS) की इस आदत से ऐनिमा देने की क्रिया का जन्म हुआ। यह खोज इजिप्ट के डाक्टरो ने की थी।

दूसरे लेखक (Chrıstıanus Langıus) का कहना है कि जव कभी भी आईविस (IBIS) पक्षी को कब्जियत की शिकायत हुई, वह वीमार पड गयी। उसमे उडने की भी शक्ति नही रही। तव वह लुढकते-लुढकते नदी तक पहुँची और उसी पद्धति से अपना पेट साफ किया और फिर से वह उडने योग्य हुई।

न्यूयार्क के डा ए विल्फोर्ड हाल (Dr A Wilford Hall) की हमे प्रशसा करनी चाहिए जिन्होने ४० वर्षो तक एनिमा का प्रयोग किया और लोगो को इस पद्धति के गुणो से अवगत कराया।

वाशिंगटन के डा एच टी टर्नर (Dr H T Turnur) का कहना है कि रोग वडी आत मे ही पैदा होते है। यह मात्र किताबी कथन ही नही है वरन् एक सच्चाई है। उनकी वात

को समझने के लिए शारीरिक प्रणाली के चित्र को अच्छी तरह समझ लेना आवश्यक है। सन् १८८० मे मेरे एक रोगी की मृत्यु हो गई थी। उस रोगी की आँखे सूज गई थी। उस रोगी के शव की परीक्षा करने पर देखा गया कि आत मे विजातीय द्रव्य भरा हुआ था। बडी आत की पूरी लम्बाई ५ फीट थी। बडी आत को पूरा ही खोला गया। खोलने पर देखा गया कि बडी आत की दीवारो पर गन्दगी चिपकी हुई थी। बड़ी आत के घुमाओ मे वह गन्दगी सूख कर पत्थर की तरह कडी हो गई थी। इस कारण गन्दगी निकलने का रास्ता ही बन्द हो गया था। अनुमान है कि रोगी के पेट मे भयकर दर्द उत्पन्न हुआ होगा। चिकित्सक की दवा क्षणिक आराम जरूर देती होगी किन्तु दर्द के कारण का उपचार नही करती थी। यद्यपि इस प्रकार पुराने मल के एकत्रित होने से सामान्यतया रोगी की मृत्यु नही होती किन्तु यह इकट्ठी हुई गन्दगी निश्चय ही रोगी के मृत्यु का कारण बनती है। अवग्रहरूपी आनमन (sigmoid flexure) के अन्तिम भाग मे और बडी आत मे जगह-जगह छेद हो गए थे, जिसमे कीटाणु-भरे हुए थे। इन कीटाणुओ के कारण ही बडी आत मे सूजन आ गई थी जिससे रोगी को बवासीर की शिकायत हो गई थी। फिर भी मृत्यु के कुछ क्षण पूर्व वह व्यक्ति अपने आप को तन्दरुस्त ही समझता था। यहाँ तक कि अमेरीका की सबसे बडी कम्पनी ने भी उसका जीवन बीमा सहर्ष ले लिया था।

यह भी जान लिया गया है कि आदमी की मौत और वक्त से पहले बुढापा किन कारणो से होता है। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि २८४ आदमियो की बडी आतो को मरने के पहले चीरा गया, उसमे से सिर्फ २८ आदमियो की बडी आत साफ थी बाकी २५६ व्यक्तियो की बडी आतो की दशा अत्यधिक बुरी थी। बहुतो की बडी आत तो गन्दगी से इतनी भर गई थी कि अपने आकार से दुगुनी हो गई थी। मजे की बात तो यह है कि उन २५६ व्यक्तियो के पेट नियमित रूप से साफ होते थे।

कुछ व्यक्तियों की वडी आत मे चार मे छः इच तक लम्बे कीटाणु भरे हुए थे और उनमे खून और मवाद जमा हुआ था।

प्राय यह स्वाभाविक प्रश्न मन मे उठता है कि वडी आत मे यह गन्दा पदार्थ कैसे इकट्टा हो जाता है ? सभ्य जगत के मनुष्यो को मल त्यागने के लिए स्थान व समय का ध्यान रखना पडता है। जब उन्हे हाजत हो और किसी भी समय हाजत हो तो वे मल नही त्याग सकते। उसके लिए निश्चित समय और स्थान होता है। सामाजिक शिष्टाचार वाध्य कर देते हैं कि हम अपनी हाजत दवाए रखे और उसे अनुकूल स्थान और समय के लिए टाल दें। इस प्रकार हमारी आतो मे गन्दगी पूरी तरह निकल नही पाती और क्रमश एकत्रित होती जाती हैं। जानवरों को जब भी हाजत होती है वे तुरन्त उसी स्थान पर मल त्याग देते है। उनके लिए समय और स्थान कुछ भी महत्व नही रखता। इसीलिए उनकी वडी आंत एकदम साफ रहती है।

वहुत से लोगो के शरीर मे से दुर्गन्ध आती रहती है, उस दुर्गन्ध से वचने के लिए वे सुगन्धित वस्तुओ का प्रयोग करते हैं। अगर कोई महिला कमर मे कसा पट्टा वाधती है तो उसके वदन मे से दुर्गन्ध आने लगेगी। कमर पर पट्टा उसी जगह पर वाधा जाता है जहाँ पार्श्वगामी वडी आत (transverse colon) स्थित है। कमर कसने पर पार्श्वगामी वडी आत पर और दवाव पडने लगता है और वह अपने आकार से दुगुनी लम्बी हो जाती है। कपडे एकदम ढीले पहनने चाहिए। वडी आत को साफ रखना चाहिए स्वस्थ व्यक्ति का जीवन वरदान स्वरूप है। जब वडी आत गन्दगी भर जाने के कारण वन्द हो जाती है तो गन्दगी निकलने के और तीन रास्ते हैं। त्वचा के छिद्र, श्वास द्वारा फेफडो और मूत्राशय (किडनी)। अगर वडी आत के द्वारा गन्दगी नही निकल पाती तो इन तीनो रास्तो से वदवूदार वायु निकलने लगती है। इसीलिए शरीर से दुर्गन्ध आती हुई मालूम होती है।

गन्दगी से भरी हुई बडी आत की सफाई पानी के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु से नही हो सकती। हजारो रोगियो ने इस पद्धति का प्रयोग किया और उन्हे असाधारण सफलता प्राप्त हुई, वे विल्कुल नीरोग हो गए। इनमे बहुत से तो अच्छे जाने-माने डाक्टर थे, जिन्होने इस पद्धति के प्रयोग से प्राप्त हुई सफलता पर बधाइयाँ भेजी।

अब हम इस विषय की सबसे महत्वपूर्ण बात की चर्चा करेगे। इस पद्धति के प्रयोग मे किन साधनो का प्रयोग करना चाहिए, क्योकि इस सफल पद्धति का प्रयोग सही साधनो द्वारा हो तभी इस पद्धति का पूरा लाभ होगा। आरम्भ मे जो भी साधन प्राप्त थे वे पुराने एव अविकसित थे। वैसे तो किसी भी खोज का प्रारम्भ इसी प्रकार होता है।

डा हाल (Dr. Hall) ने यह प्रयोग अपने ऊपर एक पिचकारी से किया। इस पुराने ढग की पिचकारी मे एक अडे के आकार की रबर की थैली और रबर की नली थी। रबर की नली का एक सिरा गुदा (rectum) से लगाया जाता था और दूसरा सिरा पानी के बर्तन से। बीच मे लटकी थैली से पानी खींचा जाता था। यह बताना व्यर्थ है कि यह पद्धति कितनी असुविधाजनक थी। बहुत सालो बाद "gravity" अथवा "fountain" पिचकारी का आविष्कार हुआ। उसमे रबर की थैली मे एक रबर की नली लगी हुई थी। इस रबर की थैली को ऊपर एक कील मे टांग दिया जाता था, वह कील ऊँचाई पर होती थी, और इसी ऊँचाई के कारण पानी रबर की थैली से नीचे जाता था। यह आविष्कार पुराने आविष्कारो से काफी सीमा तक उचित था फिर भी कई प्रश्नो का समाधान इससे भी नही हो सका क्योकि बूढे और कमजोर व्यक्तियो के लिए यह पद्धति काम मे नही लायी जा सकती थी। दोनो ही पद्धतियो मे शरीर के निचले भाग को अनावृत करना पडता था। इस पद्धति के विरोध मे सबसे जरूरी बात तो यह है कि उसे प्रयोग

करने से आंतो मे हवा घुस जाती थी और पेट मे दर्द होने लगता था। हमे यह समझ लेना चाहिए कि ये दोनो साधन योनि डयूस (vaginal douching) के लिए बनाए गए थे लेकिन पेट की सफाई के लिए अन्य साधन न होने के कारण इनका प्रयोग उक्त कार्य मे होने लगा।

उन दिनो चिकित्सको ने एक अन्य तरीका भी अपनाया था। एक फाउन्टेन सिरिज जैसी पिचकारी, जिसकी लम्बाई १८ इच से २४ इच तक होती थी, उसको पूरा का पूरा गुदा मे डाल दिया जाता था जिससे उसमे भरे पानी से वडी आत साफ हो जाए। यह प्रयोग यो तो युक्तिसगत लगता है किन्तु इस पद्धति के प्रयोग से अनेक असुविधाएँ और कष्ट है। पहला कारण तो यह है कि उस नली का मुँह गन्दे पदार्थ के कारण वन्द हो जाता है। दूसरा कारण यह है कि नली का दूसरा सिरा जो कि गुदा के बाहर निकलता है, इतनी जगह नही छोडता कि इसमे से कडे गन्दे पदार्थ निकल सके। तीसरा कारण यह है कि इस पद्धति को प्रयोग मे लाने से पहले व्यक्ति को शरीर के अन्दर की पूरी जानकारी होनी चाहिए, जरा सी गलती खतरे का कारण वन सकती है। अत रोगी को इस यत्र का प्रयोग अपने आप कभी भी नही करना चाहिए।

इन्ही कारणो को देखते हुए लेखक ने एक यत्र का आविष्कार किया, जिसे जे वी. एल कास्केड (J B L Cascade) कहा गया। जिसका प्रयोग कमजोर, वूढे, जवान सभी समान रूप से कर सकते है। जे बी एल अर्थ क्रमश (ज्वाय-Joy) आनन्द, (ब्यूटी-Beaty) सौन्दर्य और जीवन (लाइफ-Life) से है। यह पद्धति वरदान स्वरूप सिद्ध हुई। यह वात अक्षरश ठीक है कि स्वास्थ्य के बिना जिन्दगी मे किसी प्रकार का भी आनन्द नही है, स्वास्थ्य के विना सौन्दर्य का अस्तित्व ही नही है, और स्वास्थ्य के बिना यह जीवन जीने योग्य नही रहता।

इन सब पद्धतियो के विरुद्ध एक ही वात कही जाती है कि

नली को शरीर मे डालकर पानी उसके द्वारा अन्दर ले जाया जाता है, और पानी अन्दर मे एक ही जगह मे एक ही स्थान पर गिरता है, इस कारण कभी-कभी शरीर के कोमल भाग पर खतरा उत्पन्न हो जाता है और गुदा के ऊपरी भाग (mucous membrance) मे दरारे पड जाती है जिससे बाहर निकलता हुआ गन्दा पदार्थ उन दरारो मे फस जाता है और गुदा के ऊपरी भाग मे सूजन आ जाती है। इन सब बातो को ध्यान मे रखते हुए एक ऐसी नली का आविष्कार किया है जिनमे पहले वाली पद्धति की कमियाँ नही थी। इस नली का दूसरा सिरा जो कि गुदा से लगाया जाता था उसका मुँह बन्द कर दिया और नली के चारो ओर छेद कर दिए जिससे पानी गुदा मे समान रूप से गिरे। इस नली की बनावट ही कुछ इस प्रकार थी कि वह गुदा मे मजबूती के साथ टिका रह सकता था और इस कारण पानी सीधा बड़ी आत मे पहुँचता था। इस नली का नाम "Injection point" रखा। इस यत्र की यह विशेषता थी कि उसे रोगी स्वय बहुत आसानी से व आराम से बैठकर ले सकता है। इस विधि के प्रयोग मे १५ मिनट से अधिक समय नही लगता था।

बहुत से लोग बल्ब व फाउन्टेन सिरिज का लेट कर प्रयोग करते थे। यह तरीका काफी थकाने वाला, अरुचिकर और अनावश्यक था। सिद्धान्त यह है कि पानी तेजी के साथ शरीर के हिस्से मे जाए और ध्यान रहे कि बडी आत का उर्ध्वमुखी और अधोमुखी भाग समानातर रहे लेकिन "Injection point" का मुँह ठोस होने के कारण ऐसा नही होता। सभी ओर एक सा दबाव पडने से बडी आत की दीवारे फूलने लगती है और चिपका हुआ पदार्थ निकलने लगता है।

पाचन सस्थान का चित्र देखने से हमे यह ज्ञात होता है कि अधोमुखी बडी आत का वह हिस्सा जो कि गुदा मे समाप्त होता है, दूसरे हिस्सो से बडा होता है। इसकी क्षमता ३ पाउन्ड पानी ग्रहण करने की होती है। पानी का यह भार बडी आत जैसे

लचीले अग को ढीला कर देता है। इस प्रकार इसके पास वाले अगो का आमाशय की दीवारो पर दबाव पडता है। अत लोग पानी पूरी मात्रा मे नही ले पाते और उपचार असफल सिद्ध होता है। एनिमा लेते वक्त तह किया हुआ तौलिया गुदा के पास लगाना चाहिए जिससे गुदाद्वार पर दबाव न पड़े।

रोग के कीटाणुओ को नष्ट करने के लिए पानी मे ऐनटी सैप्टिक घोल (कीटाणुनाशक घोल) तैयार कर लेना चाहिए। कच्चे ताजा नीबू का रस सबसे अधिक उपयोगी समझा जाता है। यह घोल शरीर के लिए हानिकारक नही होता बल्कि रोग के कीटाणुओ को नष्ट करने वाला होता है। यह घोल केवल कीटाणुनाशक ही नही है वरन् प्रशमनीय स्वास्थ्यवर्धक औषधि है जो आत की मासपेशियो को ताकत देती है।

आतो मे से गन्दगी को हटाने का कार्य मासपेशियो के गोलाकार रेशो के सिकुडने से होता है। लेकिन कब्ज पुरानी होने पर गन्दगी बडी आत की दीवारो पर जम जाती है। इस कारण मासपेशियाँ सिकुड नही पाती, अत बडी आत का साफ होना कठिन हो जाता है। परिणामस्वरूप मांसपेशियाँ कुछ सीमा तक अपना कार्य करना बद कर देती है। इन्हे फिर से क्रियाशील बनाने के लिए जिस वस्तु की आवश्यकता होती है वह है एनिमा। इसके उपयोग से ही पुराने कब्ज को दूर करने मे सफलता मिलती है और इसके प्रयोग से ही आते फिर से अधिक शक्ति से काम करने लगती है।

यह विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि अगर बडी आत की सफाई नियमित रूप से की जाय तो कोई भी सूक्ष्म कीटाणु बडी आत मे अपना घर नही बना पाएँगे।

यदि एक बार रोग के कीटाणुओ को पूरी तरह से नष्ट कर दिया जाए और उनकी उत्पत्ति मे बाधा उत्पन्न कर दी जाय तो जहरीले गन्दे पदार्थ शरीर मे इकट्ठे होने बन्द हो जाएँगे और प्रकृति नए सिरे से रोगी के शरीर को नीरोग बना देगी।

चौथा भाग

एनिमा के प्रयोग का तरीका

रोग का सही कारण और उसके उपचार का तरीका वताने के वाद आपको यह वताया गया कि एनिमा का प्रयोग अव तक के समस्त उपायो से अच्छा है। एनिमा को किस तरह प्रयोग मे लाना चाहिए यहाँ यह वताया जाएगा।

पहले गरम पानी से एनिमा को ठीक से धो डालिए ताकि वर्तन अच्छी तरह से साफ हो जाय।

धोने के वाद गरम पानी मे नीवू का थोडा रस डालना चाहिए। उसके पश्चात् कासकेड को ठीक-ठीक गरम पानी से भर देना चाहिए। पानी का तापमान १०० से १०५ डिग्री फार्नहाइट होना चाहिए। उस पानी मे हाथ डालकर थोडी देर रखना चाहिए। अगर पानी सहन करने लायक गरम हो तो वह ठीक है। थर्मामीटर की अपेक्षा हाथ का उपयोग पानी का तापमान जानने के लिए ठीक है, क्योकि शरीर के अन्दर के अग २०५ डिग्री गर्मी को शरीर के वाहरी अगो की अपेक्षा अधिक सहन कर सकते है। गरम पानी गन्दे पदार्थों को नरम कर देता है। अगर पानी का तापमान शरीर के तापमान से कम हुआ तो उससे दर्द पैदा हो सकता है। तापमान जानने का दूसरा तरीका है कोहनी को जो वहुत ही सवेदनशील होती है, पानी मे डालकर देख लेना चाहिए।

कासकेड को पूर्णतया पानी से भर देना वहुत जरूरी है। क्योकि उससे उसके अन्दर की हवा एकदम निकल जाएगी। हवा की उपस्थिति दर्द पैदा कर सकती है तथा भौतिक शास्त्र के नियम के अनुसार दो चीजे एक जगह को नही घेर सकती और हवा की मौजूदगी से पानी ठीक से अन्दर तक नही पहुँच पाएगा।

अगर पानी के वाद गन्दा पदार्थ न भी निकल सके तो कम से कम गैस जरूर निकलेगी।

अब कासकेड को रखकर उसका इन्जेक्शन पॉइन्ट अन्दर डाल लेना चाहिए। फिर कासकेड जहाँ पडा है, वहाँ उसके ऊपर पूरी तरह बैठने के पहले वाये हाथ से शरीर के नीचे से कासकेड की नली पकड कर उसे गुदा मे डालना चाहिए फिर कासकेड पर बैठ जाना चाहिए। जव इन्जेक्शन पॉइन्ट पूरी तरह से अन्दर डाल दिया गया हो तो कासकेड के नल को थोडा-थोडा करके पूरी तरह खोल देना चाहिए। कासकेड को प्रयोग मे लाने के लिए सवसे उपयुक्त स्थान स्नानघर है।

जैसे ही नल खोला जाए और पानी शरीर मे जाने लगे वैसे ही धीरे से पेट के नीचे के हिस्से को वाई तरफ से ऊपर की ओर दवाइए फिर नलिका तक आकर सीधे दाहिनी ओर हाथ को ले जाते हुए शरीर के बाई ओर से नीचे की ओर चले जाइए। यह पूरा रास्ता बडी आत का होता है जिससे उसमे पानी को सही रास्ता अपनाने मे मदद मिलेगी।

कभी-कभी ऐसा होता है कि थोडा सा पानी अन्दर जाते ही वहुत जोर से हाजत होती है। यह सिर्फ इस पद्धति का सुलभ उपयोग मात्र से ही होता है अगर ऐसा हो तो नल एकदम वन्द कर देना चाहिए और हाजत को रोकना चाहिए। और जव हाजत खत्म हो जाए तो फिर नल खोल देना चाहिए। शरीर का सारा वजन कासकेड पर छोड देना चाहिए क्योकि शरीर के वजन से ही गन्दे पदार्थ निकालने मे सुविधा रहती है।

जब पानी पर्याप्त मात्रा मे अन्दर चला जाए तो नल वन्द करके पाखाने की सीट पर बैठकर गन्दे पदार्थ को निकाल देना चाहिए। साथ ही साथ अब पेट के दाहिने हिस्से पर दबाव डालते हुए नाभि तक आइये और बाई ओर जाकर नीचे हाथ ले जाइये। इस क्रिया के तीन उपयोग है। पहला तो यह पानी के बहाव मे मदद करता है तथा दूसरा यह इकट्ठे हुए पदार्थ को पानी के साथ

बहा देता है और तीसरा यह बडी आत की दीवारो से चिपके हुए गन्दे पदार्थ को गिरा देता है।

शुरू शुरू मे, बडी आत मे गन्दा पदार्थ जमा रहने के कारण यह सम्भव नही है कि २ लीटर पानी से ज्यादा मात्रा अन्दर जा पाएगी। परन्तु कई बार प्रयोग करने से इकट्ठा हुआ गन्दा पदार्थ निकलता जाएगा, बडी आत मे जगह बढती जाएगी और सप्ताह का अन्त होते होते इतना पानी अन्दर चला जाएगा कि बडी आत पूरी तरह भर सकेगी। पानी की मात्रा आदमी के शरीर के हिसाब से घट बढ सकती है किन्तु एक औसत स्वस्थ आदमी की बडी आत मे ४ लीटर पानी अन्दर जा सकता है किन्तु एक औसत शरीर वाले से छोटे आदमी के शरीर मे भी सही उपचार के लिए कम से कम पानी उचित मात्रा मे जाना जरूरी है। २ से ४ लीटर पानी का शरीर मे प्रवेश पेट को बडा जरूर कर देगा और उससे थोडी सी बेचैनी भी रहेगी किन्तु इससे किसी भी नुकसान की आशका नही है। यह बात जान लेनी चाहिए कि बडी आत कभी भी फट नही सकती है। हाँ यदि प्रयोग करते करते पानी जोर से पेट मे डाले तो यह सम्भव है पर उसके पहले कि बडी आत मे बहुत जोरो से दर्द होगा जिससे पानी, जो भी अन्दर गया है, वह बाहर निकल जाएगा। बडी आत बहुत ही लचीली होती है और बडी आत पानी से कभी भी उतनी नही झुक सकती है जितनी कि वह अन्दर भरे हुए गन्दे पदार्थ से झुक सकती है।

यदि प्रयोग की दशा मे दर्द अनुभव हो तो इसके कई कारण है—पहला कारण यह है कि पानी पर्याप्त गरम नही था या कासकेड मे पानी पूरी तरह भरा नही गया। मगर इन सब कारणो को दूर करने के पश्चात् भी दर्द महसूस हो तो पानी थोडा सा अन्दर जाते ही पहले उठकर उसको निकाल देना चाहिए और फिर आकर बैठ जाना चाहिए। इसके बाद दर्द कम होगा क्योकि बडी आत का नीचे का हिस्सा तब तक साफ हो जाएगा। अगर फिर

भी दर्द होता ही रहे तो एक बडी चम्मच भर कर डेकोक्सन आफ एनीससीज को उवलते हुए पानी मे डाल दीजिए और उस पानी को कासकेड मे पडे हुए पानी मे मिला दीजिए इससे बडी आत का दर्द एकदम ठीक हो जाएगा ।

इसका प्रयोग कितनी बार करना चाहिये यह तो इस वात पर निर्भर करता है कि व्याधि किस तरह की है और कितनी पुरानी है । किन्तु इसका प्रयोग अधिकतर पहले सप्ताह हर रोज करना चाहिए । दूसरे सप्ताह एक दिन छोडकर और उसके बाद सप्ताह मे दो बार । किन्तु स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए सप्ताह मे दो बार प्रयोग पर्याप्त होगा । कासकेड के प्रयोग के बाद लगभग आधा लीटर ठडा पानी अन्दर लेना चाहिए और उसे वही रहने देना चाहिए । यह गुदा के लिए बहुत ही अच्छा है और यह किडनी से होकर गुजरता हुआ उसको एकदम साफ कर देता है । भोजन के तीन घटे बाद तक इसका उपयोग वर्जित है । क्योकि इस समय पेट और पार्श्ववर्ती आत (transverse colon) दोनो वडे हो जाते है जिससे वे एक दूसरे पर दवाव डालते है और पेट ज्यादा नाजुक होने से उल्टी या वमन होने की इच्छा होती है । फिर भी यह इलाज कभी भी दिया जा सकता है । सोने से पहले लेने से इससे वहुत फायदा है । क्योकि सवसे पहली बात तो यह है कि यह वक्त प्रत्येक के लिए सुविधाजनक होता है । दूसरे इससे रात भर वहुत आराम मिलता है, तीसरे रात के समय प्रकृति शरीर की मरम्मत का काम करती है । रात के समय वह दिन मे की हुई खराबियो को दूर करती है । इसी समय वह वेकार ऊत्तको (ıssues) को हटा कर नए ऊत्तकों को वनाती है जिससे सारी शारीरिक प्रणाली साफ हो जाती है और रक्त के प्रवाह को भी स्वच्छ कर देती है । इसलिए रात मे इस उपचार को प्रयोग मे लाने का मतलब है प्रकृति के कार्य मे मदद करना ।

कासकेड के प्रयोग के वाद यह सम्भव है कि दूसरे दिन तक

कुछ भी न निकले किन्तु इससे यह नही समझना चाहिए कि कब्ज की शिकायत है। प्रकृति का नियम तो यह है कि कम से कम दिन मे दो बार मल त्याग करना चाहिये। किन्तु शरीर को वुरी आदतो के कारण वापस ठीक स्थिति मे लाने मे थोडा वक्त लगता है। अगर प्रात.काल उठते ही थोडा सा गरम पानी पी लिया जाये तो हाजत शुद्ध हो जायेगी।

यह सत्य है कि सफलता इर्ष्या को जन्म देती है। इसलिए इलाज के इस प्रयोग की असाधारण सफलता ने इसके विरुद्ध लोगो को भडकाया है। जो भी व्यक्ति रोग ठीक करने का नया इलाज ढूंढता है उसे इस वात के लिए तैयार हो जाना चाहिए कि उसके साधारण प्रयोग के नये तरीके को लोग मानने के लिए तैयार नही होगे वल्कि उसकी हँसी उडाएँगे। इसी तरह कासकेड के प्रयोग का लोगो ने विरोव किया है।

पहला विरोध यह है कि प्रयोग स्वाभाविक नही है। यह वात ठीक है पर वडी आत का रुकना और वडा होना भी स्वाभाविक नही है। हम एक कृत्रिम जिन्दगी व्यतीत करते हैं। पाषाण युग में आदमी ने हाजत को समय और जगह के हिसाव से कभी नही रोका। इसलिए यह दावे के साथ कहा जा सकता है कि उस समय वडी आत के वद होने का प्रश्न ही नही उठता था। मगर सभ्य ससार की यह माग हो गई कि हम हाजत को अनुकूल जगह और वक्त के लिए दवा दे और कुछ समय के लिए टाल दे। प्रकृति के इस कानून के उल्लघन के लिए हमे सजा भुगतनी ही पडती है।

गन्दे पदार्थो से भरी वडी आत अस्वाभाविक वन जाती है। इसलिये प्रकृति के द्वारा दी गई वुद्धि से उसे साफ करने के उपाय आविष्कृत किये गये है। माना कि एक यत्र से वना हुआ शरीर का हिस्सा अस्वाभाविक जरूर है, पर इसका मतलव यह तो नही कि जिसका पाव टूटा हो वह जिन्दगी भर सादगी पर ही चलता

रहे और इन्सान के दिमाग मे बने हुए यान्त्रिक पाँव का उपयोग ही न करे।

साधारण बुद्धि भी यह कहती है कि साफ करने का काम पानी द्वारा ही हो सकता है। यह तरीका बिल्कुल भी हानिकारक नही है, क्योकि इसमे प्रकृति द्वारा प्रदत्त सबसे सरल और अचूक चीज का प्रयोग होता है और वह है स्वच्छ पानी। बीमारी अस्वाभाविक है। इसलिये जब तक शरीर अपनी आरोग्य अवस्था मे नही आ जाता तब तक हमे प्रकृति की मदद करनी चाहिए और उसे शरीर के दोषो को दूर करने मे सहायता देनी चाहिए। प्रकृति के इस कार्य मे हम इसकी चेतावनी देने के बावजूद भी मदद न करके बाधा पहुँचाते है।

जुलाब सिर्फ निस्सारक पद्धतियो को उत्तेजित करता है और प्राकृतिक चिकित्सा को उन दूषित पदार्थों को निकालने मे परिश्रम करना पडता है जिससे थकान व सुस्ती पैदा होती है। जुलाब लेने की क्रिया कमजोरी पैदा करती है। दूसरी तरफ धुलाई करके सफाई करने की क्रिया सीधे बडी आंत मे जमे हुए पदार्थ पर क्रिया करती है और किसी भी स्वाभाविक क्रिया को बिना उत्तेजित किए काफी शान्त आराम-देह सक्रिया पैदा करती है।

कुछ विरोधी लोगो ने जोर देकर कहा है कि यह एक कमजोरी पैदा करने की प्रक्रिया है।

ऐसे हजारो लोगो के उदाहरण आए है जिन्होने विरोधी लोगो के विरोध करने के बावजूद भी इस प्रयोग का परीक्षण किया। उन्होने स्वीकार करते हुए इस पक्ष का समर्थन किया कि वास्तव मे निराधार सिद्धान्त की तुलना मे व्यक्तिगत अनुभव पर अधिक विश्वास करना चाहिए।

डा० फारेस्ट का कहना है कि उनके रोगी ने इसका उपचार महीनो और सालो तक किया और पुन. खोई हुई शक्ति प्राप्त की एव शरीर का मास भी बढ गया।

दूसरे विरोधी कहते है कि "यह उपचार आत को कमजोर बना देता है और हाजत को इस अस्वाभाविक विधि पर निर्भर कर देता है।" इसके उत्तर मे यही कहा जा सकता है कि सभ्य समाज के पचास प्रतिशत लोग जुलाव की आदत के गुलाम हैं। अगर शारीरिक प्रक्रिया अपना काम करने मे असमर्थ हो जाए तो किसी बात पर तो निर्भर होना ही पडेगा। जुलाव की अपेक्षा स्वच्छ जल का प्रयोग ही हितकर है। लेकिन जितने भी विरोध है उनमे कोई जोर नही है। इस विषय पर डा० फारेस्ट कहते हैं कि यह तरीका बडी आत को कमजोर नही करता। जब प्रयोग की जरूरत नही रह जाती तो स्वास्थ्य-लाभ के साथ-साथ हमारी आंत भी फिर से स्वस्थ हो जाती है और अपना काम करने लगती है।

डा० स्टीवेन्स का, जिन्होंने अपने ऊपर और अपने रोगियो पर लगभग बीस साल तक इसका प्रयोग किया है, कहना है कि यह आतो की साधारण गति मे कोई भी बाधा नही देती। इस बात की परीक्षा करने के लिए प्राय वह एक सप्ताह के लिए इसके प्रयोग को रोक देते थे। जब आते नियमित रूप से काम करना बद कर देती थी और फिर से काफी मात्रा मे दूषित focal पदार्थ इकट्ठे होने पर इसकी माग होने लगती थी तब फिर इसका प्रयोग करते थे। वह इस बात की सिफारिश करते है कि हर दो या तीन दिन बाद रोग को दूर करने के लिए आत की धुलाई करनी चाहिए। करीब बीस वर्ष से अधिक उन्होने अपने ऊपर इसका प्रयोग सावधानी बरतने के लिए किया है और बुढापे तक इसका व्यवहार करते रहने के कारण वे एक दिन भी बीमार नही पडे।

कुछ लोगो का कहना है कि प्राय इसके व्यवहार से बडी आत इतनी ज्यादा खिंच जाती है कि वह हमेशा ही फूली हुई रह जाती है। शरीर विज्ञान के नियम के अनुसार यह तर्क विरोधपूर्ण ही है और साधारण ज्ञान और अनुभव के आधार से सिर्फ हास्यपूर्ण है।

विभिन्न प्रकार के व्यायाम वताते है कि व्यायाम मासपेशी को बढाते है। उदाहरण के तौर पर बाँह का बार-बार सिकोडना और फैलाना उस अग की मासपेशी को सशक्ति वनाता है न कि उसकी सिकुडन को ढीला करता है। सव मासपेशियो के रेशे एक प्रकार के होते है लेकिन तात्रिकाओ (nerves) की कार्य करने या पूर्ति करने की दृष्टि से दो प्रकार के होते है, ऐच्छिक और अनैच्छिक। इसका कोई कारण नही बताया जा सकता है कि कि बडी आत की मासपेशियाँ अपना लचीलापन क्यो छोड देती है। व्यायाम करने से दूसरी मासपेशियाँ के समान इनमे भी विकास होता है। चूँकि उन पर अनावश्यक जोर नही दिया जाता और चरम-खिचाव कुछ क्षरण ही होता है। पर जैसे ही पानी निकलने लगता है उनको आराम पहुँचने लगता है और इसके साथ ही पेट प्रक्षालन उत्तेजक का कार्य करता है।

हम लोगो को कहा गया है कि एनिमा का प्रयोग क्रिया-कु चन (पेरिस्टालीस) के विरुद्ध कार्य करता है। यह बात जचती नही है, क्योकि पानी को निकालने मे आत द्वारा शक्ति लगती है जिससे सिद्ध होता है कि उससे गति होती है। अगर आत की गति कुछ क्षण रुक जाएगी तो क्या यह सत्य नही कि दूसरे अगो के कार्य अधिक समय के लिए रुक जायेगे।

इस तरह का विरोध सामने आया कि बडी आत की आवरण की धुलाई हानिकारक है क्योकि यह भीतर के तरल पदार्थो को भी जो ग्रीस का काम करते है, निकाल देती है।

साधारण ज्ञान के नाम पर ये लोग इस तरह का विरोध किस आधार पर करते है। क्या वे यह नही जानते कि यह विवाद शरीर विज्ञान के नियम के विरुद्ध है? क्या कहने से पसीना निकलना वन्द हो जाता है? या आँख को धोने से मेइबोमियन ग्रन्थि नष्ट हो जाती है? क्या पानी पीने से लार का मुख से निकलना और पाचक रस का अमाशय से निकलना बन्द हो जाएगा? यदि सेक्रेशन को धोने से सेक्रेटिग ग्रन्थि की शक्ति

समाप्त हो जाए तो मनुष्य की जिन्दगी समाप्त प्राय' हो जाएगी। सत्य तो यह है कि दस हजार मे एक को भी इस विषय का व्यावहारिक ज्ञान नही है। उन्हे इसका बाहरी ज्ञान हो सकता है और लाभदायक बताने के प्रयत्न में वे अपना ध्यान सिर्फ कमियो को बताने मे ही लगाते हैं।

चाहे इसका प्रयोग इच्छा से किया जाये परन्तु रोगी की प्रकृति और आदतो पर यह निश्चय ही निर्भर करता है। यदि बुरी आदतों को, जो तकलीफ पहुँचाती हैं, नही छोडा जाए तो कई बार इसके प्रयोग को रोकना पडेगा। यदि कोई कब्ज का रोगी है और उसने अपनी आत को जुलाब या रेचक औषधियो के प्रयोग से,बहुत कमजोर कर लिया है, तो उसे ठीक करने के लिए और कमजोर आतो को सुधारने मे काफी समय तक इसकी जरूरत होगी।

वयस्क व्यक्तियो को लगातार इसका प्रयोग करते रहना चाहिए। क्योंकि उम्र के साथ आते कम क्रियाशील हो जाती हैं और साधारणतया इसके प्रयोग मे बहुत अधिक मेहनत भी नही लगती और थोडे दिन के अनुभव के बाद जैसे हम खाना खाने की सोचते हैं वैसे ही एनिमा के व्यवहार की भी सोचने लगते है।

जो इसका उपयोग एक बार करके देखना चाहते है उन लोगो के दिमाग मे यह बिठाने की आवश्यकता है, कि जिन्दगी के हर क्षेत्र मे सफलता प्राप्त करने के लिए गम्भीरता और धैर्य की आवश्यकता होती है। कठिन परिश्रम, धैर्य और अन्त.करण की शुद्धता, आत्मा की आवाज सुनकर इन तीनो बातो को ध्यान मे रख कर ही स्वास्थ्य प्राप्त किया जा सकता है।

यदि पुराना और जमा हुआ रोग एक साल मे ही घरेलू इलाज से जो इतना आसान है कि एक बच्चा भी समझ सकता है और अभ्यास कर सकता है ठीक कर लिया जा सकता है तो फिर व्यक्ति को इसे अपना कर अपने को भाग्यशाली समझना चाहिए। कुछ व्यक्ति पूर्ण रूप से पुन स्वास्थ्य प्राप्त करने मे

सन्देह प्रकट कर सकते हैं। पूर्ण और पर्याप्त रूप मे दृढ सकल्प के साथ जुटकर परिश्रम करने से निश्चय ही ऐसा सम्भव होगा। रोगी के लिए तो स्वास्थ्य प्राप्त करना लक्ष्मी के मुकाबले मे अति श्रेयस्कर है।

यहाँ वहुत जोर देकर इस विषय पर लिखना है, क्योकि कुछ औषध-प्रेमी व्यक्ति हर नए तरीके एव औषधि सम्बन्धी हर नई सलाह को सबसे पहले प्रयोग मे लाते है। ऐसे लोगो से दवाई वेचने वाले प्राय सालाना लाभ उठाते है। वे एक इलाज से दूसरे इलाज पर जाते है और उन्हे कोई भी स्वास्थ्य रूपी सुनहरा इनाम नही मिलता जिसकी वे खोज मे हैं। इस प्रकार के व्यक्ति हर अच्छी औषधि लेने के फेर मे वहुत वार गलत राह ले लेते है, इस प्रकार के व्यक्ति लगातार प्रयास करने मे असमर्थ होते है, क्योकि जव किसी नए इलाज से सप्ताह के भीतर अच्छा परिणाम मिलने वाला होता है तभी वे हतोत्साह होकर उसे छोड देते हैं। इस श्रेणी के मनुष्य को जोर देकर कहा जा सकता है कि यदि वे इस इलाज को एक वार प्रयोग मे लाये तो उन्हे इससे जरूर लाभ होगा और वे स्वस्थ हो जायेगे।

उन्हे धीरज रखना चाहिए। उन्हे पूर्ण धैर्यवान होना चाहिए। उन्हे चमत्कार पूर्ण परिणाम की आशा कुछ ही दिनो मे नही करनी चाहिए। उनके रोग की वृद्धि की अवस्था तो शायद महीनो एव सालो की है फिर उनका कुछ सप्ताहो मे ही स्वस्थ होने की वात सोचना मूर्खता है। एक व्यापारी जिसका व्यापार ठप हो जाए और वह उसको पुन जमाना शुरू करे और यदि सावधानी और स्फूर्तिदायक प्रयत्नो से कुछ ही सालो मे उन्नत अवस्था मे पुन प्राप्त कर ले तो वह अपने को अत्यन्त भाग्यशाली समझेगा। वृद्धि वहुत धीरे-धीरे होती है और यही वात खासकर मानव-शरीर के साथ है। प्राकृतिक चिकित्सा मे शीघ्रता नही करनी चाहिए। अगर इस स्वास्थ्य सम्बन्धी उपचार के प्रयोग

मे विवेक एवं दृढता से अभ्यास करे तो प्राकृतिक चिकित्सा जीवनदायी और मनवाछित फलदायी होने मे सहायक होगी।

सैनिक कहावत है "सबसे शक्तिशाली सिपाहियो की टुकडी के पक्ष मे स्वर्ग लडता है।" प्रकृति उस व्यक्ति की तरफ से लडती है जो उसका साथ बहुत विश्वास के साथ देता है और जो स्वास्थ्य को पुन. प्राप्त करने की लडाई मे सबसे अधिक दृढता और धैर्य को काम मे लाता है।

जब रोगी हर नई दवा के पीछे भागता है तो मनोवैज्ञानिक तथ्य के द्वारा उसे उस बात का साधारण ज्ञान देना चाहिए कि हर नई दवाई को लेने से उसका रोग ठीक नही हो सकता। उसे विशेष उपचार एक विशेषज्ञ द्वारा ही कराना चाहिए।

इसका धैर्य पूर्वक उपचार करने से परिणाम अच्छा मिलेगा। लेकिन वे व्यक्ति एकदम स्तम्भित रह जायेगे जो विभिन्न दवाइयो के इलाज के पीछे-पीछे भागते रहते है। सबसे मुख्य बात तो यह है कि इससे लाभ स्थाई होता है क्योकि सस्थानो की अच्छी तरह सफाई हो जाती है और स्वच्छ रखने से ये सस्थान सशक्त बनते है और स्वास्थ्य अच्छा बना रहता है। एक साल का उपचार अभ्यास से पूर्णता एव नया जीवन प्रदान करता है।

महत्त्वपूर्ण सलाह :-

कब्जियत से सब अग शिथिल हो जाते है। ९० प्रतिशत दूसरे रोगो का मौलिक कारण कब्ज ही है। इसके उपचार मे पानी पीने की बहुत महत्ता है। खाने के एक दो घटे बाद प्राय: पानी पीना चाहिए। सवेरे के जलपान के आधा घटा पहले पानी पीना चाहिए। इतना पानी शरीर मे अधिक नही होगा। अगर पाचन क्रिया ठीक हो तो सवेरे एक गिलास गरम पानी धीरे-धीरे एक-एक घूँट पीना चाहिए।

डा जेम्स. सी मीनार (Dr James C Minor) ने अपनी किताब "द प्लान आफ द हाऊस आफ मैन सर" ("The

Plan of the House of Man, Sir") मे एक सलाह दी है कि "कुछ मिनट बाई करवट लेकर आराम करके बिस्तर पर से उठना चाहिए जिससे ऊर्ध्वगामी वृहदान्त्र (Ascending colon) मे खाना जाकर पार्श्ववर्ती बडी आंत (Transverse colon) मे खाली हो जाएगा और पार्श्ववर्ती बडी आत मे अधोगामी वृहदान्त्र (descending colon) मे पहुँच जाएगा। यदि इन बातो पर ध्यान दिया जाये तो काफी मात्रा मे तकलीफ दूर हो सकती है।

—∞—

पाँचवां भाग
व्यावहारिक स्वास्थ्य-विज्ञान

असावधानी अथवा लापरवाही के कारण हमारा स्वास्थ्य विगडता है। तथ्य यह है कि स्वस्थ व्यक्ति सिर्फ स्वास्थ्य-विज्ञान के मौलिक सिद्धान्तो पर ध्यान न देने से ही रोग के शिकार हो जाते है। इस असावधानी के कारण वे नौसिखिया वैद्य के पास जाते है तो और भी अधिक बीमारियो के शिकार हो जाते हैं। कुछ दवाई-विक्रेता दिखावटी सुन्दर विज्ञापनो द्वारा इस प्रकार के व्यक्तियो को मुग्ध करके पैसा पैदा करना जानते है। इन दुकानदारो को उन धोखा खाने वाले व्यक्तियो से विषय का अधिक ज्ञान नही होता। ये दवाई बनाने वालो के भर्त्ता होते है। हरेक बुद्धिमान व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि इन दुकानदारो को ऐसा करने से रोके। हरेक क्षेत्र मे ज्ञान रखना काफी अच्छा है लेकिन शरीर-विज्ञान के सम्बन्ध मे यह जानकारी रखने से कि हमे किस तरह स्वस्थ रहना चाहिए, जितना लाभ होता है उतना दूसरे विषयो के ज्ञान से नही होता।

ऐसा कभी नही सोचना चाहिए कि पहले बताया हुआ कृत्रिम एनिमा का प्रयोग रोगों को रोकने एव अच्छा करने का आश्चर्य-जनक इलाज है और यह भी न सोचे कि उसके बाद हमे और किसी भी इलाज की जरूरत नही तथा अन्य स्वास्थ्य सम्बन्धी बातो की उपेक्षा की जाये। यह शरीर हमे अच्छे कार्य करने के लिए दिया गया है, उपेक्षा करने के लिए नही। इसे दैविक धरोहर समझें।

इसका कोई कारण नही कि मनुष्य ८० वर्ष की अवस्था के पहले मर जाये। कई उदाहरणो मे देखा गया है कि शरीर की अच्छी तरह देखभाल करने से मनुष्य और अधिक दिन अर्थात् सौ वर्ष तक जीवित रह सकता है। यह बात सुनने मे हास्यास्पद

लगती है पर है विल्कुल सत्य। एक इजीनीयर से पूछिए कि रेलगाडी को रोज तीव्र गति से चलाया जाए या एकदम वेकार पडी रहने दिया जाए तो वह कितने दिन चलेगी। वह हमसे कहेगा कि जहाँ तक मशीन के काम करने की क्षमता का प्रश्न है, वहुत अधिक और वुरी तरह व्यवहार करने से मशीन नष्ट हो जाएगी। अस्तु, मनुष्य द्वारा वहुत अच्छी तरह वनाई हुई मशीन की तुलना हम मानव-शरीर की सुन्दर और जटिल रचना से नही कर सकते। यदि खराव से खराव मशीन की देखभाल की जाए तो वह थोडा वहुत कार्य कर सकती है। यही वात हमारे शरीर के साथ है जव कि यह तो जीवित यत्र है, जिसमे अपने आप सव अग अपना कार्य सम्पादित करते है। इसके हरेक कण का निर्माण उतनी ही जल्दी हो जाता है जितनी जल्दी वह नष्ट होता है। अगर हम रेलगाडी के सम्वन्ध मे भी वैसा ही करे कि रोज जब मशीन कार्य कर चुकी हो तो उसके द्वारा नष्ट हुई वस्तु को नई वस्तु से उसकी जरूरत के अनुसार वदल दे तो क्या उसका मालिक मशीन को क्षय होने से वचा सकता है ? क्या इस तरह मशीन को वहुत दिन तक ठीक रखने मे वह अपनी सारी शक्ति नही लगा देगे ? निश्चय ही वह पूरी शक्ति लगा देंगे। हमारा शरीर जो ईश्वर ने बनाया है, क्या वह हमारे स्वय के लिए अपने हाथ द्वारा निर्मित वस्तु से कम महत्त्वपूर्ण है ? साधारण बुद्धि का उत्तर 'नही' मे ही होगा लेकिन प्रतिदिन के अनुभव यही दिखायेंगे कि ज्यादा मात्रा मे मनुष्य इस शरीर पर, जो ईश्वर की इच्छा पूर्ति करता है, कम ध्यान देते है तथा जो मशीन हमारी इच्छाओ की पूर्ति करती है उन पर अधिक ध्यान देते है। यदि हम इस शरीर की भली भाँति देख-रेख करे तो कोई कारण नही कि मनुष्य सौ वर्ष या उससे भी अधिक न जीये। इस नूतन समाज की हरेक बात मे उतावलापन या छटपटाना हमारी उम्र को घटाता है लेकिन आज की पीढी के लिए यह बहुत बडी भूल है कि सिर्फ ऊपरी आनन्द के लिए अपनी

और दूसरो की इच्छा पूर्ति करते रहते है। यदि बचपन से ही शरीर की देख-रेख की जाए या इसके सम्बन्ध मे शिक्षा दी जाए तो शीघ्र ही मनुष्य जाति में एक बड़ा परिवर्तन आ जायेगा। अस्वस्थ शरीर रख कर धन के भार से लदे रहने से क्या लाभ ? पूर्ण स्वस्थ शरीर और पैसो से भरी थैली मे मनुष्य किसको अधिक पसन्द करेगा ?

यदि हम और कामो की तरह स्वास्थ्य पर भी वैसे ही ध्यान दे तो शरीर को स्वस्थ रखना आसान है। स्वास्थ्य को बनाए रखने के प्राकृतिक साधन हैं शुद्ध जल, धूप, ताजी हवा, भोजन और व्यायाम। पहले तीन तो प्रकृति माता की मुफ्त देन है अंतिम दो थोड़ी इच्छा शक्ति के प्रयत्न से एव थोडी बुद्धि से प्राप्य है।

पानी–सब साधनो मे पानी सबसे महत्त्वपूर्ण है। पानी सब प्राणियो के जीवन का मूल स्रोत है। पानी पर ही पौधो या जानवरो का जीवन आश्रित है। प्राकृतिक नियम के अनुसार जीवन को बनाए रखने के लिए यह सबसे महत्त्वपूर्ण अश है। जीवित प्राणियो की रचना मे पानी की खपत अधिक मात्रा मे होती है। मानव-शरीर के लिए भी यह सत्य है। कुछ ही मनुष्य यह अनुभव करते हैं कि हमारे शरीर का ७० प्रतिशत अश पानी से बना है, जिससे शरीर स्वच्छ बनता है। पर वास्तव मे यही सत्य है।

इस स्वास्थ्य सम्बन्धी सत्य को मन मे उतार लेना चाहिए क्योकि यह स्वास्थ्य के लिए आवश्यक जल के अनुपात को रखने पर जोर देता है। पानी ही सिर्फ ऐसा पदार्थ है जो जीव-कोष और तन्तु को छिद्रो मे प्रवेश करने की शक्ति बिना किसी बाधा व उत्तेजना के प्रदान करता है। वास्तव मे पानी शरीर के स्थायित्व के लिए अति आवश्यक है। पानी की प्रचुरता या कमी असाधारण अवस्था पैदा कर देती है लेकिन कमी का हो जाना ही साधारणतया देखने मे आता है। पानी ही शरीर मे से

गन्दगियो को निकालने का मुख्य साधन है। इसलिए प्रकृति के नियम के अनुसार स्वास्थ्य के लिए हर व्यक्ति को दो से तीन किलो पानी दिन भर मे पीना चाहिए। निश्चय ही दो किलो से कम नही पीना चाहिए। बताए हुए प्रयोग से बडी आत की सफाई पानी द्वारा करने से काफी मात्रा में पानी उसकी दीवारो द्वारा सोख लिया जाता है और सीधे सचालन मे जाता है जिससे उत्तको (tissues) मे पानी की प्रचुर मात्रा हो जाती है और वृक्क मे अधिक पानी जाकर उसकी सफाई करता है। गर्म पानी "प्राकृतिक मेहतर" के समान है लेकिन इसके गुणो की जानकारी पूरी तरह से नही हुई है। यह प्रधान शक्तिशाली चिकित्सा होते हुए भी इसका व्यवहारिक जीवन मे कोई भी प्रयोग नही करता है।

वैज्ञानिक रसायनिक प्रयोगशाला मे जहरवाद के इलाज के शोध के लिए सघर्ष मे निरत रहते है जबकि गर्म पानी सबसे अच्छी कीटाणुनाशक औषधि होते हुए भी उसकी उपेक्षा की जाती है। यह पूछा जा सकता है कि इसका अधिक उपयोग क्यो नही किया जाता। दरअसल सर्वप्रथम इसके गुणो का ही ज्ञान नही है। दूसरे चिकित्सक इसका मूल्य जानते हुए भी सलाह नही देते क्योकि रोगी दवा ही लेना चाहते हैं, नही तो निराश हो जाते है। अधिकतर लोग सहज और सरल तरीके अपनाने की अपेक्षा रहस्यमयी और दुर्लभ वस्तुओ को पसन्द करना चाहते हैं। अभी तक मनुष्य धार्मिक विश्वासो के कारण धार्मिक, पवित्र चिन्हो-ताबीज आदि के प्रति श्रद्धा रखते आए है जिससे उन्हे विलग करना काफी कठिन है।

गर्म पानी आमाशय को साफ करने मे सहायक है जिससे स्वास्थ्य की रक्षा और खोया हुआ स्वास्थ्य पुन लौट आता है। इसे "कु जल" करने की विधि से व्यवहार करना चाहिए।

इसका सहायता से आमाशय मे अनपचे भोजन के कणो एवं कफ आदि की सफाई हो जाती है। यदि यह अनपचा भोजन

अमाशय में पड़ा रहे तो यह सडता है, और काफी खराबियां पैदा हो जाती है। इसकी यदि प्राय धुलाई करके हम गन्दगी को निकालते रहे एव सफाई के द्वारा गन्दी गैसो को पैदा होने से रोके तो आंत से निकला हुआ पित्त आत मे सडन की क्रिया को अवश्य रोकेगा। अगर भीतर से शरीर स्वच्छ रहे तो वीमारी होना प्रायः असम्भव है। पानी का वाहरी प्रयोग स्वास्थ्य को वनाने के लिए भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना भीतर है। सवसे पहले तो नहाना वहुत जरूरी है।

यह ऐतिहासिक तथ्य है कि ससार के सवसे समृद्ध और उन्नत व्यक्तियो की श्रद्धा स्नान-प्रक्रिया पर रही है, जो त्वचा की सफाई से स्वास्थ्य को वनाने में सहायक है और वीमारियो को दूर भगाता है। रोमन अमीर और गरीब सब के लिए एक सा स्नानघर वनाने के लिए प्रसिद्ध है। रूस मे स्नान करना वादशाह से लेकर गरीव गुलाम के लिए एक सा है। फिनलैंड, लैपलेन्ड, स्वीडेन, नार्वे मे ऐसी कोई झोपडी नही है जहाँ पर पूरा परिवार स्नान न करता हो। यही रीति टर्की, इजिप्ट, फारस मे बडे से बड़े अफसर से लेकर ऊँट के चालक तक के लिए एक समान है। भारत मे स्नान को धार्मिक महत्त्व दिया गया है। गरीब और अमीर सभी नित्य प्रात स्नान करके अपने आपको कृत्य-कृत्य मानते हैं। कहावत प्रसिद्ध है परमात्मा के बाद दूसरा स्थान स्वच्छता को दिया जाता है। हमारी राय मे तो स्वच्छता को सव से प्रथम स्थान मिलना चाहिए क्योकि शरीर और मन से पवित्र हुए विना मनुष्य भगवान के पास बैठने का अधिकारी नही वन पाता।

हम नैतिक दृष्टि से अपने शरीर की सफाई नही करते पर स्वास्थ्य की दृष्टि से करते है। वहुत थोड़े मनुष्य मिलेंगे जो वास्तव मे शरीर से स्वच्छ हैं। सिर्फ ऊपर की सफाई वास्तविक सफाई नही है। अकसर वे मनुष्य जो अपनी सफाई पर गर्व करते हैं सारे दिन की पहनी हुई गजी और जाघिया रात को भी

उसे पहने हुए सो जाते है। अत. बुरी आदत को भी यदि हम सही कहे तो दु ख की बात है। सत्य तो यह है कि सफाई से रहने वाले व्यक्तियो के लिए इससे अधिक और क्या घृणा की बात हो सकती है कि वे अपने शरीर से उन कपडो को लगाए रखे जिनमे निरन्तर शरीर की गन्दगी निकल कर लगी है। जो इसे छोटी सी बात समझते है उन्हे रात को सोने के बाद अपने अन्डरवियर को उलट कर कपडो की रगड से देखने पर पता लगेगा कि सूखी अवस्था मे गन्दे पदार्थ प्रचुर मात्रा मे सक्रामक रोग के कीटाणु लिए हुए जमा है लेकिन उसमे जो गैसीय और तरल पदार्थ होते है वे अन्डरवियर उतारने पर उड जाते है। इस तरह कितने कम व्यक्ति पूर्ण सफाई रखते है।

त्वचा उत्सर्जन-अगो मे महत्त्वपूर्ण अग है। इसके ऊपर असख्य छिद्र होते है जिनकी सफाई रखने की महत्ता अवर्णनीय है। औसत पाठको को इसकी रचना का ज्ञान न होने के कारण पहले हम सक्षेप मे उसका वर्णन करेगे ताकि उसके द्वारा किए गए कार्यो को अच्छी तरह समझा जा सकता है।

त्वचा की दो तहे होती है। चर्म या असली चर्म (derma) और उपचर्म (epidermis)। त्वचा का विशेष गुण स्पर्श की समवेदनशीलता का ज्ञान है। पर चर्म की ऊपरी सतह पर भिन्न-भिन्न ज्ञान-तन्तु होते है जिनके द्वारा बाह्य विषयो का परिज्ञान होता है। चर्म के नीचे कई छोटी-छोटी ग्रथियाँ होती है जैसे स्वेद ग्रथि, तेल ग्रथियाँ और रोम (छोटे-छोटे बाल)। त्वचा की उपयोगिता सबसे अधिक यह है कि इसके जरिए शरीर की सफाई होती है। पसीने के रूप मे बहुत से हानिकारक पदार्थ बाहर निकलते है। चार से मी व्यास के सूक्ष्मदर्शी यत्र से हाथ को देखने से पता लगेगा कि वहाँ का चर्म कई महीन सतहो मे बटा है जिनमे असख्य छिद्र है। यही स्वेद-ग्रन्थियो के मुख है और साधारणत त्वचा के छिद्र (ores of the skin) कहलाते हैं। पसीने की ग्रन्थियो का एक छोर रक्त-वाहिनियो से मिला होता है

और दूसरा चर्म के ऊपरी हिस्से पर खुलता है। इन ग्रन्थियो का कार्य है चर्म की ऊपरी सतह तक नमी (moisture) पहुँचाना। यह तरल पदार्थ रक्त से निकलता है और यह शरीर प्रणालि द्वारा उत्सर्जित पदार्थों से भरा रहता है। इन हानिकारक पदार्थों को अलग करके रोम-छिद्रो द्वारा वाहर निकाल दिया जाता है। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि एक वर्ग इन्च त्वचा मे लगभग ३,८०० छिद्र होते हैं। एक साधारण व्यक्ति की ये ग्रन्थियाँ एक के वाद एक लम्वाई मे रखी जाये तो इनकी कुल लम्वाई दस मील होगी। तेल-ग्रन्थियाँ एक प्रकार का चिकना पदार्थ वनाती है जो चमडे की ऊपरी सतह को चमकदार और मुलायम वनाती है। चूँकि शरीर मे निर्माण और ह्रास की दोनो क्रिया होती रहती हैं और त्वचा वेकार पदार्थों को निकालने का मुख्य रास्ता है, इसलिए इस अंग की सफाई पर अच्छी तरह ध्यान रखना चाहिए। यदि ये वेकार पदार्थ वाहर न निकल पाये तो ये जहर का काम करेंगे और रोग के कीटाणुओ को हमारे शरीर से भोजन प्राप्त होता रहेगा।

कुत्ते पर परीक्षा करके देखा गया है कि अगर उसके शरीर पर वार्निश कर दी जाए तो थोडे ही समय वाद उसकी मृत्यु हो जायेगी। यदि हम अपने को पूर्ण स्वस्थ रखना चाहते हैं तो त्वचा को स्वच्छ रखने का इससे अच्छा और कोई उदाहरण और शिक्षा नही मिलेगी।

इन मीलो लम्वी ग्रन्थियो को स्वाभाविक और स्फूर्तिदायक अवस्था मे रखने के लिए सफाई के मूल नियमो का पालन करना चाहिए। पूरी तरह शरीर को डुवो कर रोज नहाना चाहिए। और यदि यह सम्भव न हो तो अच्छी तरह स्पन्ज करना चाहिए लेकिन यदि दोनो तरीके परिस्थिति के कारण सम्भव न हो तो खुरदरे तौलिये से त्वचा को रगड कर पोछना चाहिए। हम जानते हैं कि अधिकतर मनुष्य कहेगे कि रोज ऐसा करने के लिए उनके पास समय और सुविधा नही है। लेकिन वीमार हो जाने

पर डाक्टरी चिकित्सा के लिए समय देना ही पडता है। शैया सेवन करनी ही पडती है। रोज के कार्यों की तरह परिश्रमी व्यक्ति इसके लिए भी समय निकाल लेते है।

स्नान के लिए कितने ताप के पानी को व्यवहार किया जाय यह पूरी तरह व्यक्ति पर निर्भर करता है कि वह उसको अपनाने मे समर्थ है या नही और पहले से उसका झुकाव उस तरफ है या नही। लेकिन गर्म पानी से नहाने की अपेक्षा हर समय ठडे पानी से नहाना अच्छा है। ठडा पानी अनुकम्पी तत्रिका मडल (sympathetic nervous system) को उत्तेजित करता है जो पौष्टिक भोजन को नियमित करता है। जिन व्यक्तियो की पाचन-क्रिया खराब है वे ठडे पानी से स्नान करने के महत्त्व को जल्दी समझेगे क्योकि शीतल जल मे स्नान करने से पाचन-क्रिया शीघ्रता से होने लगती है। आमाशय की ग्रन्थिया इस उत्तेजना से अधिक हाईड्रोक्लोरिक ऐसिड (hydrochloric acid) बनाती है एव अच्छी किस्म का आमाशयिक रस (gastric juice) तैयार होता है। सिर्फ पाचन ही अच्छी तरह नही होता वरन् कीटाणुओ के आक्रमण भी रुकते है। ठडे पानी का स्नान वाहिका-प्रेरक तत्र (vaso-motor system) को भी उत्तेजित करता है जिसमे रक्त का सचालन नियमित रूप से नस-नाडियों के सिकुडने और विस्तारित होने से होता है। कोशिकाओ की कार्य-क्षमता में वृद्धि करता है। यह त्वचा की ठडक को हटाकर गर्म करता है जिससे त्वचा की सहन करने की शक्ति बढती है। इसीलिए जो व्यक्ति ठडे पानी से नहाते हैं उन्हे जुकाम नही होता। जो व्यक्ति ज्यादा बैठे-बैठे काम करते है उनके लिए ठडे पानी का स्नान अधिक लाभप्रद है लेकिन गर्म पानी का स्नान तीन या चार मिनट पहले करना चाहिए। औरतो के लिए यह खासकर लाभप्रद है क्योकि यह नाडी के लिए स्वास्थ्यवर्द्धक औषधि है और सफलतापूर्वक सब प्रकार की नाडी सम्बन्धी कमजोरी को दूर करता है। सात साल से नीचे के बच्चे ठडे पानी के व्यवहार

को सहन नही कर पाते। इसलिए ७०° फारेनहाइट से नीचे के ताप के पानी का व्यवहार न किया जाए लेकिन वडी उम्र वालों के लिए ताप धीरे-धीरे घटाया जा सकता है। वृद्धावस्था मे ७५° से ८५° फारेनहाइट ताप के पानी को व्यवहार मे लाना चाहिए। स्नान नीचे दिए हुए दिन के तीन समयो मे से किसी एक समय करना चाहिए। उठने के तुरन्त वाद, दस बजे के करीब या सोने के तुरन्त पहले। एकदम सवेरे का स्नान सवसे अच्छा है और यदि ठडे पानी से स्नान किया जाए तो स्वास्थ्य के लिए और भी अच्छा है। सवेरे के स्नान पर जोर दिया जाता है और इस आदत का सवको पालन करना चाहिए। हम नहाने के सम्वन्ध मे निम्नलिखित राय दे रहे हैं।

नहाने के आधा घटे के भीतर भर पेट नही खाना चाहिए। खाने के वाद स्नान करे तो एक से डेढ घटे पहले नही नहाना चाहिए। पसीना आ रहा हो तो उससे मुक्त होने के लिए हम ठडे पानी से नहा सकते है। जव सास तेज चल रही हो या काफी थकान महसूस हो तो तुरन्त नही नहाना चाहिए।

जव शरीर ठडा हो तो ठडे पानी से नही नहाना चाहिए। पहले व्यायाम से शरीर मे गर्मी लाई जाए फिर ठडे पानी से नहाया जाए।

सवसे पहले सिर भिगोना चाहिए, फिर छाती को, यदि फेफडे कमजोर न हो तो, उसके वाद पूरी तरह नहाना चाहिए।

वीमारी की अवस्था मे स्वेद-ग्रथियो की सहायता से सस्थानो की सव गन्दगी निकालने का प्रयत्न करना चाहिए। उस समय गीले कपड़े की पट्टी "वेटशीट पैक" वहुत उपयोगी सिद्ध होती है। इससे छिद्र खुलते है और गन्दगी शरीर के अन्दर से वाहर निकाल फेकी जाती है।

यह ध्यान मे रखना चाहिए कि "वडी आत की धुलाई" गीली पट्टी के व्यवहार के पहले करनी चाहिये। अगर किसी

व्यक्ति को इस विधि से सफाई होने मे सन्देह हो तो निम्न प्रयोग के उदाहरण से समझना चाहिए।

एक व्यक्ति का स्वास्थ्य करीव-करीव ठीक है तथा वह रोज नहाने का आदी नही है। वह सव से अच्छे होटल मे रहता है। रात के भोजन के साथ एक वोतल शराव पीता है, एक गिलास ब्राडी एव कभी-कभी पानी। हर रोज चार से छह सिगरेट पीता है। उसको गीले कपडे की पट्टी मे रख देना चाहिए तथा उसके द्वारा एक या दो घटे गन्दगी सोखने देते रहना चाहिए। पट्टी को निकालने पर दुर्गन्ध आएगी। व्यक्ति का खून व द्रव्य वुरी तरह गन्दा हो जाने पर उसकी सफाई का कार्य शीघ्र होने लगेगा।

यह आवश्यक है कि पट्टी के ताप को उतना ही रखा जाए जितना रोगी मे सहन करने की शक्ति हो। इसको व्यवहार करने का सवसे अच्छा समय खाली पेट प्रात. ७/८ वजे के लगभग है।

दूसरा महत्त्वपूर्ण साधन हैं टब मे स्नान करना तथा गर्म पानी मे पैर रखना (धोना) आदि है। इनके व्यवहार से रक्त-सचालन की रुकावट, पेट की ऐठन, स्नायुओ की सिकुडन, सिर और गले के दर्द मे आराम मिलता है। गर्म जल के सेक से दर्द वाले स्थान मे रक्त-सचरण तीव्र गति से हो जाता है, जिससे ताप उचित स्तर पर आ जाता है और आराम मिलता है। गीली पट्टी भी गर्म और ठडा करने के लिए उतनी ही लाभदायक है।

मानव जाति ने पानी के व्यवहार की सच्ची कीमत नही जानी है। जीव मात्र के लिए जल ईश्वर का अतुलनीय वरदान है। व्यावहारिक दृष्टि के अलावा प्रकृति मे कला व सुन्दरता की दृष्टि से भी जल की वरावरी नही हो सकती। अगाध जल-राशि समुद्र के खेल को ही देखिए। सूर्य की रग-बिरगी किरणों के नीचे कभी शान्त कभी क्षुब्ध समुद्र के वक्षःस्थल पर प्रति क्षण वदलने वाले लहरो के नृत्य को देख कर मन मे स्वाभाविक श्रद्धा

उत्पन्न होती है। सागर से मिलने की तीव्र उत्कठा से दुर्गम पथ मे तीव्र गति से वहती हुई विशाल नदी की अदम्य शक्ति हमे मुग्ध कर देती है। वहुत वडे वर्फ के पारदर्शक टुकडे की चमक की विचित्र शोभा हम मे रोमाच पैदा कर देती है। प्रात कालीन मधुर वेला मे हिलते हुए पत्तो पर चमकते हुए ओस-विन्दु चाँद की रोशनी मे चमकती हुई हीरे की माला के समान लगते है। पहाड पर पानी की तेज धार और छोटी नदी का हल्का वहाव, झरने आदि की सुन्दरता अवर्णनीय है। लेकिन पानी की प्रशसा हम सिर्फ प्राकृतिक सुन्दरता तक ही सीमित नही रखते। जव हमे प्यास लगती है तो कोई दूसरे शर्वत आदि पानी के समान प्यास नही वुझा सकते। प्यास तो पानी से ही वुझती है। वीमारी की अवस्था मे और खास कर वुखार मे इसका मूल्य अवर्णनीय है। सर वाल्टर स्काट ने नारी की प्रशसा मे जो निम्न-लिखित कुछ लाइने लिखी है वे नारी के वदले पानी के सम्वन्ध मे एकदम सत्य उतरती है

"When pain and sickness wring the brow
A health-restoring medium thou"

जव हम जल की प्राकृतिक सुन्दरता और पीने की वस्तुओ मे इतनी प्रशसा और महत्ता वता सकते है तो चिकित्सा की दृष्टि मे दूसरे उपचारो से यह कैसे कम महत्त्वपूर्ण हो सकता है।

शुद्ध वायु–

स्वास्थ्य के दूसरे साधनो मे अव ताजी हवा की महत्ता आती है। हम इसको सवसे महत्त्वपूर्ण कह सकते है क्योंकि मनुष्य विना पानी के कुछ दिन जी सकता है पर विना हवा के तो थोडी देर भी नही जी सकता। मनुष्य के अगो के लिए हवा सबसे अधिक जरूरी है। ताजी हवा होना अच्छा है लेकिन विल्कुल ताजी हवा तो मिलनी ही सम्भव नही है। हवा मे आक्सीजन गैस की महत्ता अधिक है। जव रक्त शिराओ से रक्त-करण फेफडे

मे पहुँचते है तो कार्बनिक ऐसिड गैस से विषैले हो जाते है। लेकिन जब वे आक्सीजन के सम्पर्क मे आते हैं तो वे तुरन्त उनका शोषण करके कार्बनिक ऐसिड को निकाल देते है। आक्सीजन तुरन्त हृदय द्वारा ले लिया जाता है और इस पम्पिग मशीन से धमनियो द्वारा सारे शरीर मे शुद्ध रक्त भेजा जाता है और शरीर मे ताप पैदा होता रहता है।

साधारण मनुष्य के फेफडे मे ६ करोड से ज्यादा वायु-कोष होते है जिनकी ऊपरी सतह का क्षेत्रफल कई हजार वर्गफीट होता है। इन नाजुक ऊत्तको (tissues) की सतह को खराब हवा के सम्पर्क मे रखने से बहुत बुरा परिणाम निश्चित है। चाहे कितना भी पौष्टिक भोजन लिया जाए, चाहे कितनी भी पाचन-क्रिया अच्छी क्यो न हो, रक्त की अशुद्धियाँ बिना स्वच्छ हवा के दूर नही हो सकती।

ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि फेफडे से रक्त प्रति घटे ८०० लीटर की गति से पम्प किया जाता है और उस अवस्था मे ३० लीटर कार्बनिक ऐसिड गैस छोडता है और उतनी बडी मात्रा आक्सीजन की भी ग्रहण करता है।

सोते समय ताजी और स्वच्छ हवा की अधिक आवश्यकता है क्योकि उस समय प्रकृति नए ऊत्तको (tissues) की मरम्मत करने और बनाने मे सबसे ज्यादा व्यस्त रहती है तथा भीतर की अग्नि को जलाए रखने के लिए अधिक आक्सीजन की माग करती है। यदि उसकी मागो को पूरा न किया जाए तथा फिर से बाहर फेके हुए गन्दे पदार्थों को व्यवहार मे लाने को बाध्य किया जाए तो रक्त खराब हुए ऊत्तको (tissues) की मरम्मत करने मे प्रभावहीन हो जाएगा।

स्वर्गीय प्रो० विलार्ड पार्कर ने कक्षा मे डाक्टरी के छात्रों को एक भाषण मे उदाहरण द्वारा बताया कि किस प्रकार एक कमरे की हवा गन्दी हो जाती है। यदि एक कमरा हवा के

वदले ताजे और स्वच्छ पानी से भर दिया जाए तथा उसमे हवा के वदले प्रति मिनट आधा लीटर दूध की वाष्प लगभग २० वार दी जाए तो जो पानी पहले एकदम साफ और पारदर्शक नजर आ रहा था अब वह अस्पष्ट और अपारदर्शक हो जाएगा। दूध पानी मे वहुत शीघ्रता से फैलने लगेगा और हर वार सास लेने से वह तरल और गन्दा हो जाएगा। हम पानी की तरह हवा मे गन्दगी नही देख सकते। अतः इस उदाहरण द्वारा हम पानी के सम्पर्क मे इसका दूषित होना अच्छी तरह देख पाते हैं। यदि कमरे मे दूषित हवा को निकालने और स्वच्छ हवा को आने का रास्ता न मिले तो कुछ क्षणो मे ही शरीर मे विष फैल जायेगा क्योंकि इस तरह हमारे आमाशय मे गदा पदार्थ प्रवेश करेगा। ताजी हवा लेने के लिए खिडकियाँ आदि खुली हैं या नही यह हमे स्वय देखना चाहिए। इस कार्य को सेवको पर नही छोडना चाहिये। हम खाने के सम्वन्ध मे दूसरो पर भरोसा कर सकते है पर श्वास लेने के लिए हवा के सम्वन्ध मे नही।

यह वहुत आश्चर्यजनक वात है कि स्वास्थ्य तथा सफाई सम्वन्धी वातो का ज्ञान होते हुए भी लोग शुद्ध हवा सेवन के सिद्धान्त को वहुत महत्त्व नही देते और इसकी महत्ता भी नही समझते। संवातन (वेन्टीलेशन) को हम विस्तृत रूप मे वैज्ञानिक अर्थ मे नही लेते, वलिक पर्याप्त मात्रा मे वडे हाल आदि मे हवा का पूर्ण रूप से प्रवेश होना चाहिये। यह खेद का विषय है कि प्रसिद्ध मकान शिल्पी भी इस कमी की ओर ध्यान नही देते। एयरकन्डीशन के युग मे मकान मे खिडकियाँ वहुत कम रखी जाती है। उदाहरण के तौर पर कितने घर के लोग सोने वाले कमरे मे खिडकियाँ खोलकर सोते है। वे सवेरे कुछ ही देर खिडकियो को खोलते है और सतोष कर बैठते हैं कि इकट्ठी हुई कार्वन डाइआक्साइड और स्वास्थ्य के हानिकारक पदार्थों को वाहर निकलने के लिए इतना समय पर्याप्त है। तव यह आश्चर्य-जनक नही है कि ऐसी अवस्थाओ मे रहने वाले व्यक्ति किसी न किसी रोग के शिकार हुए रहते है। सोने के कमरे मे विस्तर

कमरे के बीच मे होना चाहिये, कभी भी दीवार के पास नही होना चाहिए। हवा की लहरें बिस्तर पर आनी चाहिएँ पर हवा का झोका नही। खिडकी खुली रखनी चाहिए। यदि मौसम या अन्य कारण से खिडकियाँ सिर्फ थोडे समय के लिये खोली जा सकती है तो भी अच्छा है जिससे गन्दी हवा की जगह ताजी हवा शीघ्रता से प्रवेश कर सके। जितनी देर सोया जाए उतनी देर ताजी हवा के महत्त्व को समझना चाहिए। कितनी भी अच्छी तरह खाना हजम क्यो न हो, अगर रक्त को ताजी हवा न मिले तो अच्छे खाने का कोई प्रभाव नही होगा। जिस प्रकार दूसरे का झूठा जल सेवन करने मे हर व्यक्ति को हिचक होती है उसी प्रकार दूसरो के श्वास द्वारा ली हुई हवा का व्यवहार करना बिल्कुल आपत्तिजनक है। सवातन (वेन्टीलेशन) की इससे अधिक और महत्ता बताना निरर्थक है।

हवा के झोको मे जब तक नीद मे सो न जाए ठडी हवा को आने देना चाहिए और बचाव के लिए अधिक कपड़े ओढ लेने चाहिये।

आक्सीजन शरीर के ताप को सामान्य रखता है। जिस कमरे मे ताजी हवा आती है वहाँ हमारा शरीर गर्म रहता है उस कमरे की अपेक्षा जहाँ गन्दी हवा है।

रोगी-गृह मे ताजी हवा का आना बहुत आवश्यक है। सिर्फ रोगी के लिए ही नही पर रोगी को देखने वालो के लिए भी यह आवश्यक है, अन्यथा वे व्यक्ति गन्दी हवा मे सास लेने से बीमार पड सकते हैं।

प्रकाश—

तीसरा महत्त्वपूर्ण स्वाभाविक साधन "प्रकाश" है। सूर्य का प्रकाश ही सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है।

प्रकाश जीवन के लिए आवश्यक है। यदि किसी भयकर उथल-पुथल से सूर्य समाप्त हो जाए तो उससे कितनी भयानक

दुर्दशा उत्पन्न होगी यह बताना असम्भव है। इस भयकर विपत्ति मे बहुत थोडे ही समय मे सारी पृथ्वी समाप्त हो जायेगी। हम फिर दोहरायेगे कि प्रकाश जिन्दा रहने के लिए आवश्यक है जो जीने के लिए बिना मूल्य प्राप्त होता है। इसका हमे हर समय खुले दिल से स्वागत करना उचित है। सूर्य की किरणे प्राणि-मात्र के लिए जीवन दायी हैं। वायु और जल की तरह सूर्य का प्रकाश भी सुडौल व बलिष्ठ स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है। जब भी अवसर मिले, इसका पूरा आनन्द-लाभ करे। सूर्य-प्रकाश के समान कोई टानिक नही है, कोई स्फूर्तिदायक पदार्थ नही है। हर सम्भव अवसर पर सूर्य-प्रकाश मे स्वच्छन्द भ्रमण करे। यह स्वास्थ्य की अनुपम जडी है जो प्रकृति ने हर जीवधारी के लिए बिना मूल्य के, बिना पैसे के बडी उदारता से प्रदान की है। अगर आप स्वास्थ्य-निर्माण मे सजग है तो प्रकृति के इस उपहार को कृतज्ञता-पूर्वक ग्रहण कीजिए।

घर मे सूर्य के प्रकाश के आने से न झिझके। विशेषकर प्रात कालीन रवि-रश्मियो को अपने घरो मे आने दे। यहाँ यह कहने का उद्देश्य नही है कि हर समय हर खिडकी से आपके कमरे मे धूप प्रवेश करनी ही चाहिए जिससे स्वाभाविक कार्यकलापो मे बाधा उत्पन्न हो। प्रत्येक वस्तु मे निश्चित समय तक ही आनन्द की सीमा होती है। सूर्य के प्रकाश के बहुत से गुण हैं जिससे बहुत से व्यक्ति अपरिचित है। इसका कीटाणुनाशक प्रभाव ही पहले समझ लेना चाहिए लेकिन स्वास्थ्य की दृष्टि से इसे कमरे के हर कोने मे प्रवेश करने देना चाहिए।

यह बहुत आश्चर्य की बात है कि बहुत कम व्यक्ति स्वास्थ्य की दृष्टि से सूर्य की किरणो का महत्त्व जानते हैं। हमे पशुओ के उदाहरण से इसकी शिक्षा लेनी चाहिए जो धूप-स्नान के अवसर को कभी नही चूकते। मनुष्य जब जगली अवस्था मे था तो इन जानवरो के इस उदाहरण का अनुसरण करता था। मनुष्य ने समझदार होने पर इस प्रवृत्ति को बहुत अशो मे भुला दिया

श्रौर एयरकन्डीशन के इस युग मे धूप-दर्शन सभ्यता की दृष्टि से असगत समझा जाता है।

सूर्य के ताप का प्रभाव सिर्फ उष्मा पैदा करना ही नही है शरीर की गरमी बनाए रखना ही नही है। इसकी किरणे रासायनिक व बिजली का कार्य करती है। एक समझदार चिकित्सक ने इसकी व्याख्या की है कि सूर्य की किरणे भीतर के ऊत्तको मे कम्पन एव करणो की अदला-बदली विजली की अपेक्षा अधिक मात्रा मे करते है। बहुत से लोग अनुभव द्वारा जान गये है कि थकान के कारण दर्द, वातशूल और ऊत्तेजनात्मक (ताप उत्पन्न करने वाला) दर्द दवा की अपेक्षा सूर्य के प्रकाश से अधिक जल्दी ठीक हो जाते है।

जिनके मुँह मे दर्द हो उन्हे धूपवाली खिडकी मे बैठकर अपने गालो को सेक देकर अनुभव करना चाहिए कि धूप कितनी लाभकारी है।

नाडी की दुर्बलता और अनिद्रा का उपचार धूप मे होता है। विस्तर को खिडकी के पास रखकर रोगी को काफी देर तक धूप मे लेटे रहने देना चाहिए। धूप के समान दूसरी कोई भी स्वास्थ्यवर्द्धक औषधि नही है किन्तु निराशा एव अविश्वास की अवस्था मे धूप मे बैठने से इसका अच्छा असर नही पडता। सुस्त-हाथ, पक्षाघात व गठिया वात के अग, नाडी की उदासीनता मे तेजी लाने का सबसे अच्छा उपचार यही है कि उस अग या व्यक्ति को दिन मे जितना अधिक हो सके धूप स्नान करना चाहिए। कमजोर फेफडे के लिए छाती पर धूप पडने देनी चाहिए। अन्दर की गिल्टी या घाव के बारे मे सन्देह हो तो धूप को उस विन्दु पर सीधे खुली त्वचा पर घटो पडने देना चाहिए। इस वात को जान लेना चाहिए कि सूर्य की रासायनिक किरणों मे स्वास्थ्य-लाभ कराने की अद्भुत शक्ति होती है।

सर्दी के कारण हाथो का नीला पडना और रग खराब हो जाना धूप से ठीक किया जा सकता है।

धूप शराब और मालिश से भी अधिक उत्तेजना पैदा करती है। धूप के आधार पर हम प्राकृतिक चिकित्सा के माध्यम से वहुत से रोगो की चिकित्सा करने के प्रयोगो मे सफल हुए है।

कुछ साल पहले लदन मे एक सर्जन ने धूप से एक महिला के मुँह पर शराब के धव्वो को ठीक किया था और उसकी अनिष्टकारी वृद्धि को रोका था।

सान फ्रासिसको के डाक्टर थ्रेयर का कहना है कि चौथाई शताब्दी के अपनाये गए प्रयोगो से मैंने यह जाना कि सूर्य के ताप के समान जलाने वाली या दागने की क्रिया के लाभ की तुलना और किसी उपचार से नही हो सकती। नाजुक ऊत्तको को जलाने का कार्य धूप से वहुत सुरक्षापूर्ण और सौम्यता से किया जा सकता है जव कि दूसरे किसी उपाय से इतने धीरे-धीरे नही किया जा सकता। उत्तेजना इतनी धीरे-धीरे और कम समय मे हो जाती है कि लेंस को हटाने पर दर्द तुरन्त दव जाता है। सूर्य की किरणो की रासायनिक शक्ति का अभी तक वर्णन नही किया गया है।

महिलाओ को नीरोग और युवा वनाने के लिए धूप के प्रयोग की परीक्षा करते रहना चाहिए। जो महिला अपने गालो को गुलाल की तरह लाल करना चाहती हैं उन्हे अपना सौफा खिडकी के पास खीचकर धूप मे वैठ जाना चाहिये। पहले एक गाल पर फिर दूसरे गाल पर धूप पडने देनी चाहिये। फिर उनके गाल का रंग इस प्रकार का हो जाएगा कि पानी मे नही धुलेगा।

हमने देखा कि सूर्य का प्रकाश स्वस्थ व अच्छा करने के गुण मे वहुत अधिक महत्त्वपूर्ण है। पर वीमारी के उदाहरण मे इसका लाभ सिर्फ न्यूनता-पूरक है। पहले हमे अपनी प्राक्रियाओ की सफाई "वडी आत की सफाई" द्वारा करनी चाहिए फिर स्वास्थ्य सुधार की नीव ताजी हवा, सूर्य के प्रकाश पर निर्भर करती है। तव हमारा स्वास्थ्य पुन बनता है।

सब तत्त्वो का मूल्य समान है। पर अकेला उपाय किसी को भी रोग से मुक्त करने मे अपर्याप्त है और एक साथ तीनो उपाय मिलकर शक्तिशाली त्रिमूर्ति बनाते है, जिनके सामने रोग नही टिक सकता।

दूसरे और दो महत्त्वपूर्ण उपाय स्वास्थ्य को बनाने मे सहायक है वे है–व्यायाम और भोजन, जिनका विवरण हम अगले अध्याय मे करेंगे।

छठा भाग

हमारा आहार

पहले बताया जा चुका है कि मानव प्रक्रिया मे हमेशा परिवर्तन होता रहता है। हर क्षण जीवन मे उत्तको (tissues) का विश्लेपण होता रहता है और स्वास्थ्य की रक्षा वेकार पदार्थों के ठीक प्रकार से उत्सर्जन होने से होती है। प्रतिदिन जीवन शक्ति घटने से जिन उत्तकों का क्षय होता है उनके वदले अच्छे भोजन से नये उत्तकों का निर्माण होता है। अत. प्रत्येक व्यक्ति के लिये भोजन के प्रश्न पर युक्ति पूर्वक विचार करना वहुत महत्त्व-पूर्ण हो जाता है। वर्तमान युग की की वढती हुई समृद्धि एवं विलासमय जीवन मे मनुष्य खाने का लालच वढाकर धोखा खा रहा है। पुराने जमाने मे मनुष्य को जीने के लिये कठोर परिश्रम करना पडता था, उसका भोजन सदा सीधा-साधा, सरल, विलासिता से दूर, उसके इर्द-गिर्द ही उपलब्ध था। लेकिन आज तीव्रगामी यातायात के साधनो की सुगमता के कारण सिर्फ जवान के स्वाद को उत्तेजक करने के लिए मनुष्य विभिन्न सुस्वाद खाद्य सामग्री की तलाश मे धरती के कौने-कौने को छान रहा है जितनी सुगमता से आज धरती के हर कौने से भोजन उपलब्ध है उससे भोजन के विभिन्न व्यजनो को चुनने मे उसे प्रलोभन मिला है। परिणामत खाद्य पदार्थो की वानगियाँ वढ जाने से लाभ के स्थान पर खरावियाँ अधिक पैदा हुई है। अधिक खाने का दुर्व्यसन पहले भी था पर वर्तमान समय मे व्यजनो की इतनी अधिकता हो गई है कि उससे स्वास्थ्य लाभ के वदले खराबियाँ ज्यादा वढी है। आज के पाक शास्त्रियो ने भी अपनी पाक वनाने की दोषपूर्ण पद्धति द्वारा मनुष्य का अहित किया है।

ऐसा सोचना वहुत बडी भूल है कि स्वस्थ और शक्तिशाली वनने के लिये ज्यादा खाने की आवश्यकता है। हमारी प्रक्रिया को सिर्फ पर्याप्त मात्रा मे भोजन का पुष्टिकर तत्त्व चाहिए जो

नष्ट हुए उत्तको (tissues) की मरम्मत व उनके बदले नये उत्तको का निर्माण कर सके। इनके अलावा पाचन प्रणाली में पाचक द्रव्य (digestive fluids) अनिश्चित मात्रा मे नही निकलते बल्कि आवश्यकतानुसार ही निकलते है। अतः अत्यधिक मात्रा मे किये गये भोजन का कुछ ही हिस्सा हजम हो पाता है और बाकी विजातीय द्रव्य का कार्य करता है जो विष के समान दैहिक प्रक्रिया को अनावश्यक पदार्थो के हटाने मे बाधक होता है।

पाचन प्रक्रिया को आहार की आवश्यकता है। इसकी स्वाभाविक सूचना क्षुधा द्वारा ज्ञात होती है। भूख हमे बताती है कि कितना भोजन हमे नष्ट हुई क्षति की पूर्ति के लिये चाहिये। हमे भोजन लेने मे कभी भी नियम के बाहर नही जाना चाहिये। क्षुधा प्राकृतिक आवश्यकता है। खाने मे लोलुपता अपमानजनक आदत है। बहुत से व्यक्ति लोलुपता की इस आदत को यह कह कर मान्यता देना चाहते है कि उन्हे "अच्छी भूख का आशीर्वाद मिला है।" लेकिन वास्तव मे खाने का यह लोभ ठीक नही है। इसके अतिरिक्त यदि व्यक्ति भोजन करते समय क्रोध करे तो हजम करने की शक्ति कम हो जाती है। भूख को हमे हर तरह से शान्त करना चाहिये पर खाने के लालच के कभी वृद्धि नही होनी चाहिये। "जीने के लिए खाओ" ऐसा कहने की जगह बहुत से व्यक्ति "खाने के लिये जिओ" कहते हैं। लेकिन जल्दी या कुछ समय बाद मे अल्प आहार के इस प्रधान नियम के उल्लघन के अपराध का प्रकृति दण्ड दे देती है। जिस पेट पर अत्याचार हुआ है वह पेट ठीक नही रहेगा। जब प्रतिक्रिया होगी तो यही अनुभव होगा कि "जैसा बोया, वैसा पाया।"

लेकिन मनुष्य आमाशय पर प्रायः अत्याचार करते रहते है। लोलुपता के कारण नही बल्कि आदत के कारण। लोग बिना भोजन चबाये निगल जाते है। चबाने का उनके पास समय कहाँ। कुछ लोग ऐसे है जिनका हरदम मुँह चलता रहता है। जब तक

यह गलत अभ्यास चलता रहेगा, खाने को पचाने के लिये पर्याप्त समय नही दिया जायेगा, तब तक हमारे पेट को कष्ट सहना पडेगा। लोगो मे अजीर्ण का रोग अक्सर देखने मे आता है क्योकि वे हर समय जल्दी मे होते है। यदि हम धन बटोरने के लोभ मे पडकर अपनी स्वास्थ्य-निधि को खो बैठते है तो यह निरा अज्ञान है। लेकिन यह सत्य है कि अधिकांश लोग हर व्यवसाय मे धन के लालच मे पड जाते हैं और यह ध्यान नही देते कि इस से उनके स्वास्थ्य का कितना नुकसान होता जा रहा है।

जो मनुष्य पैसा बटोरने की इस लत मे पड़ गये है, उन्हे यह आदत स्वास्थ्य खराब होने के पहले छोड देनी चाहिये।

हमे क्या खाना चाहिये, कब खाना चाहिये, कैसे खाना चाहिये ये प्रश्न स्वास्थ्य और सुख से जुडे हुए है। उन पर थोडा प्रकाश डालना आवश्यक है।

हमें क्या खाना चाहिये ?

यहाँ पर हम भोजन के प्रश्न को ठीक प्रकार से समझने का प्रयत्न करेंगे। सबसे पहले यह जानना जरूरी है कि वृद्धावस्था मे शारीरिक निर्बलता का क्या कारण है। हम सब परिचित है कि वृद्ध शरीर मे झुरियाँ पडना, अगो का सिकुडना, जोड़ो में कडापन आदि शिकायते विशेषरूप से देखी जाती है। हम इस बाहरी निर्बलता के लक्षणो को देखने के अभ्यस्त हो गये हैं कि लोग यह नही पूछेगे कि क्या ऐसा होना स्वाभाविक है ? नि सन्देह प्रकृति नियमानुसार यह स्वाभाविक प्रभाव है। यदि मनुष्य प्रकृति से सामजस्य रखे तो ये चिन्ह ६० या १०० वर्ष के पहले नही दिखाई दे सकते।

वृद्धावस्था का अर्थ सिर्फ शरीर का कडा बनना है अर्थात् इस उम्र मे उत्तको (tissues) ठोस बन जाते है। इसका कारण पार्थिव वस्तुओ का शरीर मे लगातार जमा होना है।

इन पार्थिव वस्तुओ के जमा होने का परिणाम यह होता है कि हड्डियो के उत्तको मे धातु पदार्थ की अधिकता हो जाती है जिससे

वे कमजोर हो जाती है इसी कारण बडी उम्र मे थोडी असावधानी होने से हड्डी टूटने का भय रहता है। ये पदार्थ छोटे बडे रक्त पात्रो (blood-vessels)की रचना मे भी परिवर्तन कर देते हैं। उनकी दीवारो को मोटी कर देते है जिससे उनकी ग्रहण क्षमता कम हो जाती है तथा जल्दी टूटने की आशका रहती है। क्षमता घट जाने के कारण रक्त-पात्र आवश्यक पुष्टिकर तत्व ऊत्तको तक पहुँचाने मे असमर्थ हो जाते है जिससे जीवन शक्ति कम हो जाती है। बारीक नाडियाँ त्वचा को आहार नही पहुँचा पाती जिससे त्वचा की लचक घट जाती है और उसका रग खराब हो जाता है, त्वचा पीली पड जाती है और उसमे झुर्रियाँ पड जाती है। रक्त सचालन धीमा हो जाने से ये पार्थिव वस्तुएँ विभिन्न जोडो, मॉसपेशियो मे इकट्ठी हो जाती है जिससे उम्र के साथ जोडो मे कडा पन और पेशियो मे दर्द बढता है। मस्तिष्क मे एव नस नाडियो मे रक्त की आपूर्ति नही हो पाती। इन सब पदार्थो की कमी से ये सब अग नष्ट होने लगते है और उनके कार्य शिथिल पडने लगते है। इसी कारण मानसिक कार्यशीलता और सवेदनशीलता कम हो जाती है। जैसे जैसे यह कार्य प्रणाली होती है बारीक नलिकाएँ नष्ट हो जाती हैं। जिससे बडे रक्त पात्र बहुत मोटे हो जाते है और उनकी द्रव्य सामने की क्षमता क्षीण हो जाती है। तब मृत्यु हो जाती है।

अगर वृद्धावस्था का कारण ऊपर दिये गये विवरण के अनुमार है तो तर्क के अनुसार यह परिणाम निकलता है कि यदि हम इन पदार्थों को शारीरिक प्रक्रिया मे प्रवेश करने से रोक सके तो जीवन का समय और अधिक बढ सकता है, शरीर सस्थानो की सुरक्षा अधिक समय तक हो सकती है और बुढापे के लक्षण देरी से आ सकते है।

फल कई अद्भुत कारणो से आदर्श भोजन है। इनमे पार्थिव वस्तुएँ कम हैं। इनमे ७० प्रतिशत एकदम स्वच्छ छाना हुआ पानी रहता है जो प्रकृति की प्रयोगशाला मे छाना गया है।

छाना हुआ पानी अव्वल दर्जे का घोलक है जो रक्त मे शीघ्र ही शोषित हो जाता है। अन्त मे हम देखते है कि फल का स्टार्च सूर्य की क्रियाशीलता से गुलुकोज मे बदल जाता है और पचाने मे सुगम हो जाता है। पौष्टिक दृष्टि से फलो को हम इस प्रकार से क्रम मे रख सकते है खजूर, अजीर, केला, जामुन, सेव, अगूर।

पाव रोटी आजकल जिन्दगी का आधार बन गया है। यद्यपि अधिकतर लोग भोजन का इसे प्रधान अग समझते है फिर भी हम इसे भोजन के योग्य पदार्थ नही समझेगे। हमने देखा कि अनाज मे खनिज लवणो की मात्रा बहुत अधिक रहती है। गेहूँ मे इसकी मात्रा तो बहुत ही अधिक होती है, और इसका कारण उसमे स्टार्च की मात्रा अधिक होती है। अब प्रक्रिया में इसको अपनाने के पहले स्टार्च को ग्लूकोज मे बदल लेना पडता है। विस्तृत प्रयोगो से देखा गया कि चार प्रतिशत से अधिक स्टार्च लार मे उपस्थित टिलीन (Telin) के द्वारा ग्लूकोज मे परिणित नही होता है। ऐसा स्टार्च पक्वाशय मे चला जाता है और आमाशय मे रस की उस पर कोई क्रिया नही होती।

अब यह आवश्यक और अधिक काम पक्वाशय को करना पडता है जिसमे पाचन क्रिया व पाचक रसो की मिलावट होने मे देर लगती है। अत आंतो मे निष्क्रियता का दोष उत्पन्न हो जाता है तथा कब्जियत होने लगती है क्योंकि स्टार्च वाले भोजन का पुष्टिकर तत्व जब देर मे निकालता है तो साथ के बेकार पदार्थ भी नही हटाये जा सकते। इसके विपरीत फल गर्मी पैदा करने मे उतने ही लाभाकारी है जितने अनाज। फलो द्वारा स्टार्च को ग्लूकोज मे बदल देने की प्रक्रिया के कारण सस्थान ठीक प्रकार से कार्य कर सकते है और पुष्टिकर तत्वो का पोषण व बेकार पदार्थो को हटाना ठीक प्रकार से हो सकता है। यहाँ पर फलो की परिमान मे मृदु क्रिया ही बताई है जब कि वे रसायन कार्य भी करते हैं। ऊपर बताये हुए कारण के अनुसार पावरोटी को थोडा ही सैक कर नही बल्कि अच्छी तरह सैक कर खाना

चाहिये। जिससे स्टार्च के ग्लूकोज मे परिणत होने की पहली अवस्था पार हो सके।

मैदा और गेहूँ के आटे की पाव रोटी पचाने की शक्ति के वारे मे विभिन्न राय है। इगलैड के डॉ० जॉन, वी० कापाक की "हैराल्ड ऑफ हैल्थ" नामक पुस्तक मे विभिन्न प्रयोगो मे यह वताया गया है कि अगर समान रूप से १०० आउन्स रोटी ली जाय तो उसका चतुर्थ भाग मैदा की पाव रोटी की अपेक्षा गेहूँ के आटे की पाव रोटी हजम करने मे अधिक सुगम होगी लेकिन प्रोटीन वाला हिस्सा (जो मास पेशियो और ऊत्तक वनने मे सहायता करते है।) कम रूप से हजम होता है। गेहूँ के आटे की रोटी मे पौष्टिक तत्व अधिक मिलता है। अत हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि पाव रोटी का जितना भारी प्रचलन है उतनी वह उपयोगी नही है।

प्रकृति ने वताया कि मनुष्य के भोजन के पौष्टिक तत्वो मे एलबुमैन (albumen) विशेपकर सब्जियो का प्रधान है। अतएव फलो की सफेदी पूर्ण भोजन का कार्य करती है।

मूँगफली एव वादाम भोजन की वहुत अच्छी वस्तु है। इनमे वहुत मात्रा मे प्रोटीन होता है और वसा (Fat) भी अधिक मात्रा मे होता है। दोनो ही चीजे एक दम पवित्र एव स्वच्छ अवस्था मे होती है। लेकिन स्टार्च की कमी होती है। जो यह सोचते हैं कि मास के बिना नही रहा जा सकता उनके लिये घी मूँगफली एव वादाम वहुत अच्छा है। इस वात पर ध्यान रखना चाहिये कि उन्हे खूव अच्छी तरह चबा कर खाया जाये। पौष्टिक मूल्य मे अखरोट भी वहुत लाभकारी है।

हम सभी प्रकार के बाजार मे विकने वाले तैयार भोजन सार सामग्री (concentrated food) के पक्ष मे नही है। क्योकि वे पाचन क्रियाओ को पूरी तरह व्यायाम नही करने देती। ये वस्तुएँ उन्हे चवाने का पर्याप्त मौका नही देती और भोजन मे लार रस ठीक तरह से नही मिल पाता। हमारी प्राकृतिक

क्रिया को कुछ खाने को चाहिये ताकि पाचन संस्थानो को कार्य करने को मिले। यह मांस पेशियो का प्राकृतिक स्वभाव है कि यदि व्यायाम किया जाये तो वे बढेगी। अत: आमाशय और आँत की मांसपेशियाँ भी इसी तरह उत्तेजित होगी। आँत मे कुछ खाना रहना आवश्यक है ताकि उसके यन्त्रो को उत्तेजित हो-कर स्वतन्त्र रूप से गति करने का मौका मिल सके। गेहूँ के आटे की रोटी सफेद मैदा की रोटी अच्छी होने का एक कारण यह भी है कि गेहूँ के आटे की पाव रोटी मे चोखर होने के कारण आँतों की क्रिया मे उत्तेजना लाती है और साथ ही अवशिष्ट को हटाने में भी सहायक होती है।

आगे बढने के पहले इस सूची की ओर ध्यान आकर्षित करेंगे जिससे भोजन के पौष्टिक तत्वो का पता चलता है और क्या उनके कार्य हैं।

भोजन के पोषक तत्वो को मुख्यत. ७ भागों मे विभाजित किया जा सकता है वे हैं:–

१. प्रोटीन
२ वसा या चर्बी
३ कार्बोहाइड्रेट या स्टार्च
४ फोक
५ जल
६ खनिज लवण
७ विटामिन और कैरोटीन

ये सातो प्राय: सभी प्रकार खाद्य पदार्थों मे किसी में कोई तत्व कम और किसी मे कोई तत्व ज्यादा रहते हैं। प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकतानुसार उसके सागोपाग पोषण के लिये उसके आहार मे ये आवश्यक तत्व पहुँच जाने चाहिये। इन्ही तत्वो

की कमी से व्यक्ति बीमार पड जाता है। सतुलित आहार का जिसमे भोजन के सभी तत्व उचित मात्रा मे विद्यमान हो, बहुत अधिक महत्व है क्योकि ये हमारे स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिये अत्यन्त उपयोगी है। अब इन तत्वो के विषय मे कुछ विस्तार से वर्णन करना आवश्यक है–

१. प्रोटीन

प्रोटीन शरीर के ठोस उत्तको, मासपेशियो और पुट्ठो को बनाता है। यह मस्तिष्क के लिए पुष्टिकर तत्त्व एव नस-नाडियो के लिए ऐसा पदार्थ है जो इन्धन का कार्य करता है।

प्रोटीन की मात्रा एक जवान के लिये प्रति दिन आधा पाव काफी है।

इस तत्व का मुख्य कार्य शरीर मे मास और झिल्लिया बनाना है सभी शारीरिक यन्त्रो की क्षतिपूर्ति और पुष्टि प्रधानत प्रोटीन से होती है। प्रोटीन हमारे शरीर के असख्य कीटाणुओ क्या मूलाधार है।

प्रोटीन की दो मुख्य किस्मे होती है प्राणिज–जैसे दूध आदि म पाया जाने वाला प्रोटीन तथा वनस्पति वर्गीय जैसे दालो आदि मे पाया जाने वाला प्रोटीन। प्राणिज प्रोटीन से वनस्पतियो मे पाया जाने वाला प्रोटीन उत्तम है।

प्रोटीन द्वीदल अन्नो जैसे चना, मटर, मूँग, अरहर, तिल, तथा सोयाबीन आदि मे अधिक अन्य खाद्य पदार्थो मे जैसे साग, सब्जी, फल, मेवा, दूध की चीजे तथा गेहुँ चावल आदि मे कम पाया जाता है।

बच्चो की बाढ एव गर्भवती स्त्रियो के लिए प्रोटीन वाले खाद्य पदार्थों की अधिक आवश्यकता होती है। इसी प्रकार दुबले पतले और कम वजन वाले प्रोटीन वाले आहार का अधिक सेवन कर मोटे और वजनदार हो सकते है।

जिस प्रकार प्रोटीन की कमी से शरीर की हानि होती है, उसी प्रकार इस तत्व के अधिक सेवन से भी शरीर की क्षति होती है। उदाहरणार्थ इसकी अधिकता से यकृत और गुर्दे कमजोर हो जाते है और आयु कम हो जाती है। इसलिये ४० वर्ष से अधिक आयु वालो को इस तत्व की कम जरूरत होती है, क्योंकि उनके शरीर की वाढ खत्म हो चुकी होती है। वूढे लोग कम प्रोटीन लेकर वृद्धावस्था मे अपने स्वास्थ्य को अक्षुण्य वनाये रख सकते है। वुढापे के रोग से वचे रह सकते है और लम्वी आयु पा सकते हैं।

२. कार्वोहाइड्रेट

कार्वोहाइड्रेट शरीर मे उस इन्धन का कार्य करता है जिसमें अधिक मात्रा मे कार्वन रहता है और शीघ्र ही आक्सिजन के साथ मिल जाता है।

कार्वोहाइड्रेट दो प्रकार के माने जाते है. जिन खाद्य पदार्थों मे शर्करा की मात्रा अधिक होती है वे शर्करा प्रधान होते हैं जैसे चीनी, गुड, मधु आदि जिन पदार्थो मे श्वेतक्षार की अधिकता होती है वे श्वतेसार प्रधान होते हैं, जैसे आलू, गेहूँ, चावल, जौ, वाजरा, ज्वार, शकरकन्द आदि इससे चर्वी भी वनती है। जो लोग ये पदार्थ अधिक खाते है, वे मोटे हो जाते है। इसके अतिरिक्त अधिक शर्करा के सेवन करने से शरीर मे अधिक ताप की उत्पत्ति होती है, जो शरीर के लिये आवश्यक सिद्ध होती है, शरीर मे इस तत्व की अधिकता से क्लोमग्रन्थि, यकृत और गुर्दे सव वेकार हो जाते है और व्यक्ति को भयानक मधुमेह रोग का शिकार होना पड सकता है। श्वेतक्षार प्रधान खाद्य भी शरीर के भीतर जाकर पाचन प्रणाली की क्रियाओ के अन्त मे शर्करा का ही रूप धारण कर लेते हैं।

सभी श्वेतक्षारीय पदार्थ अम्ल प्रधान होते है. अत इनका अधिक सेवन रक्त के क्षारत्व को कम करके शरीर मे रोग पैदा

कर देता है। इसलिये भात रोटी श्वेतक्षारीय खाद्यो के साथ हरी साग सब्जी कच्ची व पकी हुई अधिक परिमाण मे खाना नितान्त आवश्यक है। अन्यथा कब्ज होने की विशेप सम्भावना रहती है, जो सभी रोगो की जड है।

एक साधारण आदमी के लिये प्रति दिन आधा सेर कार्वोहाइड्रेट वाले खाद्य पदार्थों की जरूरत है।

३. चर्बी (वसा)

वसा चर्बीदार उत्तको को वनाता है और शरीर की गर्मी को वनाये रखने के लिए दहन व आक्सिडेशन की क्रिया से ईंधन का काम करता है।

शरीर की चिकनाई या स्निग्धता पहुँचाने के कार्य चर्बी प्रधान खाद्य पदार्थो से प्राप्त होता है। वसा दो प्रकार की होती है

(१) प्राणी जन्य वसा जैसे दूध, दही, मक्खन, घी, पनीर, माँस, मछली, अण्डा आदि।

(२) वनस्पति जन्य वसा जैसे सोयाबीन, तिल, सरसो मूँग-फली, जैतून, नारियल की गरी, मेवे आदि।

इस तत्व से शरीर को ताप और शक्ति मिलती है। शरीर सुन्दर, सुडौल और चिकना वनता है। शारीरिक परिश्रम करने वाले व्यक्ति को चर्बी वाले पदार्थो का सेवन करने की अधिक आवश्यकता होती है। प्राणीजन्य चर्बी की अपेक्षा वनस्पति चर्बी अधिक सुपाच्य होती है।

चर्बी प्रधान पदार्थों को अधिक सेवन करना भी हानिकारक है और शरीर मोटा, भद्दा, वेडौल और निर्बल हो जाता है।

४. फोक

खाद्य पदार्थों की नसे और ऊपर के छिल्के फोक कहलाती है। अधिकतर लोग इसे व्यर्थ ही साफ कर फैंक दिया करते है। इन्हे भी खाद्य पदार्थों के साथ साथ खाये विना खाद्य वस्तुओ के खाने का पूरा पूरा लाभ नही मिल सकता। चावल का फोक उसका कण, गेहूँ का उर्स उसका चोकर तथा साग सब्जियो का ऊपरी खुजला और ऊपरी छिलका है। इस तत्त्व का महत्त्व विख्यात विटामिनो से किसी भी हालत मे कम नही है। यह सत्य है कि फोक शरीर मे जाकर स्वय नही पचता, परन्तु इस तत्त्व के विना हमारा खाया हुआ भोजन सरलता के साथ पच नही सकता। भोजन मे फोक की उपस्थिति से वह हलका हो जाता है, जिससे पेट उसे आसानी से और शीघ्र ही पचा सकता है। इस तत्त्व की भोजन मे उपस्थिति से आँतो से मेल का बाहर निकालना भी सरल हो जाता है। फलत कब्ज होने की सम्भावना विल्कुल नही रहती।

पूरा अन्न तथा छिलके सहित साग सब्जी आदि स्वास्थ्य की दृष्टि से अत्यन्त हितकर है, क्योकि इस प्रकार के खाद्यो से हमे प्राकृतिक स्वाद तथा पूरी पूरी मात्रा मे विटामिन और खनिज लवण तो मिलते ही है, साथ ही फोक भी पूरे परिमाण मे बिना नष्ट हुए मिल जाते है, जिससे सब रोगो का मूल मलावरोध दूर हो जाता है।

इसी तत्त्व से पूरे शरीर के पाचन यन्त्रो को उचित व्यायाम मिलता है, जिससे वे पुष्ट और सदैव स्वस्थ बने रहते है।

जिस भोजन मे फोक नही रहता उसके सेवन से वदहजमी, निर्वलता, गठिया, कमर दर्द तथा हृदय विकार आदि पैदा हो जाते है, क्योकि अनाजो और तरकारियो मे क्षार का भाग अधिकतर उनके छिलको मे ही रहता है, अत इस क्षार के विना शरीर का रक्त अम्लयुक्त वन जाता है और रोग उत्पन्न कर देता है।

५. जल

जल हमारे शरीर का महत्त्वपूर्ण अग है। पानी के आधार पर ही पौधे या जानवर जीवित हैं। हमारे शरीर का ७० प्रतिशत भाग पानी से वना हुआ है। पानी रक्त को तरल वनाता है, शरीर मे रक्त सचारण के कार्य मे सहायक होता है। जो भोजन हम ग्रहण करते है वह जल के द्वारा ही शरीर मे अभिशोषित होता है। इसके अलावा जल शरीर की गदगी मलमूत्र तथा पसीने के रूप मे वाहर निकलता है।

हमारे अधिकाश खाद्य पदार्थों, दूध, साग सब्जियो, फलो मे जल की मात्रा अधिक होती है। इसकी भी शरीर मे वहुत अधिक उपयोगिता है। इस जल मे वहुत प्रकार के विटामिन तथा खनिज-लवण प्राप्त होते है जो शरीर को स्वस्थ रखने मे सहायक होते है। साग सब्जियो मे पाया जाने वाला जल के साधारण पानीय जल से कही अधिक लाभकारी होता है। इन साग सब्जियो को आग मे इस तरह पकाना चाहिये कि इनमे पाने वाले जीवन-तत्व नष्ट न हो।

६. खनिज लवण

फल, सब्जी तथा अन्य वनस्पतियो से स्वास्थ्योपयोगी खनिज लवण प्राप्त होते हैं जो शरीर मे खाद्य पदार्थो के माध्यम से पहुँच कर हमे स्वस्थ एव जीवित रखते है। इन लवणो की कमी से शरीर रोगी हो जाता है। ये लवण अनाज के चौकर, चावल के कन और तरकारियो के छिल्को के ठीक नीचे विशेप रूप से पाये जाते हैं।

इन लवणो के मुख्य कार्य पाचन को सुधारना, रोगो से मुक्ति दिलाना अस्थियो स्नायुतन्तुओ एव नाडी केन्द्रो का गठन करना, रक्त को शुद्ध करना, भोजन को स्वादिष्ट बनाना तथा शारीरिक शक्ति को वढाना आदि है।

इन खनिज-लवणो की संख्या लगभग २४ है, उनके नाम ये है :—

१	कैलशियम	९	फ्लोरिन	१७	सखिया
२.	फास्फोरस	१०	सल्फर	१८	ब्रोमाइल
३	आयरन	११	मैगनीशिया	१९	लीथियम
४	आयोडीन	१२	क्लोरिन	२०	कोबाल्ट
५	मैंगनीज	१३	कॉपर	२१	आक्सीजन
६	शैलम "सलकन'	१४	जस्ता	२२	कार्बन
७	पौटाशियम	१५	अल्युमुनियम	२३	हाइड्रोजन
८	सोडियम	१६	निकेल	२४	नाइट्रोजन

कैलशियम

कैलशियम से हमारी अस्थियाँ बनती है तथा सशक्त होती है। यह खनिज लवण चुकन्दर, तिल, चौकर, तीसी की खली, शलजम, गाजर, टमाटर, पालक, नारगी, नीबू, दूध, नीरा तथा गुड मे अधिक पाया जाता है।

शरीर मे कैलशियम की कमी से कई प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते है, जिनमे फेफडे के रोग, पायरिया आदि बच्चो की बाढ मे रुकावट, अस्थि रोग अम्ल रोग तथा रक्त दोष आदि मुख्य है।

मनुष्य के शरीर मे कैलशियम की मात्रा जितनी अधिक होती है, उतना ही वह शक्तिशाली एव दीर्घायु होता है।

फास्फोरस

फास्फोरस की कमी से शरीर को मानसिक थकावट की अनुभूति होती है। मस्तिष्क कमजोर हो जाता है और स्मरण शक्ति खत्म हो जाती है। बाल झडने और सफेद होने लगते है तथा अनिद्रा और पागलपन तक आ उपस्थित होते है। इसकी

कमी या अभाव से शरीर की अस्थियाँ परिपुष्ट नही हो पाती और शरीर दुर्बल हो जाता है।

प्याज और अधिकाश साग सब्जियों मे यह लवण अधिक पाया जाता है। इस लवण मे इन्द्रियाँ अपना अपना काम उत्तमता से करती है, धमनियों मे रक्त का सचार सुचारू रूप से होता है। शरीर की अस्थियो का ढाँचा सुदृढ रहता है तथा बाल काले और चमकीले बने रहते है।

आयरन या लोह

आयरन या लौह के अभाव मे हम एक मिनट भी जी नही सकते। इसके अभाव मे रक्ताल्पता आदि रक्त के अनेक रोग उत्पन्न हो जाते है। शुद्ध रक्त एव उसमे पाये जाने वाले रजक तत्व का उत्पादन आयरन यानी लोहा पर ही निर्भर है।

पालक, खूबानी, खजूर, किशमिश, गन्ना, गुड, सोयाबीन तथा बेर मे आयरन अधिक होता है।

इस लवण के सेवन से शरीर की जीवनी शक्ति बढती है। रक्त शुद्ध बनता है तथा सौन्दर्य की वृद्धि होती है।

आयोडीन

यह लवण शरीर मे उत्पन्न होने वाले विपो से मस्तिष्क की रक्षा करता है। शरीर की विविध ग्रन्थियो का पोपण करता है तथा शरीर को स्थूल होने से भी बचाता है। इसके अभाव से बाल पकने और झडने भी लगते है तथा आदमी का वजन भी कम हो जाता है।

यह लवण फलो तथा तरकारियो के छिलको के ठीक नीचे के भाग तथा अनन्नास मे सबसे अधिक पाया जाता है।

मैगनीज

यह लवण शरीर स्थित अन्य लवणो मे सतुलन बनाये रखता है तथा स्नायुओ को स्वस्थ एव पुष्ट रखता है। औरतो मे हिस्टीरिया रोग इसी लवण की कमी या अभाव का परिणाम।

यह लवण जौ, गेहूँ, जई, सरसो के साग, नीबू, नारगी, टमाटर, बदाम मे बहुत पाया जाता है।

शैलम 'सिलकन'

इस लवण की कमी से बाल झडने लगते है, सुनाई व दिखाई कम देता है। त्वचा, दात तथा शरीर के तन्तु अस्वस्थ हो जाते हैं।

यह लवण पूरे जौ तथा छिल्का सहित खीरा मे सबसे अधिक पाया जाता है। यह सुनने और देखने की शक्ति बढाने वाला लवण है। इसी लवण से त्वचा लचीली बनती है।

पोटाशियम

यह लवण शरीर के तन्तुओं, यकृत तथा हृदय को शक्ति प्रदान करता है, घावो को भरता है। इसके अभाव मे चेहरे पर झाई तथा दाग आदि पड जाते है। तिल्ली बढ जाती है तथा स्नायुदौर्बल्य लोगो को सताने लगता है।

खीरा, ककडी, सेब तथा आलू के छिल्के, सेम, अजीर आदि मे यह लवण अधिक मात्रा मे विद्यमान है।

सोडियम

यह लवण पाचक, रसायन तथा रक्त शोधक है। इस लवण की कमी से गुर्दे तथा मेदे के रोग जैसे—मधुमेह, अपच, पेट

का फूलना, पित्त की कमी, पेशियो की कठोरता, बहरापन तथा मोतियाबिन्द आदि हो सकते है।

सभी ताजे फल एव साग सब्जियो मे यह लवण अधिकता से पाया जाता है।

फ्लोरिन

यह खाद्य-गैस यौवन को स्थिर रखता है। इसकी कमी से दाँत और आँख के रोग हो जाते है। छूत की बीमारी जल्द लग जाती है।

यह लवण चुकन्दर, लहसुन, पालक, फूल तथा गाठगोभी पनीर तथा बकरी के दूध मे अत्यधिक पाया जाता है।

सल्फर

मूली, प्याज, टमाटर, शलजम, सोयाबीन, आलू, मूँगफली, सेव, मेवे, अनाज और सन्तरा आदि मे यह लवण अधिक पाया जाता है। बाल, नख तथा पेशिया इस लवण की सहायता से बनती है। इससे शरीर मल रहित बनता है। इसके अभाव या कमी से त्वचा के रोग हो सकते है।

मैगनीशिया

यह शरीर मे ताजगी और स्फूर्ति लाने वाला लवण है। त्वचा मे निखार और स्नायुओ मे कार्यशीलता इसकी बदौलत होती है। इसकी कमी से चर्मरोग और अस्थि रोग होते हैं। शरीर मे सुस्ती आती है। गेहूँ, बाजरा, जौ, जई, गाजर, बकरी के दूध, चौकर लेटिस, पालक बन्दगोभी, नारियल, खजूर, अजीर तथा सभी तरह के बीजो मे मैगनीशिया अत्यधिक पाया जाता है।

क्लोरिन

सूखी मटर, गाजर, दूध, पनीर, नारियल, पालक, केला, गेहूँ, पत्ता गोभी, खीरा, प्याज, अनार और खजूर मे इस खाद्य गैस की अधिकता होती है। यह शरीर के जोडो और पेशियो को मल रहित कर उन्हे साफ सुथरा रखती है। शरीर के वजन को भी सतुलित अवस्था मे रखती है। इस लवण की कमी से शरीर मे मैल और चर्बी की वृद्धि होती है तथा अपच, पायरिया एव नाडी-विकार हो जाते है।

कॉपर

सेव, अँगूर,हरीमटर, अजवाइन की पत्ती, गाजर, दालो, सूखे मेवे तथा करमकल्ला मे यह लवण विशेष रूप से पाया जाता है।

इस लवण की कमी से रक्तविकार तथा पाचन की खराबी आदि रोग हो जाते है।

जस्ता, अल्यूमीनियम, निकेल, सखिया, ब्रोमाइल लीथियम, कोबाल्ट

उत्तम स्वास्थ्य के लिये इन लवणो की अल्प-अल्प मात्राओं मे शरीर को आवश्यकता होती है।

ये लवण लगभग सभी फलो एव सब्जियो के द्वारा उचित मात्रा मे शरीर को प्राप्त हो जाते है।

आक्सीजन, कार्बन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन

जब खाया हुआ भोजन पचता है तो ये लवण उसमे परिवर्तित रूप मे पाये जाते है। शरीर मे इन लवणो की कमी होने से शरीर रोगी हो जाता है। ये चारो लवण गैस के रूप मे नाक द्वारा

तथा भोजन के तत्वो मे मिश्रित होकर शरीर के भीतर पहुँचते हैं और लाभ पहुँचाते है।

विटामिन और कैरोटीन

विटामिन और कैरोटीन · दोनो को अलग अलग खाद्य तत्व न मानकर एक ही तत्व विटामिन मानना चाहिये। क्योकि कैरोटीन 'प्री-विटामिन ए' है। दरअसल कैरोटीन तत्व शरीर द्वारा विटामिन ए मे परिवर्तित कर लिया जाता है।

कैरोटीन ताजी पत्तीदार साग सब्जियो मे गेहूँ के चौकर तथा चावल के कण मे प्रचुर मात्रा मे मिलता है।

विटामिन हमारे खाद्य पदार्थो मे उनके प्राणरूप से स्थित होते है। उनको खाद्य पदार्थो से अलग करके रखना, टिकिया के रूप मे या पैकेटो मे बाँधकर रखना तथा बोतलो मे भर कर सुरक्षित रखने की कोशिश करना एक प्रकार से असम्भव नही है और यदि ऐसा सम्भव भी हो तो इस प्रकार के विटामिन उतने लाभकारी नही हो सकते, जितने विटामिन युक्त सप्राण खाद्य पदार्थो के माध्यम से लाभकारी सिद्ध होते है।

ये विटामिन अत्यन्त सूक्ष्म शक्तिशाली रसायनिक तत्व हैं। खाद्यो मे इनका अभाव होने से आदमी जिन्दा रह ही नही सकता कमी होने से आदमी अस्वरूप हो जाता है।

खाद्यो के प्राण ये विटामिन खाद्यो को आग पर रखने से उनमे अधिक मिर्च मसाला मिलाने से, उनको घी या तेल मे अधिक तलने-भूनने से अनाज को बिजली की चक्की मे पीसने से तथा खाद्यो को उनके चोकर तथा छिल्को सहित न खाने से नष्ट हो जाते है और शरीर को पूरा पूरा लाभ नही पहुँचा पाते।

विटामिन कई प्रकार के होते हैं, जिनमे मुख्य ६ है—ए, बी. सी, डी., ई तथा के।

विटामिन 'ए'

ये विटामिन रसदार मीठे फलो, ताजी साग सब्जियो, दूध मक्खन, मलाई, घी, मठ्ठा ग्रौर दही मे अधिक पाये जाते हैं।

मोटे तौर पर एक व्यक्ति के लिये एक से दो यूनिट या मिलीग्राम विटामिन से रोज चाहिये जो ३ ग्रौस कच्ची पत्तीदार साग सब्जियो के खाने से प्राप्त हो जाता है।

४ ओस दूध मे ११८ मिलीग्राम विटामिन ए होता है।
४ ओस पका पपीता मे २०२० मिलीग्राम विटामिन ए होता है।
४ ग्रोस पका आम मे ४२०० मिलीग्राम विटामिन ए होता है।
४ ग्रोस हरा धनिया मे १५७० मिलीग्राम विटामिन ए होता है।
४ ग्रोस गाजर मे ४००० मिलीग्राम विटामिन ए होता है।
४ ग्रोस पालक में २६०० मिलीग्राम विटामिन ए होता है।
४ ग्रोस वन्द गोभी मे २००० मिलीग्राम विटामिन ए होता है।
४ ओस पोदीना में २७०० मिलीग्राम विटामिन ए होता है।
४ ग्रोस चौलाई मे १४०० मिलीग्राम विटामिन ए होना है।

भोजन मे विटामिन ए के कम या ग्रधिक या न होने से अनेक रोग उठ खडे होते हैं। जिनमे नेत्र रोग सर्वप्रधान है। इसके ग्रलावा गुर्दो एव मूत्राशय का रोग, फेफडे का रोग, रक्त रोग तथा स्नायु रोग भी अवश्य हो जाते है।

विटामिन 'बी'

यह विटामिन पानी मे घुलनशील है। यही वजह है कि ये रसीले फलो ग्रौर तरकारियो जिनमे पानी का अश अधिक होता

है। जैसे अकुरित अन्न, टमाटर, सतरा, लीची, प्याज, पालक और गहरे रग की हरी पत्तियो वाले साग तथा ककडी आदि में अधिक पाये जाते है। सूखे मेवे, गेहूँ, चावल, मटर आदि मे भी यह विटामिन कम मात्रा मे पाया जाता है।

इस विटामिन का उत्तम प्रभाव शरीर के स्नायुओ, पाचन तन्त्रो तथा हृदय और यकृत पर विशेप रूप से पडता है।

शरीर मे विटामिन 'बी' की कमी से अपच, स्नायुविकार, पेट का रोग, बेरीबेरी का रोग, नेत्र के रोग, वालो का झडना, मधुमेह, निर्वलता, दमा, गठिया, श्वेतकुष्ट, क्षय तथा पागलपन आदि रोग होने की आशका रहती है।

विटामिन 'सी'

इस विटामिन की कमी से पाचन सस्थान मे पहले गडबडी होती है, यहाँ तक कि इसके अभाव मे पाकस्थली एव आँतो मे छाले पड जाते है। रक्त विकार, अस्थि रोग, दाँत के रोग, गठिया, वात, चर्मरोग, रक्तचाप, लकवा, मोतियाबिन्द तथा पीलिया आदि कितने ही रोग उत्पन्न हो सकते है।

नारगी, नीबू, टमाटर, सतरा, आँवला, बेल, करमकल्ला, पालक, सोआ, हरी मिर्च, मूली की पत्ती तथा काहू की पत्ती आदि मे विटामिन 'सी' भरपूर प्राप्त होते हैं।

हरी मिर्च मे विटामिन 'सी' १०० से २०० मिलीग्राम प्रति १०० ग्राम मे होता है।

फूल गोभी मे विटामिन 'सी' ६१ से २०० मिलीग्राम प्रति १०० ग्राम मे होता है।

पत्ता गोभी मे विटामिन 'सी' ८१ से २०० मिलीग्राम प्रति १०० ग्राम मे होता है।

सोआ मे विटामिन 'सी' ७७ से २०० मिलीग्राम प्रति १०० ग्राम मे होता है।

पालक मे विटामिन 'सी' ७३ से २०० मिलीग्राम प्रति १०० ग्राम मे होता है।

मूली मे विटामिन 'सी' ५० से २०० मिलीग्राम प्रति १०० ग्राम मे होता है।

नीबू मे विटामिन 'सी' ७० से २०० मिलीग्राम प्रति १०० ग्राम मे होता है।

संतरा मे गिटामिन 'सी' ८० से २०० मिलीग्राम प्रति १०० ग्राम में होता है।

श्रगूर मे विटामिन 'सी' ५६ से २०० मिलीग्राम प्रति १०० ग्राम मे होता है।

विटामिन 'डी'

यह विटामिन शरीर को विकसित करता है श्रौर अस्थियो को सुडौल एव पुष्ट बनाता है।

इस विटामिन की कमी या अभाव से स्त्रियो को रक्त प्रदर की शिकायत हो जाती है। इसके अलावा बाढ का रूकना, संधिवात, मधुमेह, क्षय, निमोनियाँ, हृदय के रोग, मृगी तथा हिस्टीरिया रोग हो जाते है।

सूर्य किरण, चर्बी, सरसो के तेल, दूध, केला सभी वनपक्व फल मे विटामिन 'डी' श्रधिक पाया जाता है। यह विटामिन आग पर श्रधिक देर तक रखने से नष्ट होता है।

विटामिन 'ई'

इस विटामिन की शरीर मे उपस्थिति से पुरुषो एवं स्त्रियो मे वच्चा उत्पन्न करने की क्षमता और शक्ति का अविर्भाव होता है। इसके अभाव मे जननेन्द्रिय सम्वन्धी सभी रोग होते है, जैसे वाँझपन, नपु सकता और कुछ चर्मरोग आदि। यह विटामिन दूध, घी, आदि लसा वाले पदार्थ अकुरित अन्न, हर प्रकार के वीज, शहद, गुड, ताजे फल और ताजी साग सब्जियो मे अधिक पाया जाता है।

विटामिन 'के'

इस विटामिन से रक्त गाढा होता है।

हरी पत्तागोभी, पालक, वँधगोभी आदि मे इस विटामिन की अधिकता है।

अत हम देखते है कि भोजन का प्रत्येक अश कोई न कोई खास काम करता है। पौष्टिक और ठीक भोजन का रहस्य भोजन के चुनाव पर निर्भर करता है जो हमे सव अश ठीक अनुपात मे दे सके और हमारे शरीर की पुष्टि कर सके। इस नियम के विरूद्ध जाने से हमारी पाचन क्रिया खराव हो सकती है। थोडी असुविधा के कारण ठीक भोजन के अल्प मात्रा मे हेर फेर हो जाने से वहुत खरावी नही होगी फिर भी हमे भोजन की कमियो पर ध्यान रखना चाहिये।

कैसे खाना चाहिये

इस प्रश्न का मूल सिद्धान्त अच्छी तरह चबा कर खाने पर निर्भर करता है किन्तु हम इस पर ध्यान नही देते। पहले बताया जा चुका है कि पाचन क्रिया मुँह से आरम्भ होती है और मुख मे लार की क्रिया से स्टार्च ग्लूकोज मे बदल जाता है। अत लार

का सम्पर्क भोजन के प्रत्येक कण से होना चाहिये और उसके लिये अच्छी तरह चबाना जरूरी है। साथ ही दाँतो के द्वारा अच्छी तरह चबाने से भोजन के छोटे-छोटे बारीक टुकडे हो जाते है जो आमाशय में पाचन क्रिया मे सहायक होते है जिससे भोजन को पाचक-रस अधिक मिल जाता है। श्री ग्लैडस्टन का कहना है कि हमे हरेक गस्से को ३२ बार चबाकर खाने की आदत डालनी चाहिये। अच्छी तरह चबाने के लिये यह क्रिया बहुत धीमी हो ऐसा जरूरी नही है। शीघ्रता से चबाने पर लार-ग्रन्थियाँ अधिक स्फूर्ति से काम करने को उत्तेजित करती है।

जितना सम्भव हो, खाने के समय पानी नही पीना चाहिये। जब कभी भी पेट मे किसी प्रकार की तकलीफ हो, कोई भी द्रव्य पदार्थ खाने के साथ नही लेना चाहिये और खाने के आधे घण्टे पहले या बाद भी नही लेना चाहिये। इसका कारण स्पष्ट है। जब पाचन की गडबडी है, सब जठर-रस ठीक प्रकार से क्रिया नही कर पाते और फिर पानी वगैरह के मिलने से और अधिक तरल हो जाते है तो उनकी कार्य-शक्ति क्षीण हो जाती है। यह उसी प्रकार हुआ जैसे एक आदमी किसी धातु को शक्तिशाली अम्ल मे घोलना चाहता है और उसमे पानी मिला दिया जाये तो घुलने की क्रिया सब समाप्त हो जायेगी अथवा धीमी पड जायेगी, यह बहुत सीधी सी बात है कि पानी से खाना ग्रास-नली के नीचे आमाशय मे बहुत आसानी से चला जाता है पर आमाशय मे जाकर उसके पाचन मे बाधा होती है।

लेकिन सब से हानिकारक आदत खाते समय बर्फ का पानी पीना है। ऊपर बताये हुए कारणो के साथ आमाशय को कुछ देर के लिये बर्फ का पानी पक्षाघात कर देता है। रक्त को उस स्थान से हटा देता है जबकि उस समय आमाशय को बहुत रक्त की जरूरत होती है। यह तथ्य स्पष्ट है कि कोई भी शारीरिक कार्य चाहे वह कितना भी छोटा कार्य क्यो न हो, बिना बल के

नही किया जा सकता, चाहे पलक झपकने जैसा ही छोटा काम क्यो न हो। बर्फ का पानी पीने से आमाशय को साधारण ताप लाने के लिये अत्यधिक परिश्रम करना पडता है, जो बडे बल को लगाकर शक्ति को नष्ट करता है जब कि दूसरे अन्य कारणो के लिये तो वल लगाना ही पडता है। इस आदत से उन्हे अजीर्ण हो जाता है। जो भी पदार्थ खाया जाये उसका तापमान शरीर के तापमान के समान होना चाहिये।

खाने मे मसाला, चटनी, छोक आदि वदहजमी का कारण है। ये मसाले आमाशय मे जरूरत से ज्यादा हलचल पैदा कर देते है। पाचक रसो की ग्रन्थियाँ असाधारण कार्य करने को बाध्य होती हैं जिससे नाजुक श्लेष्मिक सतह पर भी उत्तेजना पैदा हो जाती है। साथ ही वह रक्त को अधिक गर्म कर देती है। नाडी प्रक्रिया उत्तेजित हो जाती है तथा वासनाओ को भडका देती है। यही कारण है कि मनुष्य कभी कभी अस्वाभाविक कार्य कर बैठता है।

कब खाना चाहिए

पुराने समय से यह प्रश्न काफी विवादास्पद रहा है। डॉ० दोवेज (Dr Dewej) की पुस्तक मे बताये गये सुवह का नाश्ता नही करना चाहिये" के सिद्धान्त की प्रथम तो काफी प्रशसा हुई परन्तु वाद मे वह विवाद का विषय वन गया। अत इस सिद्धान्त को वहुत कम लोगो ने अपनाया। यह बिल्कुल असम्भव था कि हर व्यक्ति के लिये एक जैसा ही सिद्धान्त लागू किया जाय, पर इतना करना स्वास्थ्यप्रद होगा कि जिन व्यक्तियो का स्वास्थ्य ठीक है उन्हे दिन मे तीन वार भोजन करने की सलाह दी जा सकती है, दो वार हो तो अति उत्तम है। उन्हे भोजन सीमित मात्रा मे लेना चाहिये और निम्न प्रकार से खाना चाहिये। सर्वप्रथम उन्हे प्रात. काल मे फल आदि का अल्पाहार करना चाहिये, दूसरी वार उन्हे चार घण्टे वाद खाना चाहिये, तीसरी बार पाच घण्टे

के बाद। इससे आमाशय को पाचन कार्य करने का समय मिल जाता है ताकि अगली बार भोजन पेट मे डालने के पूर्व पहले खाया हुआ भोजन अच्छी तरह से हजम हो जाय। अन्यथा आमाशय मे अधपचा भोजन ताजे भोजन को नही पचने देगा। इसलिये दोनों समय के बीच मे कुछ भी खाना ठीक नही होगा। पाचन क्रिया की विभिन्न अवस्थाओ मे जब भोज्य-पदार्थ आमाशय मे रहते हैं तब अनपचा भोजन पचे हुए भोजन के साथ चला जाता है। तब सिर्फ शक्ति और पौष्टिक तत्वो को ही हानि नही होती बल्कि उससे आतो मे साधारण उत्तेजना पैदा हो जाती है और जो पदार्थ बेकार नही है उन्हे भी बेकार पदार्थ के रूप मे आँतो को निकालने की मेहनत करनी पडती है।

मुख्य बात यह है कि भोजन हल्का होना चाहिये, गुण मे पौष्टिक होना चाहिये और मात्रा थोडी होनी चाहिये जिससे कमजोर पाचन यन्त्रो को एक बार मे बहुत अधिक मेहनत करने का भार न वहन करना पडे।

अन्य हानिकारक पदार्थ

अब हम उन पदार्थों के विषय मे चर्चा करेगे जिनका सेवन इस सभ्य संसार मे सभ्यता के नाम पर किया जाता है और जो स्वास्थ्य का परम शत्रु है। विशेषकर पाचन क्रिया पर उनका बडा दूषित प्रभाव पडता है।

इनमे सबसे पहली वस्तु शराब है जो केवल ईंधन का ही काम करती है पर नये उत्तको (tissues)की रचना नही करती। डाक्टरी औषधियो मे इसका काम सिर्फ उत्तेजना पैदा करना है। इसका कुप्रभाव पाचन सस्थानो पर पडता है। खासकर आमाशय का सत्यानाश कर डालता है। यह भूख को नष्ट करती है यद्यपि अस्थाई रूप से अस्वाभाविक उत्तेजना द्वारा शक्ति का सचारण हुआ-सा प्रतीत होता है। एक आदमी प्राय शराब

पीने से शिष्टाचार के ज्ञान आदि को खो बैठता है। ऐसा न कह कर हम कहेगे कि यह हमारे पाचन-सस्थानो के लिये विल्कुल अनावश्यक है और मदका अधिक सेवन करने की आदत कभी-कभी मृत्यु का कारण हो सकती है अधिकतर मनुष्यो मे इन्द्रिय नियन्त्रण शक्ति अथवा इच्छा शक्ति का अभाव होता है जिससे वे इसकी भूख पर नियन्त्रण कर नही सकते। सवसे विवेकपूर्ण सलाह है कि उन्हे शराव पीना एकदम छोड देना चाहिये।

जो मनुष्य अत्यधिक शराव पीने की आदत से लाचार है वे अपने अगो को उत्तेजित करके जरूरत से ज्यादा कष्ट देते हैं, यद्यपि हमारे प्राकृतिक अग जरूरत से ज्यादा काम करने का विरोध करते है। शायद व्यक्ति इस चेतावनी को समझ नही पाता या ध्यान नही देता। कुछ समय पश्चात हम देखेगे कि हृदय पर इसका क्या असर पडता है। मान लिया जाय कि मनुष्य की औसतन आयु ३८ वर्ष है और एक स्वस्थ मनुष्य मे हृदय की धडकन प्रति मिनट ७० है तो आयुभर मे हृदय की धडकन ७६,५३६,७४०,००० है। शराव पीने से १० धडकने प्रति मिनट बढ जाती है। इस प्रकार ६०० धडकन प्रति घण्टा बढती है। १४,४०० प्रति दिन, ४८२००० प्रति महीने ६७८, ४००० प्रति वर्ष, १९५५६८००० बीस साल मे और ३७२७९-३००० धडकने आयु के ३८ साल मे बढ जाती है। अगर मान ले एक व्यक्ति ५० साल जीता है तो साधारण धडकन ६१७,२३९ ६८० होनी चाहिये। अव यदि जोवन के अन्तिम २५ साल मे १० धडकन प्रति मिनट बढा दी जाय तो इससे अन्दाजा लगाया जा सकता है ९१, ८४०,००० अधिक धडकने होगी। अत नाजुक किन्तु जटिल मानव-हृदय को कितना अधिक काम करना पडता है।

लेकिन यही इसकी कष्टतम अवस्था का अन्त नही है। जव हम सोते हैं तो हृदय की धडकन साधारण अवस्था से भिन्न

होती है। इस समय धडकन बहुत धीमी गति से होती है लेकिन सोने के पहले मद्यपान से हृदय को नीद के समय बहुत मेहनत करनी पडती है और धडकन एक जागे हुए स्वस्थ मनुष्य की धडकन से भी अधिक होती है। तब इसमे आश्चर्य ही क्या है कि इतने सारे मनुष्य हृदय गति के अवरूद्ध होने से मर जाते है ? क्या यह आश्चर्यजनक नही है कि धीरे-धीरे मनुष्य की औसत आयु कम होती जा रही है। पहले मनुष्य की औसत आयु साठ वर्ष थी और अब सिर्फ ३८ साल रह गई है। यदि मनुष्य अपनी इच्छानुसार प्रकृति के नियम का विरोध करता हुआ चलेगा तो इससे भी कम उम्र हो जायेगी।

चाय और काफी न तो ऊत्तको की रचना करते हैं और न ईंधन का काम करते है। उन्हे भी एकदम ही हटा देना चाहिये। कुछ लोग अनुभव करते है कि शराब और चाय पीने मे कुछ डिग्री का ही फर्क है। यह सत्य है कि अधिक चाय का प्रभाव उतना भयकर नही है लेकिन इसका लगातार सेवन करने से स्वास्थ्य का पतन है। चाय की पत्ती मे चार प्रतिशत 'कैफिन' या 'थीन' है, जो कि 'एल्कालायड' है और यह हमेशा 'टेनिन' के साथ पाई जाती है। उनमे एक उडने वाला तेल भी होता है, जिससे सुगन्ध मिलती है और इसके साथ ही शान्ति देना वाला गुण भी मौजूद होता है। टेनिन दस्त रोकने वाली दवा का काम करती है। इसलिये कब्जियत पैदा हो जाती है। श्लेष्मिक सतह पर इसकी क्रिया बहुत हानिकारक है। इसके सकुचित प्रभाव से आमाशयी रसो का निकलना वन्द हो जाता है। इसका लगातार व्यवहार पाचन प्रणाली मे गडबडी पैदा कर देता है। यह सत्य है कि चाय का एक प्याला ताजगी पैदा करता है उसकी गर्मी पीने पर आराम पहुँचाती है। पर इसका परिणाम बुरा है। बच्चो को चाय या काफी नही पीने देनी चाहिये।

इस बुरी आदत का बीज बोने से अन्त मे यह फलने - फूलने लगेगा।

काफी पीने से जो हानिया ऊपर बताई गई हैं वे कम परिणाम मे पीने की बात पर आधारित है लेकिन इसके लगातार व्यवहार से निम्न परिणाम होते है। सबसे पहले सचालन तीव्र हो जाता है, नाडी तेज हो जाती है, पेशाब बहुत आता है, बहुत हल्का नशा सा आता है। चाय पीने वालो को सिर दर्द, जी मिचलाना और पक्षाधार के आक्रमण की तरफ झुकाव बढता है। चाय और काफी के उपासक मदिरा के उपासको से सख्या मे बहुत अधिक हैं। वे ऐसा सोचते है कि चाय काफी का प्रभाव मद्य की तरह हानिकारक नही है जबकि इनका अधिक व्यवहार शराब जैसा ही प्रभाव पैदा करता है।

कुछ अन्य उपयोगी सुझाव

(१) हमारा रसोई घर साफ सुथरा होना चाहिये। मक्खी, मच्छर तथा जीव जन्तुओ का प्रवेश नही होना चाहिये। उसमे से धुआँ तथा गरम वायु निकलते रहने के लिये खिडकियाँ अथवा रोशनदान होना चाहिये।

(२) अक्सर खाते समय लोग किताब या अखबार अथवा टेलीफोन लेकर बैठते हैं, जिससे आमाशय मे रक्त का आना रुक जाता है, जबकि उस समय आमाशय मे रक्त की सबसे अधिक जरूरत होती है। वे पढने अथवा टेलीफोन पर बात करने मे इतना व्यस्त हो जाते है कि चबाने का कार्य ठीक से नही कर पाते, फिर जल्दी जल्दी खाने का काम करते है।

खाते समय मन बहुत प्रसन्न रहना चाहिये। जहाँ तक हो सके अकेले बैठकर भोजन नही करके परिवार के सदस्यो के साथ खुशी के वातावरण मे भोजन करना चाहिये जिससे स्वास्थ्यकर,

हल्की और प्रसन्नता की वात चलती रहे। स्मरण रक्खे उदर भरण भी एक यज्ञ कर्म है। इसमें कोई सन्देह नही कि पाचन क्रिया पूरी मानसिक स्थिति पर निर्भर करती है। पाचन क्रिया तन्त्रिका-प्रणाली (Nervous System) के द्वारा नियन्त्रित होती है और इन नाडियो का सम्वन्ध मस्तिष्क से होता है। अत: चित्त का प्रसन्न रहना पाचन क्रिया मे सहायक होता है और क्रोध अथवा चिन्ता पाचन क्रिया मे रुकाव पैदा करते है। मानसिक अवस्था का इतना प्रभाव है कि मनुष्य इसके प्रभाव से वचित नही रह सकता।

(३) मनुष्य आदत का गुलाम होता है। हम दिन मे कई वार सिर्फ आदत के कारण ही खाते हैं। हम कई बार किसी के अनुरोध के बल पर खाने की आदत को बना लेते है जब कि हमारी इच्छा खाने की नही होती। पर यह बात हर व्यक्ति पर ही छोड़ दी जाती है कि वह इस नियम का दृढता से पालन करे कि जब उसे भूख लगे तभी भोजन करना चाहिये। हमारा भोजन स्वादिष्ट, रूचिकर, ताजा पुष्टिकर होना चाहिये। मसालो से रहित सादा भोजन अधिक लाभकारी है। तेज आँच पर इतना अधिक न पका लिया जाय कि उसको पौष्टिक तत्त्व नष्ट हो जाये। तला हुआ भोजन चाहे स्वाद भले ही लगे हानिकारक है।

हम पाठको का ध्यान उस तथ्य की तरफ फिर दिलाना चाहते है कि फेफडे रक्त और लसिका (Lymph) की गति को सारे शरीर मे नियन्त्रित करते है। क्रियाशील श्वास प्रश्वास लसिका के शोषण मे सहायता तो पहुँचाती ही है साथ-साथ आमाशय और आँतो का भोजन के शोषण मे भी विशेष सहायता पहुँचाती है क्योकि ये लसिका पात्र (Lymph Vessels) छाती, गुहा के बहुत पास है जिससे वह छाती के वायु सेवन से सीधे प्रभावित होते है।

खाने के वाद यदि लम्वी श्वास खीचकर कुछ देर व्यायाम किया जाये तो खाने के वाद जो भारीपन महसूस होगा वह नही होगा ।

अत हम देखते है कि लम्बी दीर्घ श्वास रस शोपरा, शरीर के पोषरा और ऊत्तकों के सृजन मे सहायता पहुँचाती है । आक्सी-जन शरीर के लिए वहुत जरूरी है और वहुत मात्रा मे शरीर मे उसके शोषण की आवश्यकता है । आक्सीजन की अधिक मात्रा का अर्थ पुष्टिकर तत्त्व का शरीर मे पहुँचना है । अव लम्वी या गहरे श्वास का अर्थ फेफडे की क्षमता को वढाना है जिससे आक्सीजन के शोपण मे वृद्धि करना है । लम्वी श्वास ठीक तरह पौष्टिक तत्वो के शोपरा होने के लिये उतनी ही जरूरी है जितना अच्छे सतुलित भोजन का चुनाव करना । इस क्रिया से हजारो जीवन की रक्षा तथा स्वास्थ्य सुधार हुआ है ।

मनुष्य का शरीर अद्भत एव जटिल यन्त्र के समान है। यदि यह अपने मे ही या स्वाभाविक नीति पर छोड़ दिया जाये तो नियमित रूप से कार्य करता रहेगा । यदि कार्य नियमित रूप से होता रहा तो उसका अर्थ स्वास्थ्य है और अनियमित रूप का अर्थ रोग है ।

श्वास की ताल के साथ नियमत हृदय की धड़कनो को लक्ष्य करना चाहिये । कुछ अर्से तक नियमित काम करने से उस काम को करने की आदत स्वत बन जाती है । अत अच्छी आदत हमे शारीरिक नियम व स्वास्थ्यवर्धन की दिशा मे वनाने की आवश्यकता है ।

स्वास्थ्य के लिये अच्छी आदते वहुत जरूरी है । जिसका अर्थ है जीवन मे नियमित रूप से हर काम को करना, उठने मे, सोने मे, खाने-पीने मे व्यायाम करने से सब मे नियम की आवश्यकता है ।

नियमित रूप से कार्य करना सिर्फ स्वास्थ्य बनाने पर और उसको अच्छा रखने में ही सहायक नही है वरन् नियमित रूप से कार्य करने से व्यक्ति दिन मे अधिक काम कर सकता है और समय की बचत होती है। सबसे पहले सोने और उठने मे नियमित होने का अर्थ है नीद मे समय आवश्यकता से अधिक खर्च न करे। औसत प्रौढ व्यक्तियो के सोने के समय मे कई मतभेद है। प्राचीन समय मे ऐसा कहते थे कि छ घण्टा पुरुष को, सात घण्टा स्त्री को और आठ घण्टा मूर्ख को सोना चाहिये। शरीर-विज्ञान के नियम के अनुसार यह नियम थोडा भिन्न है। सर्वप्रथम हम कोई खास नियम हर व्यक्ति के ऊपर लागू नही कर सकते। स्त्री और पुरुप के भेद के साथ व्यक्ति के स्वाभाव पर भी किसी सिद्धान्त को लागू करना या न करना निर्भर करता है। बडी उम्र वाले व्यक्तियों के लिये आठ घण्टा सोना जरूरी है। कुछ लोगो का कहना है कि व्यक्ति जितना सोयेगा उसका स्वास्थ्य उतना ही अच्छा बनेगा। यह बात इस नियम के अनुसार काफी हद तक ठीक है कि रात को प्रकृति नष्ट हुए ऊत्तकों (tissues) की मरम्मत और रचना करती है। अत सब रचना रात को ही होती है।

यह सत्य आम व्यक्तियो को नही मालूम है कि हृदय को सिकुडने के समय पौष्टिक तत्व नही मिलते क्योकि धमनियो पर दबाव पडता है जो हृदय को ये तत्व प्रदान करते है। हृदय के सिकुडने के अन्तर वाले समय मे ही ये धमनियाँ हृदय के ऊत्तको के पास रक्त के रूप मे पौष्टिक तत्व पहुँचाती है। सोते समय हृदय की धडकन धीमी हो जाती है और उन सिकुडनो के बीच का अवकाश भी अपेक्षाकृत लम्बा हो जाता है। घडी को चालू रखने के लिये जो महत्व कमानी या प्रधान स्पिग को है वही महत्व शरीर को चालू रखने के लिये हृदय को दिया जा सकता है। इसलिये थके हुए शरीर की मरम्मत के लिये हृदय को आराम देने की उपयोगिता सहज ही मे समझी जा सकती है।

यह बताने के बाद कि कम से कम आठ घण्टा सोना काफी है, नियमितता का प्रश्न अपने आप उठता है बीमार को छोडकर स्वस्थ व्यक्ति को प्रात काल सूर्योदय के पहले उठना चाहिये। इससे सिर्फ समय की ही बचत नही होती वरन् खाना भी नियमित रूप से खाया जा सकता है जिसके बारे मे अब हम सोचेगे।

इस विषय पर बहुत मतभेद था कि मनुष्य को दिन मे तीन बार खाना चाहिये कि नही और आजकल लोग दो बार खाने को ही पर्याप्त समझते है। यद्यपि दिन मे दो बार से अधिक खाने के पक्ष मे लोकमत है फिर भी इस बात का दूसरी तरह निर्णय किया जा रहा है कि इसके बीच मे कुछ खाना चाहिये या नही। पूरा नाश्ता खाने के बाद फिर भोजन के पहले यदि हम खाये तो हमारे अगो पर बुरा असर पडता है। हमारा सुझाव इस प्रकार है कि सूर्योदय से पहले उठकर शौच क्रिया के बाद स्नान करे। उसके बाद दस पन्द्रह मिनट व्यायाम करे। यह सब करते हुए सात बज जायेगे। उसके बाद हल्का दूध के रस का नाश्ता लें जिसमे नारगी, अगूर या खीरा हो अथवा फलो या मठ्ठा लिया जा सकता है। उसके बाद समाचार पत्र पढे या अन्य कार्य करे। १ बजे हल्का भोजन हो और ७ बजे रात का भोजन।

यदि खाने के समय को नियमित रखा जाये और भोजन की मात्रा व भोजन के प्रकार पर अच्छी तरह ध्यान रखा जाये तो हमारी पाचन प्रणाली को नियमित समय पर ही भोजन की जरूरत होगी। हर काम नियम से करना अपने आप मे ही एक पारितोषिक है।

अब व्यायाम का प्रश्न आता है।- इसके बारे मे बहुत कम ध्यान दिया गया है, खास कर उन व्यक्तियो द्वारा जो बैठकर कार्य करते है। जबकि मानसिक और शारीरिक शक्तियो को सतुलित करने के लिये यह बहुत जरूरी है। मस्तिष्क जब

क्रियाशील है और शरीर शिथिल हो अथवा थका हुआ हो तो उस समय उसको संतुलित करने के लिये तब व्यायाम करना चाहिये। काम मे न लेने से पेशिया ढीली हो जाती है। यह वात पहलव ान लोग और व्यायाम सीखने वाले व्यक्ति समझ पायेगे। व्यायाम करने के लिये सबसे अच्छा समय सुवह स्नान के वाद है। सुवह पन्द्रह मिनिट व्यायाम करने का कितना अच्छा असर पडता है देखकर आश्चर्य हो जायेगा। यहाँ भी नियम से काम करने से अद्भुत आश्चर्य दिखाई देगा। माँस पेशियो के विकास से स्वास्थ्य पर तो चमक आ जायेगी और साथ ही अन्य द्रवो के स्राव से पाचन और रक्त सचालन हो जायेगा।

अन्त मे आँतो की सफाई की वात आती है। अगर हमारा नियमित रूप से पेट साफ होगा तो उनकी गति भी नियमित हो जायेगी। सुवह शाम दोनो वक्त मल त्यागना चाहिये। आँतो की सफाई होना अत्यन्त ही आवश्यक है। जिस प्रकार आमाशय को भोजन की याचना की आदत पड जाती है उसी प्रकार आँतो को भी नियमित रूप से शौच की आदत पड जायेगी।

—oo—

सातवां भाग

व्यायाम

गति ही जीवन है। अच्छा स्वास्थ्य, शरीर और मस्तिष्क दोनो पर निर्भर करता है। निष्क्रियता का अर्थ जडता या स्थिरता है जो हमारे स्वास्थ्य के लिए घातक है। अत शरीर को व्यायाम की आवश्यकता है। जैसाकि पहले बताया जा जा चुका है कि मशीन का बेकार पडे रहना उतना ही अधिक घातक है जितना उसका अधिक व्यवहार करना। ऐसा करने का अर्थ उसके घिसने से ज्यादा उसकी बुरी अवस्था होना या मोर्चा लगना है। जीवन और स्वास्थ्य के लिए सक्रियता और गति की बहुत आवश्यकता है, और सक्रियता हानिकारक कभी नही है। पर इसमे भी सयम बरतना चाहिए ताकि माँसपेशियो पर आवश्यकता से अधिक जोर न देना पडे।

हमारे शरीर मे हजारो मील लम्बे छोटे-छोटे ट्यूब है—धमनियाँ, शिराएँ, कौशिकाएँ, लसिका-पात्र (Lymphatic Vessels) आदि है। धमनियाँ और शिराएँ सारे शरीर मे सूक्ष्म नलियो मे बँट जाती है। धमनियाँ शरीर मे शुद्ध रक्त पहुँचाती हैं और शिराएँ अशुद्ध रक्त लाती है। कौशिकाएँ पहली और दूसरी दोनो की मध्यस्थता का काम करती हैं। लसिका रूधिर से आक्सीजन और भोजन को पृथक अग की कौशिकाओ मे भेजती है। इसके अलावा लसिका शरीर से विजातीय पदार्थों के निकालने मे सहायक होती है। जब कभी भी रोग के कीटाणु इस प्रक्रिया मे आकर उपस्थित होते है तो लसिका मे पहले दिखाई देते है। लेकिन इस तरल पदार्थ मे श्वेत कीटाणु अत्यधिक मात्रा मे पाये जाते है। अगर हमारा शरीर स्वस्थ है तो रोग के इन सूक्ष्म कीटाणुओ का नाश शीघ्रता से कर दिया जाता है। इन द्रव्य पदार्थों की उपयोगिता को ध्यान मे रखते हुए उनमे गति

और सक्रियता की आवश्यकता होती है, ताकि वे अपने अपने कार्य अच्छी तरह से सम्पादित कर सके। व्यायाम द्वारा ही इन विभिन्न नसो, नाडियो को वांछित गतिशीलता एव स्फूर्ति प्राप्त होती है।

जब कभी मांस-पेशियाँ सिकुडती हैं तो उनके सिकुडने की क्षमता के अनुपात मे रक्त थोडी व पूरी तरह से हानिकारक पदार्थों को लेकर वहाँ से निकल जाता है और जैसे ही वे फैलती हैं धमनियो द्वारा लाया हुआ ताजा रक्त अपने साथ पौष्टिक तत्व लिये हुए फिर से मिल जाता है। प्रकृति द्वारा विवेक रूप से जुटाए गये तत्वों मे पौष्टिक तत्व बेकार के तत्वो से हमेशा अधिक होते हैं। जब दोनो प्रकार के पदार्थ समान मात्रा मे हो जाते है तब व्यायाम करने से ही अधिक पौष्टिक तत्व प्राप्त होते है। शरीर के किसी हिस्से से अधिक काम करने से उस खास हिस्से का असाधारण विकास होता है लेकिन इस असमान रूप के विकास को रोकना चाहिए, नही तो उस अश का आकार विगड जाता है। उदाहरण के रूप मे आगे की ओर झुके कन्धे और विभिन्न ढग की चाल ये सब अपनी अपनी विशेष आजीविका अथवा धन्धे मे लगे हुए आदमियो मे देखने को मिलते है।

इसका कारण वहुत सीधा है और दो शब्दो मे बताया जा जा सकता है "असमान पोपण"। मांस पेशियो के व्यायाम से पोपण-तत्व प्राप्य होते है। शरीर के जिस अग की अधिक हल-चल या व्यायाम हो जाती है वह अग शरीर से पोपण तत्व अधिक मात्रा मे खीच लेता है। जो पोषण तत्व शरीर मे समान भाग मे वितरण होना चाहिए वह उसी विशेष अग पर इकठ्ठा हो जाता है। फलत यह अग और अगो की अपेक्षा अधिक कठिन हो जाता है जबकि शरीर के दूसरे अग कमजोर रह जाते है। व्यायाम शरीर के विकास के लिए इस प्रकार

करना चाहिए कि सब पेशियो का समान रूप से चारो ओर से विकास हो ।

माँस पेशियो की क्रियाशीलता से शरीर के सब कार्यो मे गति आ जाती है । सब क्रियाओ–पाचन, परिपाक और पोषण के लिए व्यायाम सबसे अधिक लाभप्रद है । पाचन-शक्ति आवश्यक तत्वो को बनाने का कार्य बहुत शीघ्रता से करने लगती है। शरीर के टूटे हिस्सो की मरम्मत के लिये रक्त सचार मे तेजी आ जाती है। वैज्ञानिक ढग से सब अगो की समान रूप से व्यायाम करने से पोषण-तत्वो का शरीर मे समान रूप से वितरण होता है और सारे शरीर की बनावट अच्छी है और वह शक्तिशाली बनता है तथा मस्तिष्क भी स्वच्छ होता है ।

रोगी के लिए व्यायाम की बात करना निश्चय ही व्यर्थ है। लेकिन कुछ शिथिल व्यायाम इनके लिए सहायक हैं। उदाहरण के लिए मालिश बीमार के लिए काफी अच्छा व्यायाम है। इस व्यायाम से शरीर के भीतर के ऊत्तको (tissues) मे सचालन ठीक प्रकार से होने लगता है और सारे शरीर मे विभिन्न द्रव्यो का सचालन ठीक से होने लगता है। उन रोगियो के लिए जिन्हे दुर्भाग्यवश बिस्तर पर बन्ध जाना पडता है, मालिश एक हल्का फुल्का पर सक्रिय व्यायाम है। यह व्यायाम पेशियो के खिचाव से होता है। जैसे हाथ को कसकर पकडना, पैर के पजे सिकोडना, बॉह और पैर को भी बहुत धीरे-धीरे बारी-बारी से सिकोडना इत्यादि ।

फेफडे के व्यायाम से द्रव्यो की गति बहुत शीघ्र उत्तेजक होती है। यह एक महत्वपूर्ण विषय है। फेफडो के व्यायाम से स्वास्थ्य-लाभ मे बहुत अधिक सफलता मिलती हैं, यहाँ तक कि रोगी को विस्तर तक से छुटकारा मिल जाता है। हर सयय

गहरा सांस छोडने से छाती की गुहा खाली हो जाती है। थोडा सा भी हिस्सा खाली होने से वह वायु-चूषण शक्ति का कार्य करता है। शिरा से हृदय मे खून लाने का यह मुख्य वल है। लसिका-तरंगो को भी ऐसा ही वल प्रभावित करता है। उन व्यक्तियों के लिए जो दूसरा और कोई व्यायाम नही कर सकते, दीर्घ श्वास लेना एक बहुत उपयोगी व्यायाम है।

किसी भी प्रकार के व्यायाम से शरीर के विकास के लिए सवसे पहले एवं सवसे अधिक महत्वपूर्ण वात फेफडो का विकास। अच्छे फेफडे और अच्छी पाचन-क्रिया साथ साथ चलती है। भोजन के पचने के पहले इसका आक्सीकरण (Oxidation) होना चाहिए जो रसायन दहन (Chemica Combustion) की क्रिया के तुल्य हो इसके लिए आक्सीजन वहुत जरूरी है, वह भोजन के कार्वन से मिलकर आक्सीकरण (Oxidation) मे परिणत हो जाता है। आक्सीजन की मात्रा श्वास के द्वारा लेना फेफड़ो की क्षमता पर निर्भर करता है। हम वहुत ज्यादा आक्सीजन नही ले सकते जव कि हम वहुत ज्यादा भोजन कर सकते है। इसलिए फेफडो की क्षमता अधिक हो तो पाचान अच्छा होगा।

अव हम रिक्त छाती-गुहा की चूषण-शक्ति और इससे शरीर मे द्रवो की उत्तेजना पर जो प्रभाव पडता है उसके विपय मे कुछ कहेगे। फेफडो की क्षमता जितनी ज्यादा होगी, छाती का विस्तार भी उतना ही होगा और नि श्वास से रिक्त स्थान पैदा होगा। अत· द्रवो पर उत्तेजनात्मक प्रभाव से गति मे वृद्धि होगी।

अपने फेफडो की परीक्षा पूरी श्वास लेकर करनी चाहिए। फेफडो की क्षमता के अनुसार उनमे पूरी हवा भर दीजिये। अगर सिर मे चक्कर आता हुआ लगे तो समझ लेना चाहिए कि

हमारे फेफडे स्वस्थ नही है। हमे तुरन्त उनमे अधिक बल देना शुरू करना चाहिये। फेफडे के साधारण व्यायाम से शीघ्र ही कुछ लाभ होगा यह व्यायाम करने मे सरल भी है।

फेफडो का व्यायाम किस प्रकार से करें

१ खुली हवा मे सीधे चले, सिर ऊपर हो, ठोडी अन्दर की तरफ रखे, कन्धे पीछे की तरफ फेके, फिर बहुत अच्छी तरह फेफडो मे हवा भरे और उसको एक या दो क्षण भीतर रखे रहे फिर धीरे से नि श्वास ले। इसका दिन मे कई बार अभ्यास करना चाहिए।

२ प्रात काल पहला कार्य और रात्रि मे अन्तिम कार्य यह होना चाहिए शरीर पर हल्के वस्त्र हो। पीठ को सीधी करके दीवाल के सहारे खडे हो जाना चाहिए और फेफडो को उसकी पूरी क्षमता के साथ शुद्ध वायु से भर लेना चाहिए। फिर श्वॉस को कुछ देर रोक कर पूरी छाती को धीरे से हाथ से दवाना चाहिए। पहले धीरे से फिर धीरे २ श्वॉस को अधिक समय तक रखना चाहिए। जैसे जैसे फेफडे शक्तिशाली होते जाये फुलाने और श्वाँस के रोकने का समय धीरे धीरे वढाना चाहिए।

३ ऐडी मिला कर पॉव के अँगूठो को वाहर फैला कर सीधे खडे हो जाये। हाथ कमर पर, अँगुलियाँ सामने की ओर अँगूठे पीठ की तरफ हल्के से रखे। अब फेफडे मे हवा भरनी चाहिए एव फेफडे के पीछे के निचले हिस्से मे हवा जाने के लिए जोर लगाना चाहिए। आरम्भ मे इसे छ बार करे फिर धीरे धीरे सख्या वढाये। औरते साधारणत फेफडे के इस हिस्से का व्यायाम कसे कपडे पहनने के कारण नही कर पाती।

४ उसी अवस्था मे फिर खडे होकर फेफडे के ऊपरी हिस्से मे धीरे धीरे वायु भरे। फिर वायु से फेफडे के नीचे के

चित्र नं० १
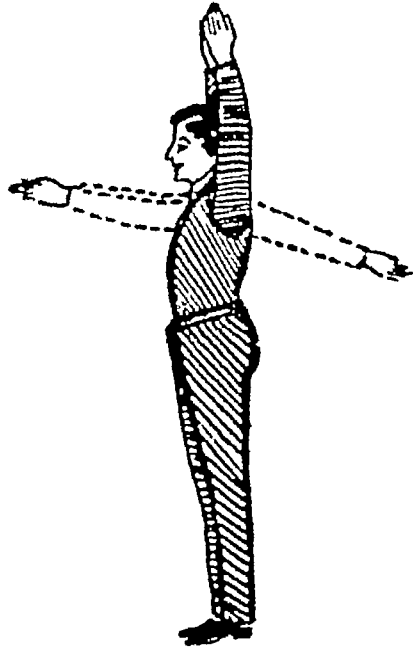
चित्र न० २

चित्र न० ३

चित्र न० ४

फेफड़ो और मांसपेशियो के व्यायाम

चित्र नं० ५
बाहों और ऊँगलियो का व्यायाम

चित्र नं० ६ चित्र नं० ७ चित्र नं० ८
कन्धे और बाहो का व्यायाम

चित्र नं० ९
नितम्ब और पैरो का व्यायाम
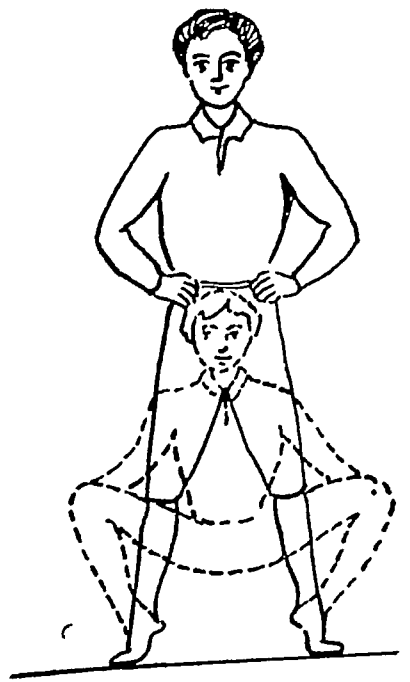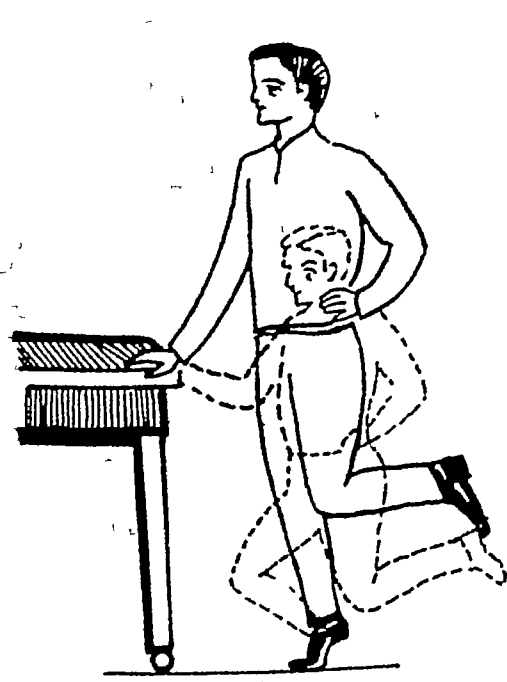
चित्र न० १० एव ११
नितम्ब और पैरो का व्यायाम

चित्र न० १२
पूरे शरीर का व्यायाम
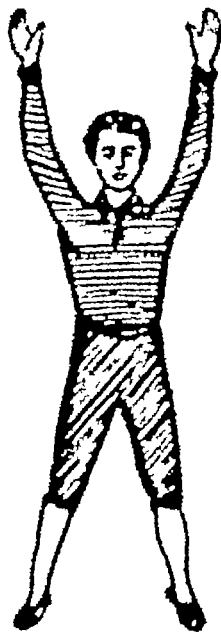
चित्र नं० १३

पूर्ण शरीर का व्यायाम
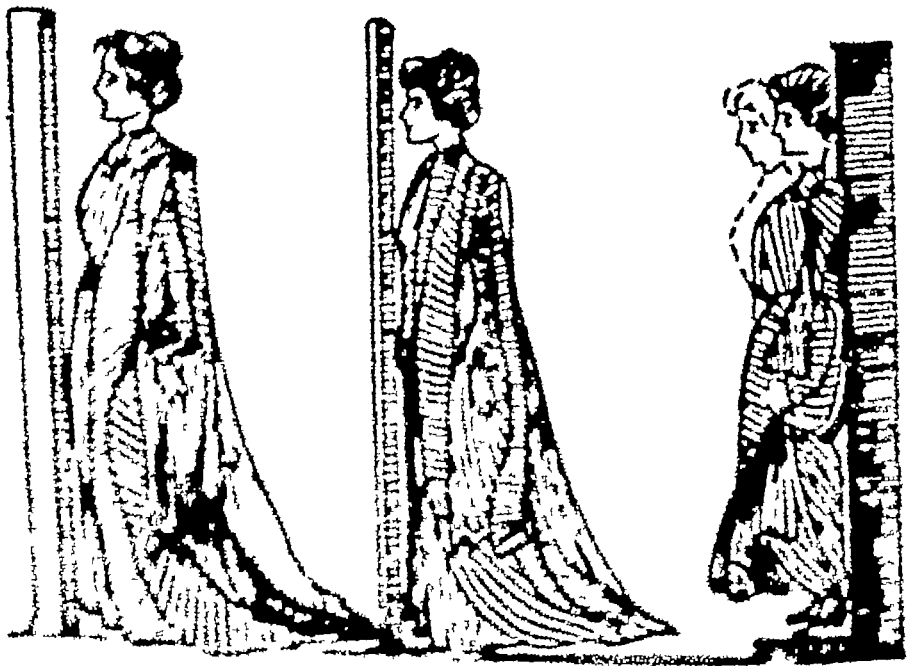
हिस्से मे जाने लिए जोर लगाये और फिर ऊपर की ओर। इस तरह बारी २ से ऊपर व नीचे की छाती की पेशियाँ सिकोडे। इसको कई बार दोहराएँ। फेफड़े के विकास के साथ ही यह यकृत या जिगर के लिए भी बहुत अच्छा व्यायाम है।

५. सीधे खडे हो जाइये। हाथ बगल मे फैलाले। फिर धीरे धीरे बाहे ऊपर उठाये और साथ ही पूरी श्वास ले जब तक फेफडे पूरे भर न जाएँ। फिर कुछ क्षण सास रोक कर हाथ को नीचे करें और साँस निकाल दे। इस प्रकार कुछ देर के बाद फेफड़े पूरे भर जाये तब कई बार बाहे ऊपर नीचे करे।

६. बाँहो को सामने की ओर बाहर की तरफ सीधी रखे फिर धीरे धीरे जितना सम्भव हो उन्हे पीछे की ओर ले जाये। उसी समय पूरी श्वास ले और हाथों को सामने की ओर लाये और श्वास निकाल दे। इसको कई बार करे। श्वास लिये हुए, हाथो को आगे कई बार करे पर जल्दी जल्दी करे। फेफड़े को पूरा भरना और खाली करना इस व्यायाम मे जरूरी है।

फेफड़ो और माँसपेशियो के व्यायाम

७. दाहिने हाथ को वृत्ताकार घुमाएँ। नीचे की तरफ कुछ मिनट तक, फिर गति उल्टी कर दे। अब कधो को पीछे की ओर जितना सम्भव हो करे और बाहे पहले की तरह घुमाएँ, बाएँ हाथ से भी ऐसा ही करे। फिर बारी बारी से दोनो हाथों से करे, पर उसी समय हाथो को पूरी तरह ढीला छोड दे जैसे ही हाथ शरीर से अलग हो, फेफडो को भी उसी समय पूरी तरह भरे और खाली करे।

८ जमीन पर उल्टा लेट जाएँ। कुहनी को मोड कर बगल मे हथेली को जमीन पर रखे, शरीर पूरी तरह फैला हुआ हो, शरीर को एकदम फैला कर रखे। फिर शरीर को एकदम

स्थिर बनाकर बाहो और पैरो के पजो पर ऊपर उठाये फिर शरीर को नीचा करे जव तक छाती जमीन को न छू ले। उसी समय फेफडे के व्यायाम को भी पूरे फैलाव मे करे। यह व्यायाम बिस्तर पर करे। पहले धीरे धीरे करे। कम से कम छ: बार करे।

९ सीधे खडे होकर हाथो को कमर पर रखकर फेफडो को पूरी तरह हवा से भर ले और हवा को फेफडे के नीचे के हिस्से मे जाने दे। (अन्य व्यायामो की तरह) नीचे के अगो को कडा करके पेशियो को खीच कर रखे। फिर कमर के ऊपर के हिस्से को आगे की ओर झुकाएँ। ऐसा करते समय फेफडो को एकदम खाली कर दे। फिर इसको सीधा करते समय फेफडे भर ले। ऐसा छ से वारह वार दोहराये। फिर इसी तरह फेफडे को भरते व खाली करते हुए आगे की ओर झुकने की बजाय पीछे की ओर झुके। फिर फेफडो मे श्वास रोक कर कमर से ऊपर के हिस्से को आगे पीछे कई बार झुकाएँ।

१० पिछले व्यायाम की तरह फिर वैसे ही खडे हो कर शरीर के ऊपर के हिस्से को कई वार दाहिनी तरफ और कई वार वाई तरफ झुकाएँ। हरेक क्रिया के बाद सीधे खडे हो जाये। फिर दाहिनी और वाँयी तरफ वारी बारी से करे। इस व्यायाम से सिर्फ फेफडो को ही लाभ नही होता वरन् शरीर मे एक आकर्षण व चमक आ जाती है।

११ पहले वाला ढग ही अपनाने के वाद बाहो और कुहनियो को जोर से आगे की ओर दबाये और उसी समय श्वास वाहर निकाले। फिर पीछे की ओर जितना सम्भव हो दबाएँ और उस समय फेफडे को पूरी तरह हवा से भरे।

भुजाओ और ऊँगलियो का व्यायाम

१२ हाथो और ऊँगलियो की पेशियो को इस तरह ढीला छोड दे मानो कलाई हाथ से अलग हो। फिर उनको तान कर

ऊपर नीचे अगल बगल चलाएँ। फिर कलाई से अलग वृत में घुमाएँ। ये सब गतिया बहुत शीघ्रता से करनी चाहिए। हाथ बिल्कुल निर्जीव की तरह हो जाना चाहिए।

अब बाँहो का ऊपरी हिस्सा शरीर के साथ समकोण बनाकर और आगे का हिस्सा नीचे की ओर लटका कर कुहनी की माँस-पेशियों को ढीला कर दे। फिर आगे की पूरी बाँह को वृत्ताकार घुमाये और हिलाये जैसे ऊपर कहा गया है।

कन्धे और भुजाओं का व्यायाम

१३. भुजाओं को बगल मे फैला कर दाहिने कन्धो को जितना सम्भव हो सके पीछे की ओर ताने और फिर जितना हो सके ऊपर ले जाये तथा सामने ले जाये। इस प्रकार कई बार घुमाना चाहिए। इसी तरह बाँयी ओर करना चाहिए फिर दोनो तरफ साथ-साथ। दाहिने हाथ की कस कर मुठ्ठी बाँध कर झटके के साथ सामने फेंके, फिर बाँये हाथ से, फिर दोनो हाथों से एक साथ। इसी व्यायाम को सामने, दाहिनी व बाँयी ओर फिर सीधे ऊपर की तरफ और फिर नीचे की ओर दोहराना चाहिए।

गले का व्यायाम

शरीर को स्थिर करके सिर्फ गले की माँसपेशियो को व्यवहार मे लाना चाहिए। आगे व पीछे, अगल व बगल गर्दन को धीरे धीरे घुमाना चाहिए। यह बहुत उपयोगी व्यायाम है और इसे खूब सावधानी व ईमानदारी से करना चाहिए।

नितम्ब और पैरो का व्यायाम

१५ कमर पर हाथ रख कर सीधे खडे होकर नितम्ब की पेशियो को छोड सारे शरीर की पेशियो को स्थिर करना चाहिए,

घुटनो को मोडे विना शरीर को आगे की ओर कई वार झुकाएँ, फिर पीछे की ओर कई बार। फिर हर दिशा मे कई कई वार करे, यह ध्यान रखे कि नितम्व की पेशियो को छोड कर अन्य पेशियाँ ढीली न पडे। अन्त मे नितम्वो को चारो ओर घुमाये।

१६ दाहिने पैर की माँसपेशियो को ढीला छोड दे और सव पेशियाँ दृढता से खीच कर रखे। फिर पैर को नितम्व की सधी से पेन्डुलम की तरह आगे पीछे हिलाये। इसको विना सहारे के एक टाँग पर खडे होकर करने का प्रयत्न करे। इससे पेशियो के विकास मे सहायता मिलती है। फिर वाये पैर से इसको दोहराना चाहिए। फिर घुटने के नीचे की पेशियो को ढीला छोडकर और जाँघ की पेशियो को स्थिर रख कर घुटने से नीचे के पैर को आगे पीछे करना चाहिए। गति की सख्या को वढाते जाना चाहिए।

टखने और पैर का व्यायाम

१७ पाँव मिला कर दृढता से सीधे खडे हो जायें और पजो और पाँव के अँगूठो के वल पर अपने सारे शरीर को ऊपर उठये और नीचे लाये।

पूरे शरीर का व्यायाम

१ वाहो को कान के पास ले जाकर ऊपर उठावे फिर घुटने मोडे विना उन्हे नीचे की ओर लाना चाहिए। हाथ की अँगुलियो का जमीन से स्पर्श कराये। गर्दन की पेशियो को ढीला छोडकर सिर लटकने देना चाहिए।

२ हाथो को छाती पर रखकर सिर को पीछे की ओर ले जाये फिर सारे शरीर को जितना सम्भव हो सके पीछे झुकाये।

३ दाहिने हाथ को सिर के ऊपर बाँये कधे की ओर मोडे और सारे शरीर के वजन को बाँये पैर पर छोड दे, दाहिने पैर

को थोडा बाहर की ओर फैलायें। जितना हो सके सारे शरीर को बाँयी तरफ जोर लगाये विना लटका दे। फिर इसको उल्टी तरफ। यह व्यायाम बहुत आनन्ददायक है पर इसे कुछ लोग ही करना जानते हैं। हाथ सीधे करके ऊपर करके खडे हो, पंजो के बल ऊपर उठते हुए छत को छूने का प्रयत्न करे।

सीधे खड़े होने का सही तरीका

सीधे खडे होने के महत्त्व को बहुत कम लोग समझते है। सीधे खडे होने से मनुष्य में एक गरिमा आ जाती है। उस गरिमा को मनुष्य और विशेषकर महिलाये बहुत चाहती है।

सही और स्वाभाविक ढंग से खडे होने के तरीके को यहाँ दिया जा रहा है। दीवार के सहारे खडे हो जाइये। ऐडी, नितम्ब, कंधे, सिर सब दीवार को छूएँ और ठोडी को भीतर की ओर छाती की तरफ रखे। इस तरह खडे होने मे हमे असुविधा होगी क्योकि यह सही तरीका नही है। टखने से आगे की ओर शरीर को हिलाते हुए दीवार के सहारे को त्याग दे। सिर्फ ऐडी को दीवार से स्पर्श कराये। अब यह तरीका ठीक है और शरीर को ऐसे ही रखते हुए आगे बढकर चलना चाहिए। इस व्यायाम के लगातार अभ्यास से हम आसानी से गरिमा के साथ सीधा चलना सीख सकते हैं।

व्यायाम की उन पद्धतियो को हमने यहाँ छोड दिया है जिसमे किसी तरह के यन्त्र की जरूरत हो। सिर्फ वही व्यायाम बताई गई, जिन्हे हम आसानी से अपने कमरे मे कर सकते है और जिनमे हमे किसी भी सहायक या किसी वस्तु की जरूरत न हो। छोटा मुग्दर आदि साधन है जो मासपेशियो के व्यायाम के लिए व्यवहार किया जाता है। सरल साधन थोडी सी माँस पेशियो के बढने के बाद, व्यवहार मे लाने अच्छे लगते हैं। उस अवस्था तक पहुँचने के बाद किसी व्यायामशाला मे भर्ती

होकर एव सुयोग्य शिक्षक से भी शिक्षा लेकर और अधिक विकास करना वाछनीय है ।

सभी व्यायाम ऊपर बताये है। शरीर को वनाने और स्वास्थ्य की रक्षा व उन्नति के लिए एवं कमजोर व्यक्तियो के लिए बहुमूल्य है लेकिन इसका मतलब पहलवान बन जाना नही है। ये व्यायाम उन पेशियो को सशक्त व कार्यशील बना देते है जो दुरूपयोग से बेकार हो गई है और जिनका समान रूप से सारे शरीर मे विकास न हुआ हो ।

आठवाँ भाग

रोगों की सरल चिकित्सा

हृदय का रोग

हृदय के कई रोग हैं जिनको दो श्रेणियों मे बाटा जा सकता है। आँगिक (Organic) और क्रियात्मक (functional)। इसमे पहला अधिक गम्भीर है। लेकिन यह कहना अधिक उचित है कि ७० प्रतिशत केस दूसरी श्रेणी में आते हैं। अधिक प्रचलित और साथ ही बहुत गम्भीर आँगिक तकलीफो मे हृदयावरणशोथ (pericarditis)। यह हृदय के आवरण के फूल जाने से होती है और हृदय के वाल्वो की अयोग्यता (Valvular insufficiency) है। हृदय की क्रियात्मक तकलीफो का कारण पाचनक्रिया की तकलीफ से होता है पहली श्रेणी मे यदि रोग बढ चुका है और रोगी जीवन की पराकाष्ठा पर पहुँच चुका है तो उसका सुधारना असम्भव है यद्यपि मनुष्य कुछ समय और जी सकता है। दूसरी श्रेणी के उदाहरणो का इलाज कारण को जानकर ही काफी हद तक ठीक किया जा सकता है।

उपचार

हृदयावरण शोथ (Pericarditis) के चिन्ह हैं बुखार आना, बाँयें चूँचुक (निप्पल) मे दर्द होना। बगल या कोख तक यह दर्द चला जाता है। जब अवस्था थोडी खराब हो तो एनिमा का व्यवहार करना चाहिये और रोज गीली पट्टी का व्यवहार करना चाहिये जिससे बुखार कम हो जाये। अन्त मे गठिया हो जाता है। हृदय के वाल्वो की अयोग्यता मे हृदय के वाल्व पर कुछ गन्दगी जमा हो जाता है जिसके चिन्ह है साँस लेने मे तकलीफ, बहुत दर्द नही होता पर हृदय की जगह काफी असुविधा सी लगती है। स्टेथोस्कोप से अजीब आवाज सुनाई

पडती है। एनिमा के व्यवहार से कभी कभी आश्चर्यजनक लाभ होता है। रक्त मे और गन्दगियो को जमने से रोक देता है जिससे वाल्व पर भी गन्दगी जमा नही होती जब कि रक्त की अधिक स्वच्छता और तरलता जमे हुए पदार्थ का शोषण कर लेती है और यथा-क्रम स्थिति उत्पन्न हो जाती है। क्रियात्मक (functional) तकलीफ जैसा बताया है कि पाचन-क्रिया की तकलीफ से होती है। आमाशय मे भोजन पर उफान की क्रिया के कारण गैस उत्पन्न होती है। यह गैस बहुत अधिक मात्रा मे भोजन पर उफान दबाव डालती है और हृदय के कार्य मे बाधा उत्पन्न होती है। इसका मुख्य चिन्ह है साँस छोटी हो जाना और कम्पन (धडकन) बढ जाना और हृदय भी अनियमित रूप से धडकने लगता है। कभी कभी तो हृदय की धडकन एकदम वन्द सी लगने लगती है। इन उदाहरणो को देखते हुए बद-हजमी का उपचार करना चाहिये।

एनेमिया

यह रक्त की वीमारी है जो रक्त मे श्वेतक (albumen) और लाल रक्त कण की कमी से होती है। यह वीमारी औरतो को पुरुपो से अधिक होती है। वहुत छोटे और वहुत बूढे लोगो को अधिक होती है। खास कर धैर्य की कमी, शीघ्र क्रोध आने से और मूर्च्छा आदि से यह होती है। इसके प्रमुख कारण है गलत स्वास्थ्य के नियम, खराव भोजन, व्यायाम के अभाव तथा अधिकता, वहुत दु ख आदि से। इसके चिन्ह है अधिक पीला-पन, पेशियाँ कमजोर हो जाना, नाडी की फडकन कम हो जाना, चक्कर आना, थोडे परिश्रम से साँस फूलना और मूर्च्छा आना है। इसी तरह की दूसरी बीमारी है जिसे एसेन्सियल एनेमिया (Essential Anaemia) या प्रोग्रेसिव परमिशयस एनेमिया (Progressive Permicious Anaemia) है जिनसे मृत्यु हो जाती है लेकिन पहली तरह के एनेमिया से मृत्यु नही होती, वरन् यह उपचार से ठीक हो जाता है।

उपचार

रक्त की अवस्था को सुधारना चाहिये। रक्त सिर्फ हमारे खाये हुए भोजन से बनता है। अत. इसमे पाचन क्रिया का ठीक तरह से काम करना महत्व रखता है। जो पदार्थ रक्त के लिए आवश्यक हैं उन्हे भोजन के साथ लिया जाये। अत भोजन का चुनाव ठीक होना चाहिये। शरीर के भीतर एनिमा से सफाई चाहिए करनी। एनिमा का व्यवहार उतनी ही बार करे, जितनी बार रोगी सहन कर सके। इस पर बहुत जोर नही देना चाहिए। त्वाच को स्फूर्तिदायक बनाये रखना चाहिए। गर्म स्नान करके तौलिये से धीरे-धीरे रगड कर पौछना चाहिये। नहाने के तुरन्त बाद आधा लिटर गर्म जल घूंट-घूंट पीना चाहिए। आधा घटा तक और कुछ भी नही खाना-पीना चाहिये। रक्त सचालन ठीक रखने के लिए हल्का व्यायाम करना चाहिए। अगर रोगी बहुत कमजोर हो तो व्यायाम की जगह मालिश करनी चाहिए। दूध का सेवन लाभकारी है। दूध की मात्रा दो से चार आउन्स तक एक बार मे हो। चौखर सहित गेहूँ की बनी हुई चीज दिन मे दो बार लेनी चाहिए जिससे शरीर को फास्फेट प्राप्त हो। आयरन की बहुत आवश्यकता होती है इसके लिए पालक का साग, चुकन्दर, टमाटर और काले रग का अगूर लेना चाहिए। अन्त मे दीर्घ श्वास लेना अथवा प्राणायाम बहुत अच्छा है, जिससे रक्त मे आक्सीजन मिल जाती है।

रक्त जहरबाद (Blood Poisoning)

यह बहुत से कारणों से हो सकता है। घाव के संक्रामक होने से, नसीली गैस श्वास के साथ जाने से या और कुछ धातु के खाने से ताम्बा, लैड आदि। लेकिन सबसे साधारण कारण बेकार पदार्थों का आत से रक्त द्वारा शोषण है। यह विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि ९९ प्रतिशत लोगो को रोग इसी कारण से होता है। तीव्र विष खरगोश की बडी आँत के अन्तिम

भाग मे डालकर देखा गया तो उसकी मृत्यु दो मिनट में हो गई। वडी आँत की दीवारों द्वारा शोषण नगण्य होने पर भी तथ्य यह है कि विपैला पदार्थ जो शरीर में पैदा होता है, उसकी क्रिया शरीर मे शीघ्र नही होती। यद्यपि ऐसे पदार्थ तेज विषैले नही होते फिर भी त्वचा की सब वीमारिया, गठिया, वातशूल और इसी जाति की दूसरी वीमारियो का नि सदेह यही कारण है।

उपचार

मनुष्य के निष्कासन विभाग की सफाई एनिमा द्वारा करनी चाहिए जिससे रक्त मे गन्दे पदार्थ जमा न होने पाये और एनिमा के लगातार व्यवहार से सफाई करते रहना चाहिए। प्रारम्भिक अवस्था मे टर्किश स्नान लेने से त्वचा के रास्ते से उस अग की सफाई होती है। उस अग को स्फूर्तिदायक रखना चाहिए। कभी-कभी रगड-रगड कर पौछना चाहिए। भोजन सादा हल्का, कभी भी वहुत ज्यादा नही खाना चाहिए। पानी खूब पीना चाहिए ताकि रक्त तरल अवस्था मे रहे और रक्त मे आक्सीजन मिलाने के लिए दीर्घ श्वास लेना या प्राणायाम करना चाहिए।

क्षय रोग

सब रोगो मे क्षय रोग वहुत विस्तार से फैला हुआ है और मनुष्य के जीवन का नाशकारी है। हर साल वहुत बडी सख्या मे लोग इस बीमारी से मरते है। यह रोग प्रकृति से प्राप्त नही है लेकिन इसका निवारण करना चाहिए और प्रारम्भिक अवस्था मे निश्चित रूप से ठीक भी हो सकती है। ज्यादातर रोगियो मे यह ठीक हसुली (कोलाबीन) के नीचे के हिस्से मे शुरू होती है क्योकि यह फेफडे का वह हिस्सा है जो बहुत कम इस्तेमाल होता है और सुरक्षित रखा रहता है और श्वास लेने मे साधारणत अधिक व्यवहार नही होता। अधिकतर जीवन के

व्यापार में कन्धे आगे की ओर कर लिए जाते है जिससे फेफडो मे सिकुडन पैदा होती है और वे कमजोर होकर यक्ष्मा के जीवाणु के रहने का स्थान वना देते है। एक स्वस्थ फेफडो वाला मनुष्य दिन मे लाखों क्षय रोग के कीटाणुओ को सास के साथ लेता है। अत. इसके वचाव का सीधा तरीका है कि फेफडे को दीर्घ श्वास द्वारा दिन मे हजारो वार फुलाना चाहिए।

उपचार

सवसे पहले जो अपने वस की वात है वह यह है कि इस रोगी को ऐसे स्थान पर जाना चाहिए जहाँ निम्नलिखित तीन वातो की सुविधा मिले (१) सूखा स्थान (जहाँ वायु मे नमी कम हो), (२) स्वच्छ वायु और (३) ताजा तथा पवित्र दूध वहुतायत में मिल सके। यह वात सम्पूर्ण जगत मे मान्य है कि स्वच्छ वायु इस वीमारी के लिए वहुत उपयोगी है। इसलिए जितना भी घर के वाहर रह सके रहना चाहिए और सोने के समय अपने कमरे की खिडकिया पूरी तरह खुली रखनी चाहिये। विना इस वात की परवाह किये हुए कि अपने को गर्म रखने के लिए बहुत अधिक ओढने की चादर की आवश्यकता होगी। जल्दी ही आप इसके अभ्यस्त हो जायेंगे क्योकि आप एक वहुत वडी स्वास्थ्य की वाजी लगाये हुए हैं। यदि गाव या देहात मे जाना असम्भव सा मालूम हो तो इसका इलाज घर पर ही जितना सम्भव हो ध्यान रख कर करना चाहिए। यह वहुत आवश्यक है कि खाद्य पदार्थ मे काफी सुधार हो, पाचन क्रिया को वल मिले ताकि पाचन शक्ति वढे। इसलिए रुचिकर भोजन होना चाहिए, आतो को भी कम मेहनत करनी पडेगी। खासी को अच्छा करने के लिए जितनी भी दवाइयो का इस्तेमाल होता है वे सव केवल दर्दनाशक हैं। अभी तक यह अन्वेषण नही हुआ है कि कोई भी ऐसी दर्द-नाशक दवा हो जो प्राकृतिक पाचन-सस्थानो मे अवरोध न पैदा करे और इसी से पाचन क्रिया मे बाधा पडती है।

बडी ग्रात की सफाई पानी द्वारा एनिमा से करनी चाहिए जिससे ग्रातो का ग्रवरोध हट जाये और पाचन क्रिया सुगमता-पूर्वक कार्यान्वित हो जाये। तभी कुछ ऐसी खाने की चीजे देनी चाहिएँ जिसे आते आसानी से ले सके और पचा सके।

इसके लिए सबसे बढकर पवित्र दूध है। एक माह तक केवल दूध पर रहना चाहिये। एक गिलास दूध प्रत्येक ग्राध घंटे पर लेना चाहिये जिसका खास सिद्धान्त है कि शरीर को ऐसा खाद्य मिलता रहे जो ग्रासानी से पच सके तथा उपयोगी हो। ग्रापका वजन बहुत जल्दी बढ जायेगा ग्रीर कभी-कभी थोडी मात्रा मे दूध लेना ग्रावश्यक है जिससे पाचन सस्थान पर जोर न पडे। तत्पश्चात् महीना दो महीना बाद आप ठोस खाद्य-पदार्थ ग्रगत' ले सकते है जिससे आतो की पाचन शक्ति पर जोर न पडे। उदाहरण के तौर पर मीठा मक्खन (क्रीम), सिकी हुई पाव रोटी इत्यादि। दस बूद लोबान (क्रिअसोट) सुबह ग्रौर शाम सास लेने के साथ देना ग्रावश्यक ग्रौर लाभदायक है। यह श्वास नालियो को साफ करने के लिए ग्रच्छी दवाई है। पूरा स्नान उन लोगो के लिए जो कुछ चल सकते है और जो ज्यादा शक्तिहीन है उन्हे गीले तोलिए से शरीर अच्छी तरह पोछ देना ग्रावश्यक है। दीर्घ श्वास लेने का अभ्यास करना चाहिए। सुधार की हुई तथा शक्तिदायक खाद्य सामग्री ग्रापके लिये खाने योग्य सिद्ध हो सकती है साथ मे थोडा व्यायाम ग्रौर शुद्ध हवा जीवन दायिनी है। हल्का सूर्य किरणो का स्नान करना चाहिए। ध्यान रहे कि ग्रच्छा होना ग्रापके हाथ मे है तथा ग्रापके साहस और धैर्य पर निर्भर कर सकता है।

जुखाम

जुखाम वायु मण्डल मे उपस्थित तापक्रम के ग्रचानक परि-वर्तन से तथा शरीर मे रोमकूपो मे ग्रचानक बन्द हो जाने से होता है। कब्ज जुखाम का प्रधान कारण है। मजबूत और

विकसित फेफडे, साफ अन्तड़ियां और चमड़े वाले शरीर में जुखाम के कीटाणु मुश्किल से पाये जाते है। फेफड़ो का पूर्ण विकास और वड़ी आँत की सफाई ही इसका पूर्ण रूप से इलाज है। पैरो को गर्म और सूखा रखना चाहिए। कभी भी गर्म कमरे मे वैठना या लेटना नही चाहिए वरन् ऐसी जगह वैठना उचित है जहां सूखा और ठण्डा वातावरण हो। यह वीमारी दो तरह से होती है एक तो नासिका द्वारा दूसरी गले द्वारा। नासिका का जुखाम प्रथमत नाक की झिल्ली के परदो और फेफड़ों मे सूजन कर देता है उसके वाद फुन्सिया हो जाती है। फिर प्रकृति इस नाजुक ऊत्तक (टिस्सु) को वचाने के लिहाज से इसके ऊपर एक कडा पर्दा डाल देती है जिसे पुराना जुखाम कहते है।

उपचार

एनिमा का प्रयोग नियमित रूप से प्रतिदिन करना चाहिये और एनिमा मे गर्म जल जितना सहन किया जा सके, व्यवहार करना चाहिये और ठण्ड न लगे इस वात का ध्यान रखना चाहिए।

एरिसिप्इलस (Erysipelas)

यह वीमारी खून की खरावी के कारण होती है। शरीर मे विचित्र रूप से जहर हो जाता है जिसका उभार शरीर मे लाल फफोले छालो की तरह होता है। यदि उस फूली जगह पर ऊँगली से दवाया जाये तो कुछ क्षण के लिए वहा सफेदी छा जाती है। यह वीमारी ज्यादातर चेहरे और सिर मे होती है। अधिकतर उदाहरणो मे वडी आत मे रुकावट होने से उफान की क्रिया वहुत दिनो के जमे हुये पदार्थो मे होने से होती है। अत स्थायी नीरोगता प्राप्त करने के लिए उस स्थान को अच्छी तरह से साफ करना आवश्यक है। उस फूले स्थान को पहले दही से मालिश करे और यदि यह सम्भव न हो तो दूसरा अच्छा इलाज

है कि यीस्ट को चारकोल मे मिलाकर लगा देवे। लैकटिक ऐसिड जो खट्टे दूध मे रहता है निश्चित ही इस जहरीले घाव की दवा है।

अजीर्ण का रोग

यह बीमारी अचानक नही होती है। यह प्रकृति का कोप है जिसके नियम का आपने उल्लघन किया है। आप अपना भोजन खूब चबा-चबा कर खाये ताकि लार के साथ मिश्रित हो जाये तथा गस्से को एक जगह मु ह मे रोक कर न रखिए। जब गस्सा लार के साथ खूब घुल जाये तब उसे निगलिये ताकि आसानी से पेट मे चला जाये। खाद्य पदार्थो मे परिवर्तन करना उतना ही आवश्यक है जितना कि भोजन करने के तरीको मे। आव की बीमारी पेट की झिल्लियो मे ठण्ड लगने के कारण हो जाती है। इन झिल्लियो पर चिकनी आव का अस्तर पड जाता है जो पाचन यन्त्रो को कार्यरत नही होने देते है और खाद्य पदार्थो पर चिकनी आव की परत डाल देते हैं ताकि आमाशयिक रस (गेस्ट्रीक ज्यूस) जो कि पाचन क्रिया की अभिन्न वस्तु है इसके कार्य मे भी अवरोध पैदा कर देते है।

उपचार

पहले सप्ताह प्रत्येक दिन एनिमा लेना चाहिये। दूसरे सप्ताह एक दिन छोड दूसरे दिन मे तत्पश्चात् जैसी आवश्यकता हो। एक गिलास गरम जल का प्रत्येक भोजन के एक घण्टे पहले सेवन कीजिए। विशेषत सवेरे के जलपान के पहले। जलपान मे काफी मात्रा मे अच्छे पके हुए फल खासकर नारगी और अँगूर ले। तदुपरान्त गेहूँ का दलिया या रोटी लेनी चाहिए। खाने के साथ कुछ पीना नही चाहिए। अगर पेट वहुत कोमल या कमजोर है तो थोडा-थोडा दिन भर मे पाँच छ. वार खाना चाहिए। एक ही वार पेट भर कर खाने से यह ज्यादा अच्छा है। खाना प्रत्येक ग्रास को खूब चवा कर खाना

चाहिए तथा दीर्घ निश्वास लेने का भी परिश्रम करना चाहिये जिससे पाचन क्रिया को वल मिले। इस तरह का इलाज अगर लगन के साथ किया जाये तो खराव से खराव सग्रहणी रोग से आदमी नीरोग हो जायेगा तथा अनेक तरह के दुखो से छुटकारा मिल जायगा।

गठिया रोग (Rheumatism)

गठिया या वात का रोग पुराना या तीव्र गठिया खून की वीमारी है क्योकि खून मे यूरिक ऐसिड की वहुतायत हो जाती है। यकृत को ज्यादा और अपूर्ण तरीको से कार्यरत होने से ही ज्यादा मात्रा मे यह ऐसिड खून मे जमा हो जाता है। अपूर्ण पौष्टिक आहार नही मिलने से मल का निष्कासन रुक-रुक कर होता है। याने कितनी ही वार जाना पडता है सवसे वडा कारण यही है। फल यह होता है कि खून मे विजातीय द्रव्यो का ज्यादा मात्रा मे समावेश हो जाता है। तकलीफ जोडो मे ऊँगली की गाठो मे पैर के अँगूठे के जोड़ों में घुटनो मे मालूम होती है या दर्द होता है। परन्तु इस वीमारी मूल कारण अन्यत्र ही है।

उपचार

सवसे प्रथम ऐसिड का परिवर्तन आक्सिडेशन या उपचयन (Oxidation) के द्वारा करना होगा। यकृत को अधिक क्रिया-शीलता में परिवर्तन करना होगा। सवसे अच्छा तरीका है कि इसे पूर्ण करने के लिए प्रत्येक दिन एनिमा मे गरम जल देकर इस्तेमाल करना चाहिए। तत्पश्चात् ठण्डा पानी इस्तेमाल करना चाहिए जो दोनो तरफ से पुष्टिकारक टॉनिक का काम करेगा। जल लेने का प्रयोग एक सप्ताह तक दिन मे दो वार फिर एक माह तक प्रतिदिन करना चाहिये। रोजाना धूप स्नान कुछ देर तक लेना चाहिये जिससे मास पेशिया कार्यरत होने लगे। अयोग्य जोडो पर गरम तेल की मालिश हल्के-हल्के होनी चाहिये। खाने मे हरी सब्जी, सीकी हुई रोटी दूध और फल

होने चाहिएँ। स्टार्ची खाना जैसे आलू, मैंदे की रोटी, बीन इत्यादि का सेवन नही करना चाहिए। एक कप गरम जल का सेवन जलपान के आधे घण्टे पहले करना उपयुक्त होगा। इस इलाज से कडी से कडी बीमारी भी जल्दी दूर हो सकती है।

टाईफाइड फीवर (Typhoid Fever)

इस भयानक बीमारी का कारण पेट और आँते है, जहाँ से यह बीमारी आरम्भ होती है। खासकर यह बडी आत से सम्बन्धित है। यह बदबूदार कीडो से उत्पन्न होती है जो कूडे करकट मे पाये जाते है। यह कीटाणु अशुद्ध जल, दूध तथा टूटे-फूटे हुए नालो से उत्पन्न गैसो द्वारा जो कि खाद्य पदार्थों मे मिल गये है खास नालियो द्वारा शरीर मे प्रवेश हो जाते है। टाईफाइड के कीटाणुओ को यदि हमारे शरीर के शक्तिशाली कीटाणु एक बार नष्ट कर दे तो मनुष्य जो भीतर और बाहर से साफ सुथरा है, टाईफाइड बुखार हटाने मे समर्थ हो जाता है क्योकि फिर टाईफाइड के कीडो को बढने का मौका ही नही मिलता है। बडी आत मे से एक विशेष प्रकार का द्रव्य निकलता है जो आमाशय के बेकार के पदार्थ के साथ मिलकर फेन हो जाता है तथा सडी हुई गैस उत्पन्न होती है। यही गैस सूक्ष्म कीटाणुओ का घर है जहाँ लाखो की सख्या मे कीडे बढ जाते है। इस उफान की क्रिया से एक अन्य तरह के कीडे उत्पन्न होते है जिससे टाईफाइड के रोगियो की आतो मे सूजन हो जाती है।

उपचार

टाईफाइड के रोगियो पर दबाव डालना या शारीरिक श्रम देना बडी भयकर भूल है। बीमारी का कारण मालूम होने से सामान्य ज्ञान कहता है कि सबसे पहले सडे हुए मवाद को जिससे कीडे बढते है हटाना चाहिए। जब यह मालूम हो जाये कि यह बीमारी हो गई है तो गरम पानी से काम करना चाहिए। उतना पानी पिलाना चाहिए जब तक पेट अपने आप उलटी कर न फेक

दें। पानी पीने में जरा भी डरना नही चाहिये। यदि पेट कड़ा है या पानी लेने मे असमर्थ है तो अँगुली डाल कर उल्टी करनी चाहिये इस तरह से अन्तरियो की धुलाई हो जायेगी तथा जो पदार्थ पेट में थे, नही पचे थे उनका निष्कासन हो जायेगा जिसमे लाखों टाइफाइड़ के कीटाणु दिखाई पडेंगे। तब उसे बडे प्याले में मूत्र गर्म पानी थोडा नमक मिलाकर देना चाहिये। उल्टी करने के बाद रोगी को एक घण्टा या कुछ ज्यादा आराम से लेटे रहने देना चाहिये। पुन एनिमा मे गुनगुना जल भर कर देना चाहिये और रोगी दस पन्द्रह मिनट तक रोके रहे। तत्पश्चात् रोगी को पसीना आना चाहिये जिससे माँस की झिल्लियाँ या छिद्र खुल जाये। इसके लिये सबसे बढिया भीगा हुआ कपडे का पुलटिस ही लाभदायक है और ऊपर से पानी छिड़कते रहना चाहिये फिर कम्बल से ढक देना चाहिये जिससे आराम हो। उसके पैरो को ऊनी कपड़े लपेट कर रख दे और सिर पर भीगा ठण्डा तोलिया डाल दें। साँस लेने के लिये ताजी हवा लेनी चाहिये। जब खूब पसीना निकल जाये तब उसे गर्म पानी और साबुन से धोना चाहिये और उसे चादर से ढक देना चाहिये और नीचे की ओर मालिश करना चाहिये तथा पीने के लिये ठडा जल दीजिये। इस तरह का प्रयोग गुनगुने पानी से प्रतिदिन होना चाहिये। रोगी बहुत कमजोर हो तो इस इलाज मे सुधार हो सकता है। यदि रोगी प्यासा हो तो जितना पानी पी सके उतना ठण्डा पानी पिलाना चाहिये तथा उसे स्वच्छ वायु का सेवन करने दीजिये। प्रत्येक दिन यह धुलाई का काम करना चाहिये तथा ऊपरी स्नान जरूरी है। परन्तु ऊपरी स्नान मे केवल ठण्डे पानी का प्रयोग होना चाहिये। जब ज्वर बहुत अधिक हो तो रोगी इस प्रकार बहुत ही शीघ्र स्वास्थ्य लाभ कर लेगा। जब तक भूख न लगे या खाने की इच्छा न हो उसे नही देना चाहिये।

पित्त का बुखार (Belious Fever)

इस बीमारी का प्रादुर्भाव ठण्ड लगने से तथा पेट की बीमारी से या ज्यादा दिन ज्वर से आक्रान्त रहने के कारण ही होता है। जीभ की शक्ल विकृत हो जाती है और उस पर पीला अस्तर चढ जाता है तथा भोजन की ओर से अरुचि हो जाती है। बडी आँत मे अवरोध हो जाता है तथा ऐसिड जो पाचन क्रिया का सहायक तथा बहुतायत से क्षार पदार्थ यकृत द्वारा निकलते रहते है जो खाद्य वस्तु भी पकाने मे सहायता देते है उसका निष्कासन भी बन्द हो जाता है। इस कारण थोडा ठण्ड लग जाने से भी शरीर के छिद्र अभी तक असीमित कार्य कर रहे थे बन्द हो जाते है उसका बुरा नतीजा पेट मे, फेफडे मे और वृक्क (कीडनी) पहुँच जाता है जिसके कारण ज्वर हो जाता है। प्रकृति अपने को इस कूडे कचडे को वाहर निकालने मे अशक्त पाती है तव आखिरी उपाय उसके पास केवल इन खाद्य पदार्थों को भस्म ही कर देना पडता है।

उपचार

इसका इलाज बहुत साधारण है। एनिमा का इस्तेमाल कीजिये और त्वचा के सूक्ष्म छिद्रो को खोलिये। अन्तडियो को साफ कीजिये तथा गरम चादर को पेट पर लपेटिये। इस मालिश और स्नान के साधारण इलाज से पित्त के बुखार से आक्रान्त रोगी को भी तीन दिन मे छुटकारा मिल जाता है और रोगी नीरोग हो जाता है। हर तरह के नशे की चीजो से परहेज करना होगा। भूख जब लगे तभी भोजन करना चाहिये।

पेचिश (डिसेन्ट्री)

यह बडी आँत की बीमारी है। विजातीय द्रव्य पेट मे अनपची अवस्था मे रहने से उस हिस्से मे सूजन हो जाती है और सूखी क्षार वस्तु नाजुक म्यूकस (झिल्ली) पर चिपक जाती है। इन

क्षार वस्तुओं से एक अजीव तरह का ऐसिड पैदा होता है। जिससे एक तरह के कीडे पैदा होते हैं जो पेट मे त्याज्य क्षार को शुरुआन मे खाते हैं और फिर पेट के भीतर की सतह को खाने लग जाते हैं। इसी को पेचिश कहते है।

उपचार

कड़ी या पुरानी पेचिश मे रोगी को लिटाये रखना चाहिये। नितम्ब का भाग कन्धे से ऊपर उठा रहना चाहिये। इसके लिये फुहारे वाला एनिमा व्यवहार करना चाहिये। इससे वडी आँत के निचले हिस्से की तकलीफ और सिकुड़न मे राहत मिलेगी। कडी पेचिश मे राहत मिलेगी। कड़ी पेचिश मे रोगी को एक क्षण भी बैठा कर नही रखना चाहिये। हरदम वैड़ पैन का व्यवहार करना चाहिये। वडी आँत को गर्म पानी मे थोडा थोडा नमक मिलाकर धीरे-धीरे साफ करना चाहिये।

अतिसार का रोग

इस वीमारी मे प्रकृति स्वय विजातीय द्रव्य जो पाचन नालियाँ मे अपरिपक्व अवस्था मे रहते है उनके निष्कासन करने मे सहायक होती है। अपरिपक्व अवस्था मे खाद्य पदार्थो के निकलने के थोडी देर वाद ग्रन्थियो मे अस्वाभाविक उत्तेजना होने लगती है जिससे सड़े हुए और दुर्गन्धयुक्त पदार्थ बाहर निकल जाये जो कि अन्तरियो की सूजन की वजह से अपच अवस्था मे थे। यदि इस निष्कासन से आराम नही हुआ तो सूजन हो जाती है जिसे पुराना अतिसार कहते हैं।

दोनों हालत मे इलाज एक सा ही है। एनिमा का इस्तेमाल तव तक कीजिये जव तक वडी आँत पूरी तरह साफ न हो जाये। सोने से पहले गर्म जल से स्नान कीजिये और वदन को स्नान करते समय अच्छी तरह से रगडना चाहिये। भोजन मे सावधानी

रखनी होगी। इससे अच्छा होगा कि दो एक दिन का उपवास करले ताकि खराव से खराव रोग का लक्षण दूर हो जाये या समाप्त हो जाये।

नाडियों का रोग

बहुत से लोग समझते है कि भीरुता नसो की कमजोरी से होती है परन्तु ठीक इसका उल्टा है। नस नाडियो की अत्यधिक सवेदनशीलता और नाडी दौर्बल्य इस रोग का कारण होता है। नस नाडियो की स्फुरण अथवा बल शीघ्र शिथिल पड जाता है।

इस उत्तेजना के असेक कारण हैं। प्राणदायिनी जलवायु और शारीरिक श्रम मे तथा भोजन और निद्रा के लिये वहुत कम समय देना आदि इसके कारण है। मनोरजन और विश्राम की उपेक्षा भी इसके बडे कारण है। इसके लिए सबसे वडा कारण वडी आँत की कब्जी, बदहजमी है। इसलिये पोषक तत्वो का नसो मे अभाव हो जाता है। चाय काफी तम्बाकू का सेवन भी इस बीमारी से आक्रान्त जीवन का दु खदायी कारण होता है।

उपचार

आप इस उद्यमशीलता अथवा अथक परिश्रम पर रोक लगाइये जो आपको बहुत तेजी से आगे बढाये लिये जा रहा हैं। आप इस चहल पहल और कार्यरत जीवन से कुछ समय के लिये अपने को अलग रखिये ताकि यह आलस्य चला जाये और आराम से आप कार्यरत हो। बडी आँत को नियमित रूप से साफ करना चाहिये और इस स्नायु दुर्बलता को हटाना होगा।

यदि आप स्नायु दुर्बलता से पीडित हैं तो आपको सग्रहणी हो सकती है। खासकर भोजन सम्बन्धी उपचार का पालन करना होगा जो कि सग्रहणी के रोगी के लिये बताया गया है।

दीर्घ श्वास लेने और निकालने का अभ्यास (प्राणायाम) शुरू कीजिये जिससे श्वास नालियाँ, फेफड़े सशक्त बनें। शक्तिशाली फेफड़े वालो को स्नायु दुर्बलता नहीं सताती है। खुली हवा मे काफी कसरत कीजिये परन्तु उतना ज्यादा नही कि थकान महसूस हो। सब कार्य सीमित रूप से करना चाहिये। केवल निद्रा लेने में सीमा का प्रतिबन्ध नही है क्योकि आप बहुत ज्यादा नही सो सकते हैं। सोने की आदत डालनी चाहिये और आराम से १० घण्टा निद्रा ले लेना आवश्यक है।

इसमे भोजन का भी बडा महत्व है। जैसेकि पहले कहा गया है कि स्नायु दुर्बलता के पीडित लोग भोजन तथा नीद बहुत कम लेते हैं भोजन के पदार्थ जो आसानी से पचकर चर्बी बन जाय उसी का सेवन आवश्यक है। वर्तमान मे ओलिव तेल सब से ज्यादा स्नायु पीडित मनुष्यों के लिये हितकर है। पहले एक छोटी चम्मच के बराबर एक दफा भोजन के साथ लेना चाहिये फिर क्रमश. बढा कर प्रत्येक भोजन के समय ४ छोटे चमचे के बराबर लेना चाहिये। यदि आप ओलिव तेल नही ले सकते तो उसकी जगह मीठा मक्खन का या मलाई का इस्तेमाल कीजिये। सलाद को भी इस्तेमाल कर सकते है।

धीरे से और बडे सयम से अपना सब काम कीजिये। फालतू काम से मन हटाइये। जीवन को आसान और सरल बनाइये और प्रत्येक वस्तु मे सन्तोष का अनुभव कीजिए अपने को सन्तोषी बनाइये।

साराश यह है कि अँतडियो को साफ रखिये। ज्यादा सोना चाहिये। धीरे २ भोजन करना चाहिये। नि शंक होकर व्यायाम करना चाहिये लेकिन क्षमता से अधिक नही। फेफडो को गहरा प्राणायाम करके मजबूत बनाइये और जीवन को सुखी बनाइये। इस आदेश के अनुसार यदि पूरी तरह कार्य किया जाये तो कैसी भी स्नायु दुर्बलता से छुटकारा मिल जायेगा।

सिर दर्द

इस पीडादायी रोग की उत्पत्ति कई कारणो से सम्भव है। सामान्यत. इस रोग का कारण आमाशय मे पाया जाता है। आमाशय मे जब कभी कोई अनुचित अथवा अनावस्यक वस्तु विद्यमान रहती है तब वह अपनी उपस्थिति से निमोगेस्ट्रिक नर्व (Pneumogastric Nerve) को, जो आमाशय को मस्तिष्क से जोडती है, कुपित कर देती है। वस्तुत यह अजीर्ण का एक साधारण सा लक्षण है। अत्यधिक भोजन बडी आँत के इस अर्जीर्ण रोग के सामान्य कारणो मे से एक प्रमुख कारण है और इसी सिद्धान्त पर सिद्ध होता है कि पक्षाघात (लकवा) और मूर्छा सम्बन्धी रोगो की उत्पत्ति के कारण भी आमाशय मे अनावश्यक वस्तुओ की उपस्थिति है।

उपचार

मल का बडी आँत मे अधिक समय तक टिकना सिर दर्द मे वृद्धि का कारण बनता है। इसके आक्रमणो से बचने के लिए नियमित जीवन बीताना चाहिए, अधिक समय तक मानसिक कार्य से बचना चाहिए, मद्य सेवन और चाय तथा कॉफी से दूर रहना चाहिए। मिठाइयाँ, तली हुई वस्तुओ का त्याग करना चाहिए। सादा, सतुलित भोजन फलो के साथ खाये। किन्तु अधिक रात्रि बीतने के पश्चात् कभी नही खाना चाहिए। अपने फेफडो को भी व्यायाम द्वारा विकसित करे। शरीर की समस्त माँस पेशियो के साधारण व्यायाम मे एक दिन का व्यवधान न आने दे और व्यायाम का क्रम न टूटने दे। प्रति रात्रि सोने से पूर्व उदर को अग मर्दन (मालिश) द्वारा तथा एनिमा के प्रयोग द्वारा वृहदन्त्र को साफ रखे। सिर दर्द के प्रकोप से बचने के लिए आँतो को पूर्ण तथा साफ रखे। गर्म व ठंडे जल द्वारा स्नान करे और स्नान करने से पूर्व एक कप गर्म नीबू-जल का ले जिसमे चीनी बिल्कुल न हो। जल इतना गर्म रहे कि आप उसे घूँट घूँट कर पी सके।

जलोदर (Dropsy)

इस रोग मे आंत का मुँह वन्द हो जाता है। वृक्क अपने मृदुल नाड़ी जाल द्वारा आंतो को रिक्त करने के प्रयत्न मे कमजोर हो जाते हैं और सूक्ष्म कोशिका नलियाँ (capillaries) दूसरे अँगो के भी कार्य सम्पादित करने के प्रयत्न मे असहाय हो जाती है। अत. ऊत्तक एव पेशियाँ अपने अन्तिम छोर तक त्यागने योग्य द्रव्य से पूरी तरह भर जाती हैं और हम इसे शोथ या सूजन कहते है। यही जलोदर है।

उपचार

सप्ताह में कम से कम "एनिमा" का दो वार प्रयोग करे जिसमे आँतो की पूरी तरह सफाई अवश्य हो जाय। इसके साथ साथ त्वचा के रध्रो को खोलने और पसीने को वाहर निकलने मे सहायता देने हेतु नित्य आतप स्नान (टर्किश वाथ) लेना चाहिए। यदि रोगी आतप स्नान के लिए अत्यधिक कमजोर हो तो गुनगुने जल से भीगी चादर का लपेट भी उतना ही लाभकारी है। यद्यपि आतप स्नान सवसे उत्तम उपचार है जव कि संस्थान अत्यधिक जल से परिपूर्ण है। अत विपुल मात्रा मे पसीना निकालने मे इस विधि द्वारा पसीना निकालना विशेप आराम-दायक होता है।

भोजन के सन्दर्भ में कथन है कि जितना थोडा खाना सम्भव हो उतना थोड़ा खायें। चिकनाई का सेवन न करे। और पूरी तरह चवा-चवा कर खाये। चाय अथवा काफी का विल्कुल भी प्रयोग न करे।

एपेन्डिसाइटिस (आँत का फोढा) (Appendicitis)

प्रारम्भ मे यह रोग आन्त्र-शोथ के नाम से जानी जाती थी और इसका कारण भी चोट या घाव माना जाता था सामान्यतया

यह विश्वास किया जाता था कि आँत मे वाहरी वस्तुओं के जमा हो जाने के कारण यह रोग होता है जैसे अँगूरो के बीज अथवा सतरे, नीबू के बीज इत्यादि। कृमि आकार की आन्त्र-पुच्छ (ऐपेडिक्स) मे जमा हो जाना, इस वेदना का कारण बताया जाता था किन्तु यह विचार मिथ्या सिद्ध हो गया। यह रोग आन्त्र-पुच्छ के शोथ के कारण होता है किन्तु यह शोथ अथवा आँतो की ऊपरी झिल्ली अथवा पर्युदर्या (peritoneum) से विस्तार प्राप्त कर सकती है। इसका सबसे अधिक स्पष्ट कारण अन्धान्त्र (caecum) (बडी और छोटी आँत के सधि स्थल पर स्थित थैली) का कडे मल से भर जाना और जिससे शेष अन्धान्त्र (ileo-caecal) वाल्व का रुक जाना परिणामत आँत का मल मार्ग वन्द हो जाता है। साफ सुथरी आँत मे ऐपेडिसाइटिस (आँत का फोडा होना) प्राय असम्भव सा है।

सर्वमान्य चिकित्सा सिद्धान्त शल्य-क्रिया द्वारा अपेडिक्स को हटा देने मे विश्वास रखता है। दूसरे चिकित्सक पीडा के दौर की अवस्था मे रोगी को अफीम के अर्क अथवा कुमुदिनी परिवार के विषैले पौधे की हरीतिमा द्वारा अथवा अन्य दवा से बेहोश बना देते है और इस क्रिया द्वारा यदि सम्भव हुआ तो प्रकृति को अपने आप ठीक होने का मौका देते है। यह प्रकृति अपने को नौ से सात दिनो तक चिकित्सको और उनकी औषधियो के विरूद्ध सभाले रख सकी तो रोगी अपनी रोग-शैया तो त्याग सकता है किन्तु पूर्णत स्वस्थ नही हो सकता।

उपचार

रोगी के आक्रमण के प्रथम सकेत पर ही तुरन्त "एनिमा" का प्रयोग, जितना सभव हो उतना पानी अन्दर लेकर करे (पानी का तापक्रम १०२ डिग्री फेरेन्हाइट से कम न हो) जिससे कि पानी बडी एव छोटी आँत की संधि, जहाँ रोग की जड अवस्थित है, तक पहुँच जाय।

यदि पीड़ा का आक्रमण बहुत तीव्र हो तो "एनिमा" का प्रयोग, जब तक आराम न पहुँचे तब तक प्रति तीन घण्टे बाद करे। यदि रुकावट डालने वाले पदार्थ (जो कि विद्यमान रहते हैं) वहाँ से न हटे तो एक पिंट गर्म जल और एक पिंट केस्टर आयल मिला कर एनिमा दे, किन्तु इसे देने से पूर्व रोगी के कुल्हो को उसके सिर से कई इन्च ऊपर उठाये और तब रोगी को दाएँ करवट घुमाएँ और बृहदन्त्र के विपरीत मार्ग को थप थपाएँ और धीरे धीरे कोमल हाथों से एपेडिक्स के क्षेत्र के आसपास गूँधनें के समान हलचल करें। यह जल कम से कम आधे घण्टे तक रोके रखा जाय यदि आवश्यक हो तो इससे भी अधिक समय तक। यदि यह भी रूकावट वाले पदार्थों को तोडकर ढीला नही कर पाता है तो पुन. "एनिमा" का प्रयोग करे। एपेडिक्स के क्षेत्र के आस-पास गर्म जल के सेक लाभप्रद होते है। कोई दवा न दे। दवा कोई लाभ नही करेगी अपितु कोई अनपेक्षित कठिनाई उत्पन्न कर सकती है। आंतो के रिक्त हो चुकने के पश्चात् रोगी को पूर्णतया आराम करने दे और यदि अधिक पीडा और शोथ विद्यमान हो तो प्रभावित क्षेत्र पर रबर के थैले मे टुकडे टुकडे की हुई बर्फ से सेक करें। समस्त खतरा टलने तक भोजन पूर्णतया द्रव्य रूप मे दिया जाय। यह सबसे अधिक महत्व की बात है।

लीवर का रोग

लीवर सम्बन्धी रोग सर्वदा पाचन सस्थान के अन्य रोगों से आबद्ध होते है। बृहदन्त्र पूर्णतया मल से भर जाती है और छोटी आंतो की क्रिया मन्द पड जाती है जिसके प्रभाव ग्रहणी (dnodenum) (उदर के नीचे का पतला भाग) पर पडता है और भोजन को उचित गति से आगे बढने मे रूकावट उत्पन्न करता है जिससे सडन पैदा होती है। पित्तरस एकत्रित भोजन पर बारम्बार छोडा जाता है क्योकि पक्वाशय मे किसी भी वस्तु की उपस्थिति होने से पित्तरस के स्राव की आवश्यकता होती है।

परिणामस्वरूप अत्यधिक मात्रा में पित्तरस अवशोपित होने के लिए मिल जाता है। पित्तरस के अधिक स्राव से रक्त विषैला हो जाता है जो अपना प्रभाव त्वचा के पीलेपन, सिर मे चक्कर, आलस्य, उनीदी की सी अवस्था और निरुत्साह से प्रदर्शित करता है। लीवर के इस कार्याधिक्य का परिणाम होता है रक्त का एक जगह इकट्ठे होना। इसके लक्षण हैं दायी फसली पर के ऊपरी सिरे पर पीडा एव छूने पर दाव वेदना का अनुभव होना, हल्का सा पीलिया रोग, कुल्वक (furred) जिह्वा भूख मे कमी और बहुत गहरे रग का तथा कम मात्रा मे मूत्र होना।

उपचार

"एनिमा" के प्रयोग द्वारा वृहदन्त्र (वडी आँत) को खोलें तव छोटी आँत और ग्रहणी (dnodenum) स्वत ही खुल जायेगे। तव स्नानादि द्वारा त्वचा के रधो को खोले तथा प्रकृति को इस ढग के सस्थानो मे जमे हुए व्यर्थ पदार्थों को निष्कासित करने दे। इस उद्देश्य के लिए गीले कपडे की पैक विशिष्ट उपयोगी सिद्ध होगी। पित्त सम्बन्धी रोगो के साथ रोगो की भूख मे अस्वाभाविक वृद्धि के लक्षण भी अक्सर उपस्थित होते हैं। किन्तु इसका प्रतिरोध करना चाहिये। ताजे फल और तरकारियो का सेवन लाभदायक है। दूध, घी, तथा अन्य चिकने द्रव्यो का सेवन हानिकर है। किसी भी प्रकार का व्यायाम, जो पेट की माँस पेशियो के लिए खिचाव तनाव पैदा करे, किया जाना लाभदायक है और नित्य किया जाना चाहिए। विशेषकर घुडसवारी और नाव की पतवार चलाने जैसे व्यायाम करे, बिना घुटने मोडे पाँव के अँगूठो को छुये और उस समय एक गहरी साँस ले तब आप लीवर कोस शक्ति हो जायेगा। इससे रक्त सचालन भी सक्रिय होगा।

"भालू चाल" या कमरे मे घुटने मोडे बिना हाथ पाँवो के बल भालू की तरह चलना, मन्द लीवर के लिए सर्वोत्तम व्यायाम है।

चर्म रोग

इन रोगों की उत्पत्ति का कारण कब्ज है। अत इन रोगों मे मुक्ति पाने के लिए "एनिमा" के नियमित प्रयोग द्वारा वडी आँत को साफ रखना अत्यन्त आवश्यक है। हल्के से गर्म या शीतल जल से सम्पूर्ण शरीर को स्नान कराएँ। यह ध्यान रखे कि साबुन का प्रयोग न करे जो त्वचा पर क्षोभ पैदा करता है।

कभी भी साधारण साबुन का प्रयोग न करे और न ही किसी प्रकार की गहरी सुगन्ध वाली साबुन का प्रयोग करे। एक शुद्ध साबुन पानी मे तैरती रहती है। यदा कदा गीली पट्टी का लपेटना वडा लाभदायक होता है। भोजन के प्रति सजग रहे। तले हुए पदार्थों तथा भारी भोजन का प्रयोग न करे।

वृक्क के रोग (Disease of Kıdneys)

ये रोग वृक्क के प्रकृति विरुद्ध कार्य करने की दशा मे होते हैं और उन अँगो मे उत्पन्न होते है जिन्हे अपने प्राकृतिक कार्यो के अतिरिक्त अन्य अगो के कार्य करने के लिए वाध्य होना पडता है।

अधिक रक्त एकत्र होना किडनी की तीव्र पीडा और शोध की दिशा मे प्रथम कदम है। दूसरा कदम वृक्क के कोशिकाओ का क्षय या व्ययजनन (degeneratıon) है। यदि यह ह्रास एक विशेष अवस्था तक पहुँच गया है तो किसी भी प्रकार की सुधार की आशा नही रह जाती।

उपचार

इसका एक मात्र उपाय है कारण का निवारण। वृहदन्त्र, लघु अँत्र, उदर और त्वचा आदि की अच्छी कार्यशीलता की स्थिति मे रखी जानी चाहिए, जिसमे वे सब अपने कार्य करते रहे

और बेचारे वृक्को को अतिरिक्त कार्यभार उठाने के लिए वलिदान का बकरा न बनाएँ। बृहदन्त्र भोजन सुधार तथा एनिमा के प्रयोग द्वारा स्वच्छ रखनी चाहिए। आतप स्नान (टर्किश वाथ) लाभप्रद होती है।

प्रति रात्रि बृहदन्त्र को साफ करने के पश्चात् एक पिंट गर्म जल 'एनिमा' द्वारा प्रविष्ट करवाया जाय और फिर शयन किया जाय। यह प्रक्रिया वृक्को की भी सफाई करेगी। यदि फिर भी तीव्र पीडा हो तो ठीक होने तक यह क्रिया प्रति दो घंटे से पुन पुन करते रहना चाहिये। वृक्क के क्षेत्र पर और पीठ पर गर्म गर्म सेक दर्द को दूर करेगा और उसी स्थल पर धीरे धीरे मालिश भी उपयोगी सिद्ध होगी।

मिठाइयाँ, पेस्ट्रियाँ, आलू सरीखे स्टार्च युक्त भोजन, शराव, तम्बाकू, चाय, काफी और अधिक चर्वी वाले भोजन से वचे। मदाग्नि के लिए बताया गया भोजन इसमे काफी श्रेष्ठ होता है। मलाई रहित दूध, मक्खन, दूध और छाछ लाभप्रद है। क्योकि उनका वृक्क पर बहुत अच्छा प्रभाव पडता है। रात्रि को पेट की पट्टी भी विषैले एव व्यर्थ पदार्थों के निकालने मे सहायक होगी।

हैजा या कोलेरा

यह रोग "कोमा बेसिलस" नामक सूक्ष्म कीटाणुओ की उपस्थिति से होता है जो एक प्रकार का मारक विष का निर्माण करते हैं जिसे "सडन विष" ण्टोमेन (ptomaine) कहा जाता है। यद्यपि कीटाणु मुँह एव आमाशय के द्वारा सस्थानो मे ले जाये जाते है फिर भी उनकी गुणात्मक वृद्धि आँतो की भीतरी भागो मे होती है जो इस तथ्य से सिद्ध होता है कि हैजे के रोगी की वमन या "कै" मे भी कुछ कीटाणु नही होते बल्कि आँतो से नि.स्सीरत द्रव्य मे ये कीटाणु बहुत मात्रा मे पाये जाते हैं। यदि

पाचन संस्थान पूर्णत स्वस्थ अवस्था मे है तो कीटाणु जो शीघ्र ही अन्दर लिए गये है, पाचक रस (गेस्ट्रिक ज्यूस) से तुरन्त नष्ट किये जाते है। यदि आमाशय कार्यक्षम नही है तो विषाणु छोटी आँत मे पहुँच कर जमा हो जाते है। जहा पर अम्मीकृत द्रव्य (जिसमे रोगाणु पनपते है) मिलते है और परिणाम होता है हैजा। इसके लक्षणो मे सर्व प्रथम पीडा रहित साधारण सा दस्त रोग (अतिसार) होता है, तव कपकपी, शैथिल्य, चक्कर आना और जी मितलाना प्रारम्भ हो जाता है।

पीड़ा एव क्लेश के पश्चात् रक्त परिसचरण शिथिल हो जाता है और तव आँतो द्वारा वहुत मात्रा मे गाढा तरल पदार्थ मल के रूप मे त्याग किया जाता है, होटो पर नीलापन छा जाता है, ठंडी (निर्वल) सासे शुरू हो जाती है और कभी न वुझने वाली अतृप्त प्यास लगती है।

उपचार

सर्व प्रथम प्रति घटा गर्म जल से आँतो की सफाई करना प्रारम्भ कर दे। इसके पश्चात् आतप स्नान (टर्किश बाथ) द्वारा पसीना निकालें किन्तु यदि स्थिति मरणासन्न हो एव वमन तथा शूल उत्पन्न हो जाय तो तुरन्त "एनिमा" का प्रयोग करे। तव दो भारी चद्दर ले, उन्हे सहन होने योग्य गर्म जल मे डुबोये और तह बना कर छाती, पेट पर रखे और कम्बल लपेट कर किनारो पर वाँध दे। पाँवो को गर्म जल मे रखे। करीब दस मिनट वाद चद्दरो को फिर से गर्म जल मे डुबोकर फिर तुरन्त वैसे ही लगा दे और फिर पन्द्रह वीस मिनट पश्चात् पसीना आ जाएगा और उदर शूल मिट जाएगा।

रोग की अवस्था मे कुछ भी न डाले केवल अतृप्त एव दाहक प्यास वुझाने के लिए शीतल जल की छोटी-२ घूँट लेते रहे।

पुन स्वास्थ्य लाभ की स्थिति तक साधारण तथा हल्का भोजन हो। पीने के लिए उबाला हुआ जल प्रयोग मे लायें।

पर्युदर्या शोथ (पेरीटोनीटिस) (Peritonitis)

इस रोग मे आँतो की भीतरी तह पर चढी हुई पतली झिल्ली पर शोथ होती है या प्राय चोट और घाव से भी उत्पन्न शोथ के प्रभाव से आँत के आस पास स्थित अगो तक शोथ का विस्तार हो जाता है। किन्तु प्राय पर्युदर्या शोथ आँतो मे जमा हुए कठोर मल मे पनपने वाले कृमियो की उपस्थिति से होता है। कारण कोई भी हो, आँतो को अत्यधिक सक्रिय रह कर एनिमा की सहायता से सहन होने योग्य गर्म जल से साफ करे तथा पेट पर गर्म जल की थैली से सेक करे।

निमोनिया (Pneumonia)

इसे कभी कभी फेफडे का ज्वर भी कहते है। यह फेफडे की तीव्र पीडा वाला रोग है। यह प्राय शीत के प्रभाव के कारण होता है और सर्दी लगना और तेज ज्वर होना इसके प्रारम्भिक लक्षण है। प्रारम्भ मे सूखी खाँसी होती है और वाह्य लक्षणो मे गालो पर एक अजीब सी कालिमा छा जाती है। इस रोग मे श्वास लेना कष्ट साध्य होता है, श्वास की गति तीव्रता से बढकर प्रति मिनट चालीस हो जाती है। यह स्थिति रोग की अत्यन्त तीव्र और बहुधा प्राणघातक अवस्था होती है।

उपचार

पेट साफ रखना अत्यन्त आवश्यक है। पाँवो को गर्म जल मे डुबा कर रखना (Hot foot bath) चाहिए। छाती पर गर्म पानी का सेक भी लाभकारी है। रोग होते ही तुरन्त चिकित्सा करने से शीघ्र लाभ होगा।

श्वासनी शोथ (ब्रोन्खाइटिस) (Bronchitis)

यह रोग दोनो मुख्य श्वास नलिकाओ की भयानक व्याधि है। इसका उपचार भी करीब करीब वही है जो निमोनिया के लिए बताया गया है। केवल गले और छाती के जिस हिस्से पर अत्यधिक शोथ दिखाई पडे उस स्थान पर गर्म सेक करना चाहिए। यदि गले के भीतर अधिक शोथ प्रतीत हो तो थोडा नमक मिलाकर गर्म पानी के गरारे करने चाहिएँ। यह अभ्यास कई बार किया जा सकता है। भोजन बिल्कुल हल्का होना चाहिए।

दमा (Asthma)

यह एक अत्यन्त भयानक रोग है किन्तु इसे अच्छी तरह समझा नही गया है। इस रोग के अनेक लक्षण है। यह रोग बृहदन्त्र के अत्यधिक मात्रा मे मल से भरे रहने से होता है जो वक्ष और उदर को विभाजित करने वाली पेशी को स्वतन्त्र रूप से अपना कार्य नही करने देती और फेफडो की कार्यक्षमता को भी कम कर देती है। इससे नाडी-तन्त्र की क्रियाशीलता बढाने मे फेफडे असफल हो जाते है और परिणाम होता है वह पेशी, जो हिलने डुलने वाला एक अग है, एकदम जड हो जाती है। यह रहस्य तब समझा गया जब अनेको मामलो मे बृहदन्त्र के रिक्त होते ही श्वास रोग की समस्या समाप्त हो गई और रोगी को रोग की अनुभूति नही हुई। दमा सम्बन्धी समस्त प्रकार के रोगो में शाम का भोजन हल्का होना चाहिए और यहाँ तक कि वास्तव मे विचार किया जाय तो उचित तो यही होगा कि मन्दाग्नि रोग के लिए वर्णित भोजन के नियमो का पालन करते हुए सायकालीन भोजन का सर्वथा ही त्याग कर दिया जाय।

गर्भाशय विस्थापन (Uterine Displacement)

यह रोग नब्बे प्रतिशत औरतो मे कोष्ठ बद्धता (कब्ज) से ही होता है जिसका मूल तङ्ग वस्त्र बन्धनो से मुख्य रूप से परि-

लक्षित होता है। ग्रामीण स्त्रियो मे प्राय बहुत बडी सख्या मे उनका अवग्रहन्त्रवक्र (Sigmoid flexure) फूल कर अपने प्राकृतिक आकार से दुगुना बढ जाता है और फिर गर्भाशय पर दबाव डालता है जिसके फलस्वरूप यह उसे अपने स्थान से हटा देता है। इसके अतिरिक्त बृहदन्त्र मे भी निरन्तर अधिकाधिक शोथ उत्पन्न होता है जिसका प्रभाव गर्भाशय पर भी शोथ उत्पन्न करने वाला होता है। उस शोथ से गर्भाशय भारी एव ढीला होकर स्थान से हट जाता है।

उर्ध्वगामी तथा अधोगामी बृहदन्त्र उतार एव चढाव दोनो ही रूपो मे अडाशय के पीछे विद्यमान रहती है और यदि (जैसा कि प्राय होता है) चढती और उतरती आँते अपने आकार से दुगुनी फूल जाये तो ये अस्थि बंधक तन्तुओ को तानती है और अडाशय से सम्बद्ध सयोजक को आँत की झिल्ली से निरन्तर पृथक करते हुए आँत की झिल्लियो को अपने स्थान से नीचे गिरा देती है और उनसे आबद्ध फालोपियन नलिकाएँ और दोनो अस्थि बन्धक तन्तुओ से मिलकर गर्भाशय को अपने स्थान पर सम्भाले रहती है किन्तु जब वस्ति गह्वर (पेडू) मे ही गर्भाशय एव अडाशय अन्य अगो के दबाव से घिर जाते है और फूल कर जब गर्भाशय ही स्वय पर दाब डालता है तो पीडादायी ऋतु स्राव प्रारम्भ हो जाता है अथवा मासिक धर्म रुक ही जाता है जिसका परिणाम होता है विप्लव या स्थान परिवर्तन अथवा विस्थापन। यहाँ तक कि जब ऋतु स्राव पूर्णरूप से रुक जाता है तो प्रकृति स्वत अन्य स्थान से ऋतु स्राव प्रारम्भ कर देती है जो अप्राकृतिक रूप से फेफडो और आँतो के मार्ग से स्रवित करती है।

उपचार

"एनिमा" के नियमित प्रयोग द्वारा बृहदन्त्र को रिक्त करें और स्वच्छ रखे और अपने पहने जाने वाले कपड़ो के बन्धन

(डोरी) ढीले रखे ऐसा करने पर गर्भाशय पुनः अपनी स्थिति में चला जायेगा और तत्सम्बन्धी समस्त कुलक्षण विलुप्त प्राय: हो जायेंगे। यह तो सम्भव है कि इतने लम्बे समय तक गर्भाशय विस्थापन के कारण स्नायु (पुट्ठे) और अस्थिबन्धक तन्तु कुछ सीमा तक निष्क्रिय अथवा पक्षाघात ग्रस्त हो गये हो।

वृहदन्त्र को रिक्त करने के पश्चात् यदि पीठ मे पीडा हो तो जितना सहन हो सके उतने गर्म जल के टब मे एक दिन छोड कर नित्य लगभग पन्द्रह बीस मिनट तक बैठे। बैठक मे जितना सम्भव हो उतना कूल्हो को ऊँचा रखे और अपने शरीर को पीछे की ओर अकेले और उस समय वस्ति की हड्डी का मर्दन करते रहें। यह क्रिया आराम प्रदान करने के साथ-साथ अवग्रहान्त्र वक्र (सिग्माइड फ्लैक्सर) के विस्थापन को कम करेगी। यदि गर्भाशय पुन. अपने स्थान पर स्वतः नही पहुँचता है तो चिकित्सा की सहायता से उसे स्व स्थान पर स्थित करवाये। पीडा युक्त मासिक स्राव एव प्रदर स्राव जो गर्भाशय विस्थापन के कारण उत्पन्न होते है, वृहदन्त्र को स्वच्छ रखना प्रारम्भ करते ही गर्भाशय मे शोथ, वृद्धि, कठोरता एव विस्तार प्राप्त अडाशय का दाब आदि समस्त रोग स्वत. ही तुरन्त ठीक हो जाते है।

गर्भाशय का उल्टा घुमाव (Anteversion)

जो स्थिति दस मे से नौ महिलाओ को प्रभावित करती है वह है गर्भाशय का आगे आकर मूत्र थैली पर (निरन्तर मूत्र त्याग की इच्छा के कारण गिरना और फिर अवग्रहान्त्रवक (सिग्माइड फ्लैक्सर) के गिरने के कारण आँतो के पीछे गिरना जिससे आँतों के कार्य मे बाधा उत्पन्न होनी प्रारम्भ होती है और परिणामतः मल त्याग में बडी कठिनाई का सामना करना पडता है।

गर्भाशय का पीछे की ओर घुमाव (Retroversion)

इसमे गर्भाशय अपने स्थान से नीचे गिरकर पीछे की ओर फेंक दिया जाता है। जब लगातार बढ़ते हुए अपये से दुगुना फूल कर कडा एव शोथ युक्त हो जाता है तो उसमे अलगाव पैदा हो जाता है। चिकित्सक इस स्थिति को प्राय सुपुम्ना तंत्रिका सम्बन्धी रोग बतलाते हैं किन्तु गर्भाशय का स्थान च्युत होना सवेदक नाडी पर प्रभावकारी होता है और सबद्ध अगो पर हल्का सा लकवा गिराता है जो स्मृति का नाश एवं कभी कभी उन्माद की स्थिति भी उत्पन्न कर देता है। गर्भाशय के पीछे की ओर घुमाव की स्थिति मे वृहदन्त्र को रिक्त करने के पश्चात् निम्न प्रक्रिया करनी चाहिए। शैया पर घुटनो के बल बैठकर शरीर को आगे की ओर झुकाये यहाँ तक कि छाती भी शैया को छू ले। इस स्थिति मे जितने समय तक सम्भव हो रहे और इस क्रिया को दिन मे कई बार दुहराये। रात्रि मे शयन के समय शैया को पावो की ओर से आठ इन्च ऊँचा उठाले। ये क्रियाये गर्भाशय को पुन अपनी उचित स्थिति मे लाने के लिए उपयोगी है। आहार पौष्टिक व सतुलित किन्तु सुपाच्य ले और समस्त उत्तेजना प्रदायक (नशीले) तत्वो का त्याग करें।

सर्दी जुकाम (Common Colds)

सर्दी जुकाम का होना साधारण सा रोग है। साधारणतया इससे शरीर के अन्दर की सफाई होती है। ये रोग स्वय घातक नही है फिर भी बारम्बार इसका आक्रमण इस बात की चेतावनी देता है कि साधारण स्वास्थ्य ठीक नही है और क्षय, नमोनिया, पुराना जुकाम आदि रोग होने के पूर्व लक्षण है।

सर्दी जुकाम प्राय अचानक ताप परिवर्तन के कारण और रोम छिद्रो के अचानक रुक जाने के कारण होते ह। अत. प्रकृति-प्रदत्त निष्कासन के मार्गों को अवरुद्ध होने से रोकने और

शरीर में स्थित व्यर्थ पदार्थो को त्यागने की दिशा मे तत्पर रहना चाहिए। रोम कूपो के रुक जाने के कारण अग विशेष मे रक्त का अधिक मात्रा मे संचयन हो जाता है। अत यदि रक्त संचरण सस्थान नीरोग एव सबल है, प्रश्वेद क्रिया उत्तम है, आँते साफ है तो सर्दी जुकाम का प्रकोप इन अवस्थाओ मे असम्भव सा है। इसके अतिरिक्त यदि शरीर मे कोई सा भी अग दुर्बल है तो सर्दी जुकाम उसे निश्चय ही ढूँढ निकालेगे और यदि तुरन्त उनके आक्रमणो के प्रति सावधान नही हुये तो परिणाम गम्भीर हो सकते है।

उपचार

सर्दी जुकाम का प्राथमिक कारण स्थाई रूप से कोष्ठबद्धता है। अत सबसे पहले करने योग्य काम है बृहदन्त्र को साफ करना। कम से कम तीन दिनों तक नित्य प्रति "एनिमा" का उपयोग करे। जुकाम की पहली सायकाल से ही निराहार रहे। दूसरा करने योग्य कार्य है टर्किश बाथ (आतप स्नान) यह स्नान सायकाल मे किया जाना चाहिए। तत्पश्चात् एक गिलास नीबू का रस मिला कर गर्म जल पीकर, सारे शरीर को भली प्रकार से ढक कर शयन करे। इसमे कोई सदेह नही कि ऐसा करने से आपको अधिक मात्रा मे पसीना आयेगा, जिसकी आपके शरीर के लिए अत्यन्त आवश्यकता है। प्रात काल स्नान के नियमो की अनुपालना करते हुए,मल मल कर भली प्रकार स्नान करे। नास्ते पूर्व जल पीये और नाश्ते मे हल्के पदार्थ फल सतरे आदि लेना चाहिए। इसके पश्चात् आप अपने पूर्व नियोजित क्रिया-कलापो मे सलग्न होने को तत्पर हो सकेंगे। और यदि आप रात्रि मे एक बार और अपनी आँत साफ करले तो जुकाम का नाम निशान नही रहेगा और आप शरीर मे हलकापन अनुभव करेंगे।

कोष्ठवद्धता (कब्ज) (Constipation)

पाचन संस्थान की इस प्रकार की अवस्था के सम्बन्ध मे इतना वर्णन किया जा चुका है कि इस विषय पर आगे कुछ भी बताना अवश्यक प्रतीत नही होता। कोष्ठवद्धता (कब्जियत) के कारण भी बदलते रहते है। खुली वायु मे व्यायाम की कमी, शीघ्रता से खाया गया या अपूर्ण रूप से चवा कर निगला गया भोजन आदि बहुत से कारण कोष्ठवद्धता के कारण बनते है।

आप कुछ भी करते रहे किन्तु नशीली वस्तुओ मे से प्रत्येक का सर्वथा त्याग करे क्योकि ये वस्तुएँ अत्यन्त घातक हैं। मल त्याग की प्रक्रिया को निरतर उत्तेजित करने वाली रेचक (दस्तावर) औषधियो का सेवन भी अति हानिकर है। अत इनका भी त्याग किया जाना चाहिए। औषधि द्वारा पेट साफ करने की सुविधा यदि पेट को प्रदान की जाती रहे तो यह एक आदत बन कर पेट की सवेदन-शीलता पर एक ऐसी तह चढा देती है कि सामान्य भोजन की उपस्थिति भी इस अग को इतना कुपित बना देता है कि पेट इसे अनचाहा ही निकालने को तत्पर हो जाता है।

उपचार

एक दिन छोडकर नित्य कम से कम दो सप्ताह तक 'एनिमा' का प्रयोग करे। फिर जब तक सुधार न हो जाये तब तक सप्ताह मे दो बार। नाश्ते से कम से कम आधा घण्टा पूर्व गर्म जल का एक गिलास भर कर पीये और नाश्ते से स्वतन्त्रता पूर्वक फलाहार करे तथा भोजन को अत्यन्त चवा चबा कर खायें। दूसरे समय भारी मात्रा मे हरी सब्जियाँ खाये। चोखर सहित गेहूँ के आटे की रोटी का भोजन कब्ज को मेटने मे सहायक है। अमरूद, नारियल, मूली, गाजर का सेवन करने से पेट साफ होता है। और प्रतिदिन पानी पीने का नियम सा बना ले।

ववासीर (Piles or Hemorrhoids)

ववासीर बड़ी आँत के मुँह एवं गुदा (मलद्वार) की पेशी (Muscles) का रोग है एवं सीधा कोष्ठवद्धता का दुष्परिणाम है। कडे मल के संचित होने के कारण अवग्रहान्त्रवक (सिग्मोइड फ्लेक्सर) मे शोथ उत्पन्न हो जाता है और वह अपने ही भार से अपने स्थान से नीचे की ओर गिर जाता है। फलत· आन्त्र-भ्रंश (Prolapse of Bowels) हो जाता है। अक्सर आँत मे व्रण अथवा घाव हो जाते है। आँत वाहर निकल आती है। द्वार पर फैलने वाले छोर पर अर्बुद (Tumour) हो जाते है।

खूनी ववासीर गुदा सम्वन्धी रक्त वाहिनियो मे रक्त के जमाव के कारण होता है। यह नाड़ी तन्त्र द्वारा कुपित पेशियो की विरोधात्मक प्रतिक्रिया द्वारा होता है एव तदनुसार रक्त परि-भ्रमण मे वाधा एव एक स्थान (गुदा द्वार) पर अत्यधिक मात्रा मे रक्त सचित होने के कारण होता है। पोषक तत्वो की कमी के कारण जव गुदा स्थान के अवयव फटने लगते है तब शिरा के समान फैलने वाली कोशिकाएँ गाँठो के रूप मे सगठित होकर मस्से का रूप धारण कर लेती है। इसके उपचार के लिए किए गये साधनो मे प्रायः मस्सो को समुचित कटने वाली स्तुम्भक औषधियो को पिचकारी की सहायता से आँतो मे पहुँचाया जाता है जिससे गाँठे सूख जाये, मर जायं, झड जाये अथवा हटा दी जाये। इनमे से प्रत्येक उपाय कष्टकर है परन्तु सर्वोत्तम उपचार तो गाँठो के पडने वाले कारणो को नष्ट करना है।

उपचार

सर्व प्रथम वृहदन्त्र को "एनिमा" की सहायता से रिक्त किया जाय जिससे शोथ का कारण समाप्त हो जायेगा और शोथ मिटने पर आगे को झुकने वाली आँते स्वत अपने स्थान पर लौट

जायेगी। तब गाँठे भी जहाँ से निकली है वही पहुँचकर सोख ली जायेगी। गर्म जल मे बैठ करवट लेना आतो को अपने स्थान पर पुनः पहुँचाने मे सहायक होता है। गर्म जल आँतो को सिकोडने व फैलाने वाली प्राकृतिक औषधि है और कभी असफल नही होती।

आँत के छोर पर जहाँ वह गुदा से मिलती है यदि ऊँगली के आकार का वर्फ का टुकडा (जिसे चिकना बनाने के लिए कुछ क्षण पानी मे छोडा जाये) डाला जाय जो कि गुदा सम्बन्धी रोगो के उपचारो मे सर्व प्रिय उपचार माना गया है। जिन अंगों या स्थानो मे रक्त का जमाव हो जाता है वहा से रक्त को हटाया जाना शारीरिक सरचना के लिए प्रभावशाली होता है। यदि रोग अत्यन्त गम्भीर स्थिति मे हो तो इसका प्रभाव दिन में कई बार करना लाभ-कर होता है और आँत के गुदा द्वार के छोर पर वर्फ रखना अगो के आगे की ओर झुक जाने के मामलो मे भी समान रूप से लाभ प्रद है।

पक्षघात (Paralysis or Palsy)

पक्षाघात अथवा अगघात ये दोनो नाम एक ही रोग के प्रतीक है जिसमे सस्थानो की ऐच्छिक क्रिया करने करवाने की शक्ति का ह्रास हो जाता है। यह स्थिति वहुत गहराई तक शरीर मे अवस्थित रोग का वाह्य प्रकाशन अथवा सकेत है जो वृहदन्त्र एव रक्त परिसचरण की अव्यवस्था से सम्वन्धित एव उनका अनुवर्ती है। इन्ही कारणो से मूर्छा या मिरगी हो जाती है जो नाडी पेशियो तक मस्तिष्क के आदेश पहुँचाती है उसमे आतच (blood clot) के कारण मस्तिष्क की इच्छाओं को पेशियो तक नही पहुँचा पाती और अति दाव से रक्त वाहिनी का मस्तिष्क से सम्बन्ध विच्छेद सा हो जाता है। फलत पेशियो की ऐच्छिक क्रियाये रुक जाती हैं।

किन्तु यह पेशियों द्वारा उत्पन्न मानसिक रोग नही है, जैसा कि समझा जाता है, वरन् पेशियो को नियन्त्रित करने वाली नाड़ियो का रोग है। कभी कभी इस रोग मे शरीर का सारा का सारा एक पक्ष ही प्रभावित हो जाता है और पूरी तरह एच्छिक क्रियाये करने मे असमर्थ हो जाता है स्थाई रूप से तिरछी हुई एव अपने आकार से बढी हुई वृहदन्त्र मस्तिष्क मे रक्त के जमाव पक्षाघात का एक प्राथमिक रूप है। पक्षाघात का एक रूप यह भी है जो केवल एक अग विशेष को ही प्रभावित करता है तथा निम्न अग का या प्रजनन अग का पक्षाघात जो सचार-व्यवस्था के लिए नियत बडी नाडी पर या उसकी शाखाओ पर चढ़ती एवं उतरती वृहदन्त्र के दवाव से उत्पन्न अव्यवस्था से होता है जिसे स्थानीय अथवा अग विशेष का पक्षाघात कहा जाता है।

शरीर के सम्पूर्ण एक पक्ष का पक्षाघात मस्तिष्क पर विशेष दाव पढने के कारण होता है और यह रक्त परिभ्रमण की अव्यवस्था से होता है। रक्त-परिभ्रमण की अव्यवस्था के मूल मे होती है अप्राकृतिक रूप से बढे हुए आकार वाली वृहदन्त्र। वृहदन्त्र द्वारा रक्त वाहिनियो पर दाव की अवस्था मे कठिन शारीरिक श्रम अथवा मानसिक चिन्तन मस्तिष्क की सहन शक्ति पर इतना दवाव डालते हैं कि वह दवाव मस्तिष्क की धारक शक्ति से परे चला जाता है और परिणाम होता है मस्तिष्क का अन्य अगों से सम्वन्ध विच्छेद और उस दशा मे रोगी जहाँ कही भी होता है पक्षाघात के दौर से ग्रस्त भूमि पर गिर पडता है।

उपचार

पक्षाघात से वचाव वहुत ही सरल है क्योकि स्वच्छ वृहदन्त्र वालो के लिए यह रोग होना एक असम्भव सी बात है।

सर्वप्रथम इस रोग के मूल मे स्थित कारण को मिटाना होगा और वह है मल से अवरुद्ध वृहदन्त्र। अग मर्दन उपचार

का अत्यन्त महत्वपूर्ण है । मांस पेशियों को कठोर होने से बचाने और प्रभावित अगो की लचीली अवस्था मे बनाये रखने के लिए निरन्तर मालिश करते रहना अत्यावश्यक है तथा मस्तिष्क को इस दिशा मे प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वह हठीली पेशियो पर पुन. अपना अधिकार जमा ले । इस रोग की अवस्था मे यह आवश्यक है कि आहार पर विशेष ध्यान दिया जाये । वही भोजन ग्राह्य है जो सुपाच्य हो और कब्ज न करता हो । हो सकता है आपको कुछ दिनो के लिए चम्मच से खाने की अवस्था मे फिर लौट जाना पडे अर्थात् आपको अपनी खुराक बच्चो की जितनी ही बनानी पड़े और इस रोग के द्वितीय दौर पर तो आपकी जिम्मेवारी पुन. स्वास्थ्य लाभ तक इतनी बढ जाती है कि आप इस रोग के विरुद्ध सुरक्षात्मक उपायो मे भोजन पर विशिष्ट ध्यान दे ।

जब प्रभावित अगो मे शक्ति सचित होने लगे तो शक्ति और सामान्य क्षमता की दृष्टि से धीरे धीरे बढाये जाने वाले व्यायाम को नियमित रूप उत्तरोत्तर बढाते हुए अपनायें ये व्यायाम क्रमश. मस्तिष्क को प्रशिक्षित करेगे और शरीर के साथ सतुलित एवं सहज क्रियाओ के सम्पादन की शक्ति प्रदान करने मे सहायक होगी ।

अपस्मार (Epilepsy)

अपस्मार पक्षाघात से थोडा सा इस रूप में भिन्न है कि इसमे ऐंठन भी होती है और मुँह पर झाग आते है । इस भयङ्कर रोग का सबसे बडा एव मूल कारण है बृहदन्त्र मे कृमियो का विद्यमान रहना और उसका क्रियाशील होना । कई रोगियो की आंतो मे कृमियो की गाँठे निकलती हैं और रोग के मूल को मिटाये जाने पर रोगियो को पूरी तरह आराम मिलता है ।

इस रोग का प्राथमिक उपचार सरल है। जब तक पेट मे से कृमि पूरी तरह न निकल पाये तब तक नीम्बू डाल कर एनिमा का प्रयोग करते रहे। मूर्छा के दौर मे गर्दन के चारो ओर के वस्त्रो के बन्धन ढीले कर दे और मुँह मे कुछ न कुछ रख दे जिससे रोगी अपनी जीभ न काट ले, उदाहरण के लिए कार्क मुँह मे डाल सकते है। बढिया नमक की कुछ मात्रा भी मूर्छा की अवधि को कम करेगी। इस रोग का एक अन्य कारण हस्त मैथुन है। इस मामले मे और कुछ भी नही करते हुए मैथुन की इस आदत का परित्याग करें और शारीरिक तथा नैतिक दृष्टि से पवित्र जीवन यापन करे तो आरोग्य लाभ की दृष्टि से ऐसा करना प्रभावशाली कार्य होगा।

सुजाक (Gonorrhea)

यह एक छूत का रोग है। और इससे पीडित लोग प्रायः असैद्धान्तिक नीम हकीमो, मिथ्या चिकित्सको के शिकार होते है जो रोग के लक्षणो को दवाओ से दबाकर रोग की जड जमा देते है। यह रोग औरतो की अपेक्षा पुरुषो को अधिक पीडित करता है। छूत एव ससर्ग दोष के प्रभाव के प्रकटीकरण के दूसरे एव सातवे दिन के मध्य प्रारम्भ मे मूत्र-नली पर साधारण बेचैनी सी उत्पन्न होती है। फिर श्लेष्मा युक्त द्रव्य का प्राकृति निष्कासन बढ जाता है तथा तीव्र शोथ के साथ लस-लसा चिकना पदार्थ बाहर निकलता रहता है। बाहर निकलने वाला द्रव्य गाढा और हरितिमा युक्त हो जाता है तथा मूत्र त्याग पीडादायी हो जाता है। जाँघो की सधि मे गाँठे सी हो जाती है जिन्हे गिल्टी (bubo) कहते हैं। अण्डकोश की शोथ अक्सर हो जाती है। आरोग्यता लाभ के लिए चार से छ सप्ताह तक उपचार मे लग सकते हैं किन्तु इस अवधि मे लापरवाही की गई तो यह महीनो का कार्य हो जायेगा।

उपचार

प्रथम दो सप्ताह तक तो प्रति रात्रि ही "एनिमा" का प्रयोग करे। तदनन्तर कम से कम दो माह तक सप्ताह मे दो वार इसका शरीर से विष निष्कासन हेतु प्रयोग करते हुए अगो को दिन मे दो बार धोकर उन्हे स्वच्छ रखे। नशा, तेज मसाले, मद्य, तम्बाकू आदि सभी उत्तेजक पदार्थों का पूर्णत परहेज करना होगा। तथा भोज्य पदार्थो मे शुद्ध शाकाहार लें।

हर्निया (Hernia of Rupture)

हर्नियाँ आँत के कुछ भाग का अप्रकृतिक मार्ग द्वारा वाहर निकलना है और जिस जिस स्थान पर इसका विकास होता है उसी के आधार पर इसके विभिन्न नाम होते है फिर इसका अति प्रचलित रूप वक्षण (inguinal) है। पाचन सस्थान मे मलिन गैस गतिशील होती है तब हर्नियाँ होने की सम्भावना वढ जाती है। यद्यपि प्राय: यह आशका मात्र होती है तथापि पचहत्तर प्रतिशत लोगो मे वस्ति प्रदेश (abdominal cavity) के सीमित स्थान मे मल से अत्यधिक मात्रा भरी हुई वृहदन्त्र के दाब से हर्निया निश्चित रूप से होती है।

उपचार

इसका उपचार सीधा सा है। एनिमा का अच्छी तरह प्रयोग करेगे तो कारण स्वत ही दूर हो जायेगे। यदि वृहदन्त्र साफ रखी जाय और सहारे के लिए अपनाई गई पेटी (बेल्ट) उचित तरीके से लगाई जाये तो शीघ्र इस रोग से मुक्ति मिल सकेगी।

स्थूलता (मोटापा) (Obesity)

शरीर की वह स्थिति, जिसके लिए रोग वर्गीकरण विज्ञान विशेषज्ञो (Nosologists) ने स्थूलता या मोटापन रोग नाम

दिया है, सामान्य अतिपूरणता (Engorgement) या अतिपूर्णता (Overfuluess) का रूप है जो अत्यधिक आहार एवं अपूर्ण मल निष्कासन अथवा दोनो ही कारणो के परिणाम स्वरूप होता है। अधिक मात्रा मे आहार और निष्क्रिय जीवनयापन इस रोग को उत्पन्न करने का प्रमुख कारण है। बच्चो को तो यह विशेपाधिकार है कि वे वेरोकटोक मोटे जाएँ किन्तु जब अधिक वर्षों तक यही स्थिति बनी रहे तो अति सचय असुविधा एव हानि का कारण बनता है और यदा कदा मोटापा मृत्यु का कारण भी हो जाता है जिसमे (रक्ताघात) (apoplexy) स्थूल लीवर, मधुमेह, हृदय स्थूलता एव रक्तिम चमक आदि शामिल है। जिस शरीर मे शक्ति होती है उसकी पहचान है सशक्त नाड़ी तन्त्र, फूली हुई शिराये, दृढ एव सबल पेशीय तन्तु एव निर्बलता के प्रतीत हैं निरन्तर निर्बल नाडी तन्त्र, चिकनी एव मुलायम त्वचा, स्थूल किन्तु प्रभावहीन आकृति तथा उत्साहपूर्ण क्रिया-कलापो के प्रति उदासीनता।

उपचार

"एनिमा" का प्रयोग करे और जितने व्यायाम से थकान न हो उतना व्यायाम करे। तीन मील तक तेज चाल से भ्रमण भार को कम करने मे आश्चर्यजनक रूप से सहायक होता है। विशेपकर उस अवस्था मे जब आपको खूब पसीना आना प्रारम्भ हो। किसी भी समय के भोजन से एक घटा पूर्व एक पिंट (डेढ पाव) गर्म जल पीये और रात्रि शयन से आधा घटा पूर्व जल पीये जिससे आमाशय मे से खट्टे एव पित्तीय पदार्थ भोजन एव शयन से पूर्व आगे प्रेषित हो सके। चोखर सहित गेहूँ के आटे की रोटी लाभप्रद होगी। सरल और सादा भोजन ही उचित है।

मानवता का ह्रास (Lost Manhood)

यह शब्द वर्तमान समय मे प्राय नपु सकता का पर्याय अथवा यौन क्रिया के सम्पादन मे शारीरिक अयोग्यता का स्थानापन्न माना गया है। यह रोग काम क्रिया के अधिक्य के कारण तो होता ही है किन्तु इसका प्रमुख कारण हस्थ मैथुन अथवा स्वय पतन की आदत है। यह रोग अज्ञातावस्था मे वीर्यपात अथवा अनैच्छिक शुक्र प्रवाह के रूप मे स्वय प्रकट होता है और यदि यह निर्बाध रूप से होता रहा तो रोगी की शक्ति तीव्रता से क्षीण होती चली जाएगी और यह अवस्था शारीरिक क्षरण का कारण बन जाएगी। उस समय नीम हकीमो के विज्ञापनो के जाल मे न फँस जाये क्योकि किसी भी प्रकार की औषधि आपको आरोग्यता प्रदान कर सकती है। इसका उपचार तो केवल स्वास्थ्य सरक्षण एव आपकी जीवन चर्या के समय परिवर्तन मे छिपा है।

उपचार

सर्व प्रथम बृहदन्त्र को "एनिमा" की सहायता से साफ किया जाय क्योकि उसमे सग्रहीत मल सवेदक-तन्त्रिकाओ को कुपित करने वाला होता है। अत उचित तो यही है कि कम से कम दो सप्ताह तक प्रति रात्रि "एनिमा का प्रयोग करते रहे और तदनन्तर प्रति दूसरी रात इसका प्रयोग करे। दूसरी बात है दीर्घ श्वाँस खीचने की आदत का निर्माण करना और व्यायाम सम्बन्धी अध्याय मे वर्णित तरीको के आधार पर शारीरिक श्रम करें और जो भी व्यायाम आप करे खुली व शुद्ध वायु मे करे क्यो कि ये सब बाते सवेदक नाडी-तन्त्र को शीघ्र शक्ति एव आरोग्यता प्रदान करने वाले तत्त्व है। तीसरी है आहार पर विशेप ध्यान दिया जाना। यदि आप पूर्ण शाकाहार, कम से कम एक समय के लिए ही, अपनाएँ तो अत्युतक अन्यथा आहार के लिए उन्ही पदार्थो का चयन करे जो सुपाच्य तो हो।

समस्त प्रकार के मिर्च मसालो का परित्याग करते हुए काफी, तम्बाकू, और मद्य पान का त्याग करे विशेष कर मद्य का सेवन तो पूरी तरह त्याग दे। यदि आप नशैली वस्तुओ का सेवन करते रहेगे तो कोई भी उपचारात्मक उपाय आपके लिए सहायक नही हो सकेगा। चौथी बात है आँत साफ करने के पश्चात् प्रति रात्रि शीतल जल से स्नान करे। यदि सम्पूर्ण स्नान सम्भव न हो सके तो प्रजनन अँगो तथा मेरू दण्ड को (आधार से मस्तिष्क के छोर तक) रहन स्नान या कटि स्नान द्वारा शीतल जल से अवश्य धोये और फिर रोयेदार तौलिए से खूब रगड-रगड कर पोछे। पाँचवी बात है दृढ निश्चय पूर्वक मस्तिष्क को सत्साहित्य पढने मे लगाते हुए सद्चिन्तन मे लगाये और चित्त को कुमार्ग पर जाने से रोकने के लिए विषयान्तर करे और उत्तेजक साहित्य का पढना सर्वथा त्याग दे। छटी बात, अश्लील विचार एव कामोत्तेजक विचारो से दूर रहते हुए मस्तिष्क को अपनी शारीरिक अवस्था के सम्बन्ध मे चिन्तित न होने दे तथा अपने मे केवल आत्म-सयम की आदत ही पोषित करे। उपर्युक्त उपचार द्वारा रोगियो का आरोग्य लाभ प्राप्त हुआ है और आपको निश्चित रूप से आरोग्यता प्राप्त होगी यदि आप निश्चय पूर्वक सयम का नियम पालन करे और यौन-क्रिया सम्पादन से पूर्णतया सन्यास ले।

यद्यपि वृद्धजन प्राय. अपनी यौन क्रिया सम्पादन की आरोग्यता के सम्बन्ध मे प्रश्न करते है। इन सबके लिए हमारा उत्तर है कि पचास वर्ष की आयु के पश्चात् शक्ति-सचयन नितान्त असम्भव है और ६३ वर्ष की अति चरम सीमा व्यतीत होने पर तो व्यावहारिक रूप से भी असम्भव है।

मधुमेह (Diabetes)

यह बडा विचित्र और कष्टसाध्य रोग है। इसमे रोगी को मूत्र बहुत होता है। जिसमे शर्करा की मात्रा बहुत अधिक होती

है। इस रोग मे शरीर मे शर्करा का बहुत अधिक मात्रा मे निर्माण होता है जो किडनी द्वारा बाहर निकाल दी जाती है। कभी-कभी तो २४ घण्टे मे कई गैलन मूत्र हो जाता है। रक्त और श्राव मे शर्करा होने से पोषण बिगड जाता है, जिसमे शरीर मे और भी कई प्रकार के उपद्रव खडे हो जाते हैं। यह ऐसी बीमारी है, जिस पर अगर समय पर ध्यान न दिया गया तो घातक सिद्ध हो जाती है। इसलिये हर व्यक्ति को आरम्भ से ही अपने स्वास्थ्य पर ध्यान रखना चाहिये।

उपचार

इस रोग मे एनिमा का प्रयोग करना चाहिये। रोगी को भीगी चद्दर का लपेट देना चाहिये। इससे त्वचा पर वाञ्छित प्रतिक्रिया होगी। त्वचा का सूखापन दूर होगा। भीगी चद्दर का तापक्रम रोगी का शारीरिक अवस्था पर निर्भर करता है। अगर रोगी सशक्त है तो उसके लिए प्रात काल ठण्डे जल का स्नान लाभदायक है। कमजोर रोगी को गुन गुने जल मे प्रातः स्नान करना चाहिये। स्नान के बाद शरीर को हल्के हाथ से रगडना चाहिये ताकि पानी सूख जाय। इसमे रक्त सचरण सुधरेगा। इस चिकित्सा मे रोगी का आहार भी बहुत सन्तुलित होना चाहिये। मिठाई, चीनी, कारबोहाइड्रेट अथवा स्टार्च प्रधान भोजन सर्वथा त्याज है। चाय, काफी, कोला क्रीम आदि का परहेज करना चाहिये। चोकर सहित आटे की रोटियाँ लाभकारी है। भोजन खूब धीरे धीरे चबाकर थोड़ी मात्रा में करना चाहिये।

नित्य प्रात काल शुद्ध वायु मे टहलना, कुछ हल्के व्यायाम नियम से करना बहुत लाभकारी है।

—oo—

नवाँ भाग

प्राकृतिक चिकित्सा के उपचार

"मिट्टी, पानी और हवा, सब रोगो की एक दवा" यह प्राकृतिक चिकित्सा की मान्यता। प्राकृतिक चिकित्सा की पद्धति से कोई नुकसान होने की सम्भावा नही हैं। इसके अनुसार आचरण करने से रोग होने की ही सम्भावना नही है। इसे भोजन व्यायाम तथा अन्य दैनिक क्रिया कलापो की तरह इसे भी अपनी दिनचर्या मे शामिल कर लेना चाहिये ताकि कोई रोग ही न हो। अगर कोई छोटी मोटी शिकायत हो भी गई तो इन साधनो के सहारे वह शीघ्र ही मिट सकती है। प्रकृति माता की शरण मे जाने से पहले उसकी गोद मे स्थान पाने से मनुष्य निर्भयता की अनुभूति कर सकता है। आगे के कुछ पृष्ठो मे कुछ प्राकृतिक उपचारो का वर्णन किया गया है।

वाष्प-स्नान

शरीर से विजातीय द्रव्य को वाहर निकालने के लिए मल-मूत्र तथा श्वास प्रश्वासकी तरह स्वेद-छिद्र भी एक प्रमुख साधन है। कमजोर, क्षय रोगी, चर्मरोगी, रक्तचाप वाले एव हृदय के रोगी को वाष्प-स्नान नही देना चाहिये। वाष्प स्नान के समय रोगी के सिर पर ठण्डे पानी की पट्टी रखना हरगीज नही भूलना चाहिए। सिर की पट्टी को बार-वार ठण्डे पानी मे भिगोकर वदलते रहना चाहिये। प्रात. काल खाली पेटी या हलका पेय लेने के एक घटे बाद वाष्प-स्नान लेना अच्छा रहता है। वाष्प-स्नान देने के वाद सूखे या ठण्डे गीले कपडे से पसीना अच्छी तरह पोछकर अशक्त रोगी को बिस्तर पर गर्म कपडा ओढाकर लेटा देना चाहिये, ताकि ठण्डी हवा न लगने पाये।
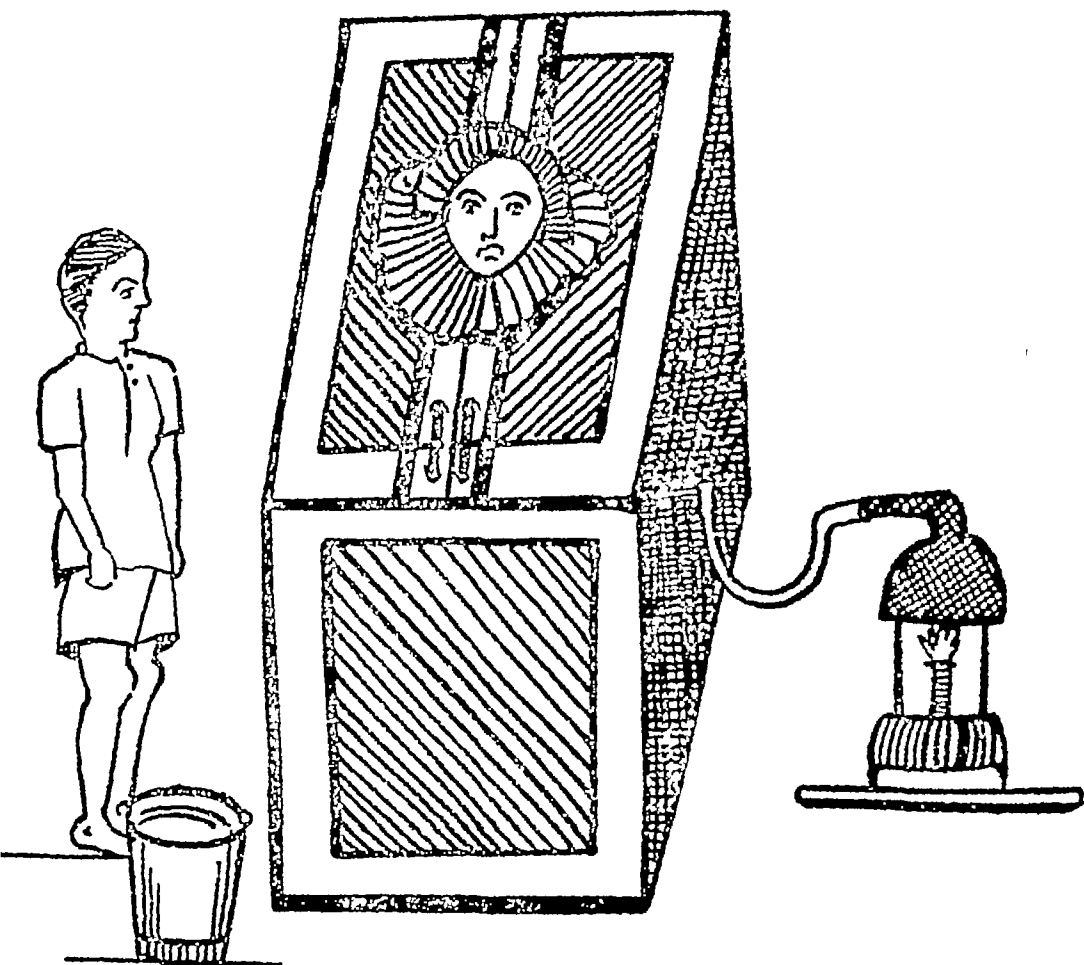
रोगी को वाष्प पेटी के भीतर बैठाकर वाष्प-स्नान दिया जा रहा है।

लाभ

अतिशय तीव्र सर्दी से सिर मे भारीपन, नाक से पानी बहना चक्कर आना तथा स्वासोच्छ्वास मे रुकावट होने पर वाष्प स्नान से लाभ होता है।

सूर्य स्नान

शरीर पर से सभी कपडे उतार कर सूर्य-स्नान गर्मी के दिनों मे प्रात आठ बजे पहले व सायकाल छ. बजे बाद और सर्दी के दिनो मे प्रात नौ साढे नौ और सायकाल ५ वजे बाद करना चाहिये। वरसात के दिनो मे सूर्य निकले तभी लाभ लेना चाहिये। सूर्य की किरणो का लाभ सभी अगो को मिल सके इस लिए उल्टे, सीधे और करवट वदल कर सूर्य स्नान लेना चाहिए। धूप तेज होने पर सिर व आँखो को कपडे से ढक लेना चाहिए अन्यथा सिर दर्द या चक्कर आने का भय है और धूप मे आँखे खुली रहने से दृष्टि मन्द होती है। गर्मी मे सूर्य स्नान १० मिनट से तीस मिनट व सर्दी मे २० मिनट से एक घण्टे तक लिया जा सकता है। धूप से मालिश करने से सहज ही सूर्य स्नान भी हो जाता है। स्त्रियाँ खूब महीन कपडा पहन कर या औढ कर धूप मे वैठने से सूर्य स्नान का लाभ ले सकती है।

लाभ

सूर्य की किरण जन्तुनाशक और आरोग्यप्रद होती है। उनमे विटामिन "डी" विद्यमान रहता है जिसमे हड्डियो का कमजोर होना, दाँत रोग, चर्म रोग व माँस पेशी सम्बन्धी रोगो मे लाभ होता है।

सीधा लेटा कर एनिमा देना

एनिमा देते समय मरीज की हालत को ध्यान मे रखना चाहिए। यदि मरीज कमजोर तथा कम जीवनी-शक्ति वाला हो
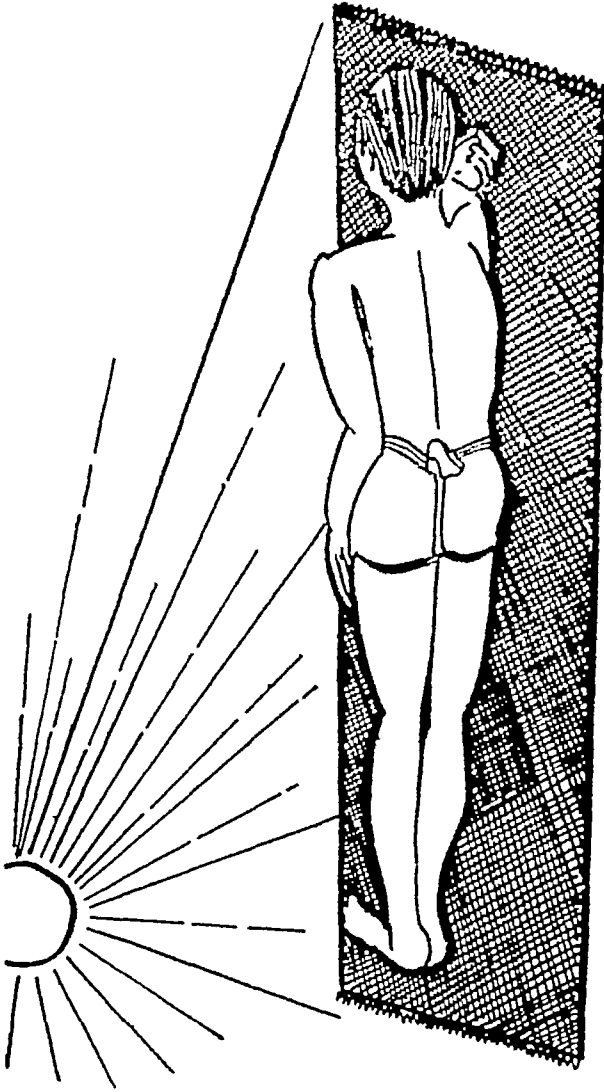
करवट से लेटने पर सूर्य स्नान

तो 99°-100° पानी का एनिमा देना चाहिए। सशक्त आदमी को ही ठण्डा या 98° से नीचे तापमान का पानी दे सकते है। एनिमा बर्तन को साधारणतया ढाई से तीन फुट ऊँचे पर रखना चाहिए विशेष स्थिति मे जब मरीज की आँते कमजोर हो, आँतो मे सूजन, अलसर या घाव हो तो एनिमा-बर्तन अधिक से अधिक एक फुट और कम से कम आधा फुट ऊँचा रखना चाहिए। एनिमा की नाली मे से हवा निकाल देनी चाहिए। नाजल पर तेल लगा देना चाहिये जिससे भीतर की त्वचा मे घर्षण न हो। सीधे लेटाकर एनिमा देने की विधि मरीज के लिए आरामप्रद है। अत्यन्त कमजोर मरीज को तो चित्त लेटाकर ही एनिमा देना चाहिए। आन्तरिक ज्वर (टाइफाइड), कॉलरा जैसी बीमारी, मे यह स्थिति उपयुक्त है, क्योकि इससे मरीज की आँतो को जो पहले से ही कमजोर है, किसी प्रकार का धक्का पहुँचने का अदेशा नही रहता। सादा पानी स्वस्थ आदमी के लिए, जिसका मल मलाशय मे आ गया हो और मल को सिर्फ बाहर निकालने के लिए एनिमा का उपयोग करना हो, उपयुक्त है। नमक का पानी आँत मे रहकर मल को पतला करने तथा बाहर निकालने मे मदद पहुँचाता है। नीम की पत्तियो का पानी आँतो के कृमियों को नष्ट करता है और यह पानी जन्तु नाशक है। लहसुन का पानी जन्तु नाशक, आँत के जन्तुओ को नष्ट करता है। नीबू का पानी पुराने मल को आँत से अलग करने मे खूब सहायक होता है।

लपेट

लपेट देने के लिए दो कपडो की जरूरत होती है। एक मुलायम, पतला सछिद्र सूती सफेद कपडा और दूसरा ऊनी गर्म कपडा। सूती कपडे को साधारण ठण्डे पानी मे भिगोकर जिस अग पर लपेट देनी हो, उस पर एक, दो या विशेष परिस्थितियो मे तीन तह आवश्यकतानुसार लपेटना चाहिये। कपडे की तह के अनुसार प्रतिक्रिया होती है। लपेट वाले सूती कपडे को पूरी
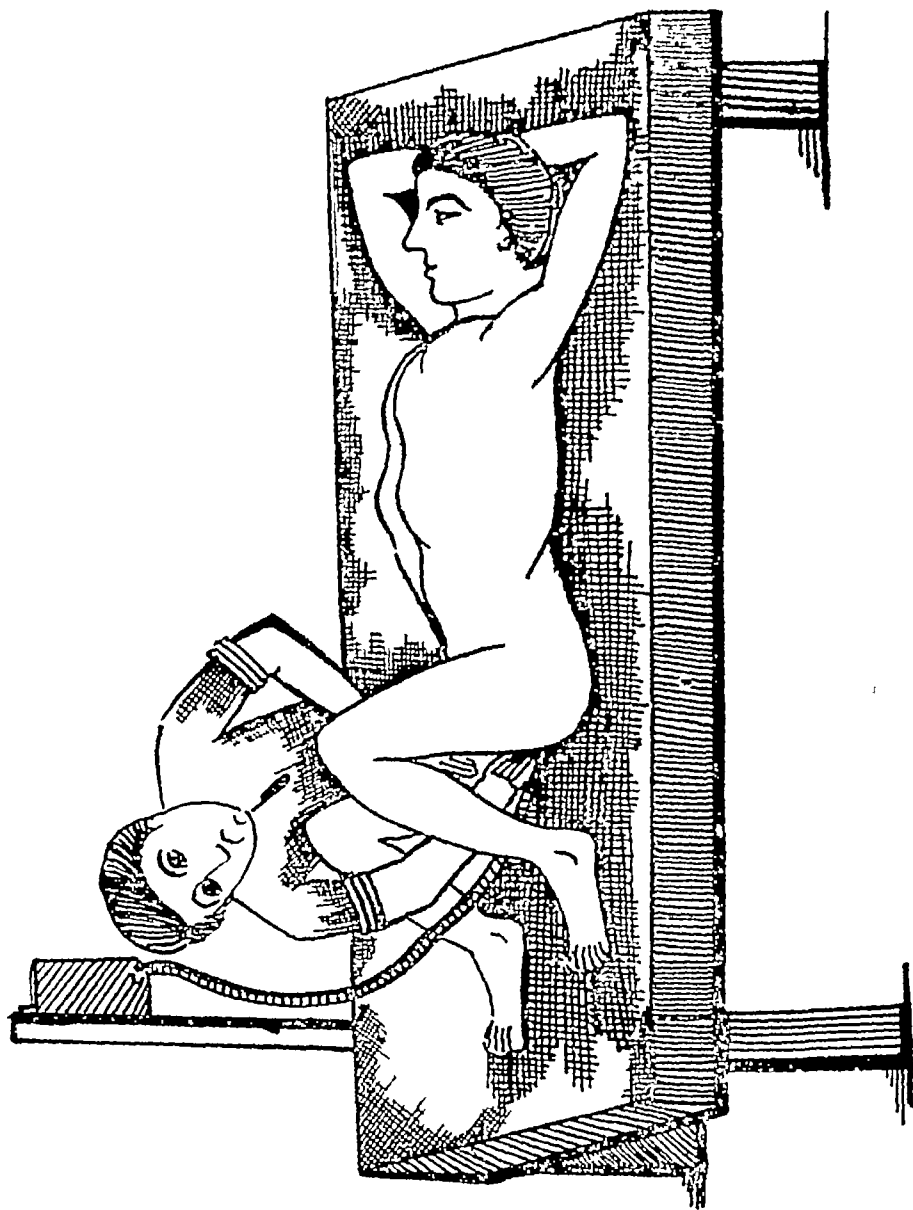
सीधे लेटाकर एनिमा दिया जा रहा है।
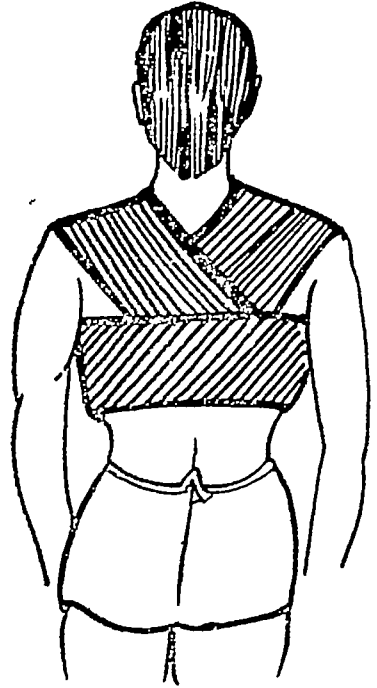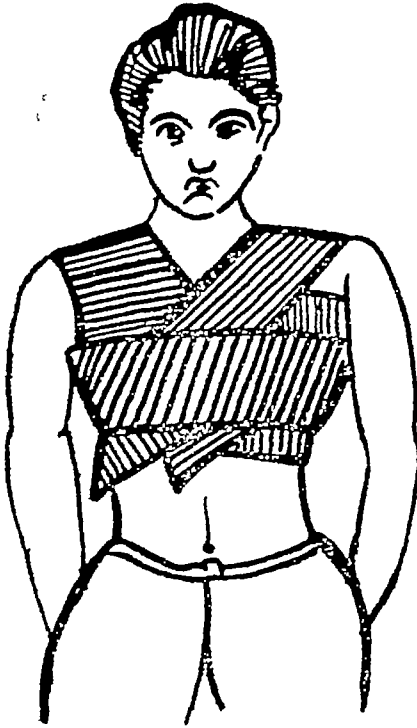
लपेट की प्रारम्भिक अवस्था सामने तथा पीछे की ओर से
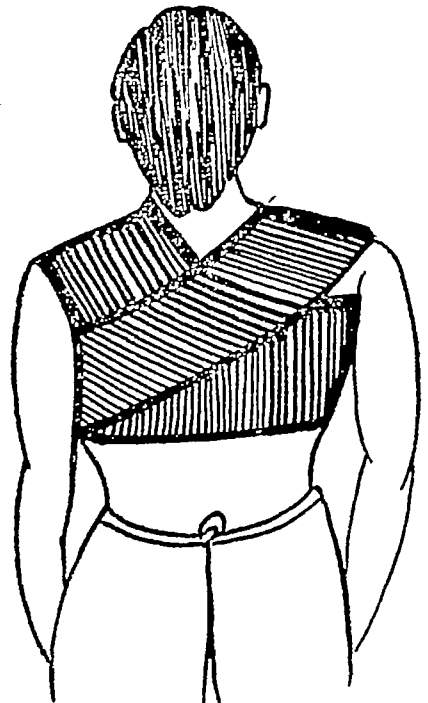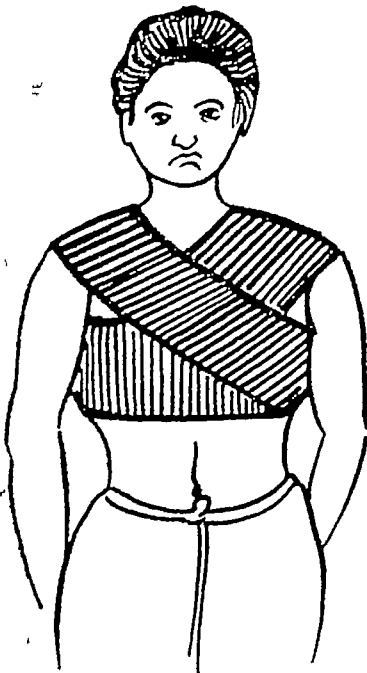
तरह ढकते हुए उसके ऊपर ऊनी कपडे की एक या दो तहे लपेटना जरूरी है, ताकि लपेट के समय बाहर की हवा का असर उस स्थान पर न हो तथा ठण्डे पानी की प्रतिक्रिया शरीर पर ठीक तरह हो सके। लपेट देने का सर्वोत्तम समय दोपहर के भोजन भोजन के २-३ घण्टे बाद से १ से ३ बजे तक का है।

सूती पट्टी ६-१२ इन्च चौडी तथा १० फुट लम्बी होनी चाहिए। उसी प्रकार गर्म पट्टी ६-१२ इन्च चौडी और १२ फुट लम्बी होनी चाहिये। लपेट १५ मिनट से लेकर एक घण्टे तक रखी जा सकती है। विशेष स्थितियो मे सोने से पूर्व मरीज को लपेट देकर सुला दिया जाता है और सुबह उठते ही यह पट्टी निकाली जाती है। प्रतिक्रिया मे कोई बाधा न आने पर रात को ८-६ घण्टे पट्टी रखी जा सकती है।

लाभ

फेफडे की बीमारी जैसे क्षय रोग दमा, सर्दी, जुकाम, खाँसी, प्लूरसी आदि मे छाती की लपेट सर्वोत्तम है। खाँसी जीर्ण सर्दी वाले मरीज को इस प्रयोग से विशेष लाभ होता है। पेट की लपेट से वायु-प्रकोप वाले रोगी को विशेष लाभ होता है। कब्ज वाले मरीज को काफी मदद मिलती है। जिन के पावन संस्थान के अवयव कमजोर हो, उसे लपेट से बहुत लाभ होता है। खाँसी दमा, श्वासनलिका मे सूजन आने पर गले की लपेट से निश्चित रुप से लाभ होता है। कमर की लपेट मे मूत्र-सस्थान सम्बन्धी रोग, कमर दर्द, गर्भाशय-सम्बन्धी रोगो मे इस लपेट से लाभ होता है।
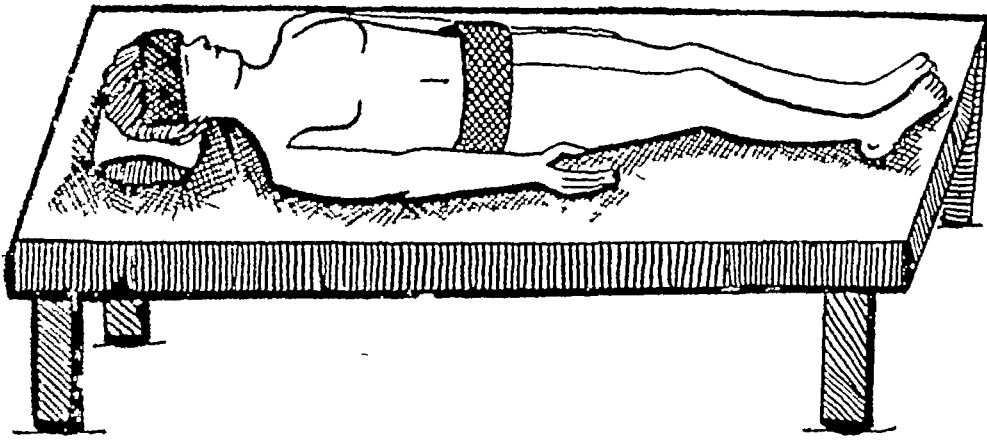
सिर तथा पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी।
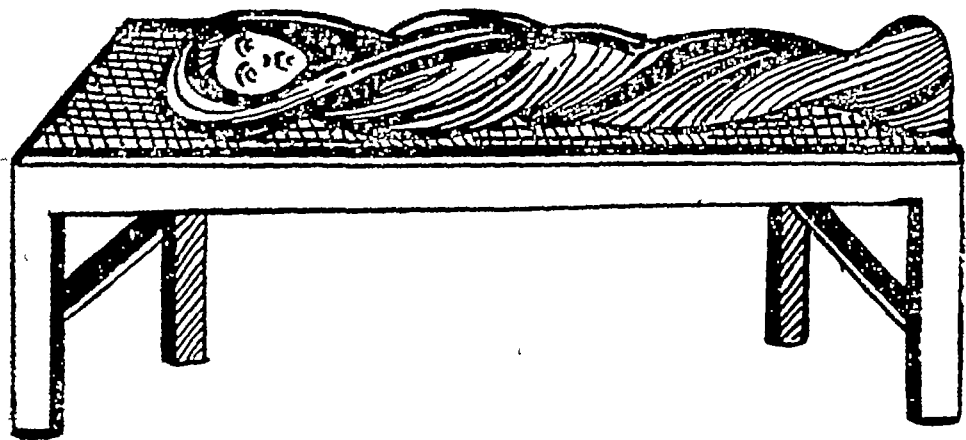
गीली चादर की लपेट।

सिर तथा पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी

सिर पर तीन प्रकार से पट्टी का इस्तेमाल किया जाता है। कपाल पर ४ इन्च चौडी व एक फुट लम्बी पट्टी इस प्रकार रखी जाए कि कपाल के दोनो तरफ कान तक आ जाए। इसे ६ इन्च चौडा करने से यह पट्टी आँखो के ऊपर भी आ सकती है। दूसरा तरीका यह है कि गोल टोपी की तरह मिट्टी की पट्टी बना कर सिर पर रखी जाए और तीसरा तरीका है सिर पर सीधी मिट्टी लगाना परन्तु इस मे पूर्ण लाभ सिर के बाल निकाल देने से ही होता है। वाल रखने वालो को मिट्टी लगाने से पूर्व बालो को भिगो लेना चाहिए और बालो के बीच मे ऊँगलियाँ डालकर उस पर मिट्टी की मोटी तह रखी जाए। सिर तथा कपाल पर दोपहर के भोजन से एक घण्टे पश्चात् आराम करते समय या रात को सोने से पूर्व भोजन से एक घण्टे बाद मिट्टी की पट्टी लेनी चाहिए। सिर दर्द, सिर का भारीपन, अनिद्रा, चक्कर आना, नाक से खून बहना आदि बीमारियो मे सिर पर मिट्टी की पट्टी रखने से अच्छा फायदा होता है।

लाभ

मूर्छा या फिट्स अधिक तीव्र हो तो सिर पर मिट्टी लगाने से जागृति आती है इसके साथ-साथ गर्दन तथा रीढ पर सीधी मिट्टी का प्रयोग करने से मरीज को जल्दी जागृत किया जा सकता है। मस्तिष्क के आवरण की सूजन, उच्च रक्त चाप वाले मरीजो को सिर पर टोपी की तरह मिट्टी की पट्टी या सीधी मिट्टी लगाने से लाभ होता है। स्त्रियो के बाल झडते हो या वालो का कालापन कम हो, सिर मे रूखी हो या फोडे हो तो उन्हे सिर पर मिट्टी लगानी चाहिए। मिट्टी का प्रयोग स्नान से एक घण्टे पूर्व होना चाहिये। आँख आने पर आखो पर भी मिट्टी की पट्टी रखने से लाभ होता है आँख की पट्टी आधे घण्टे मे गर्म हो जाती है उसको वदल देना चाहिए। पाचन सस्थान के रोगो को

दूर करने के लिए पेट पर लगभग नौ इन्च चौडी और डेढ फुट लम्बी मिट्टी की पट्टी रखी जाती है इससे कब्ज, पेट की वायु, अलसर, सूजन आदि मे फायदा होता है। खाली पेट पर पट्टी अधिक फायदा करती है। यह पट्टी आधे घण्टे से एक घण्टे तक रखी जा सकती है। भोजन के कम से कम २-३ घण्टे बाद भी यह पट्टी रखी जा सकती है।

ठण्डी मिट्टी का सर्वांग लेप

१२ घण्टे तक अच्छी तरह भीगी हुई मुलायम मिट्टी पूरे शरीर पर लगा कर सूर्य स्नान करना चाहिये। लगभग ४०
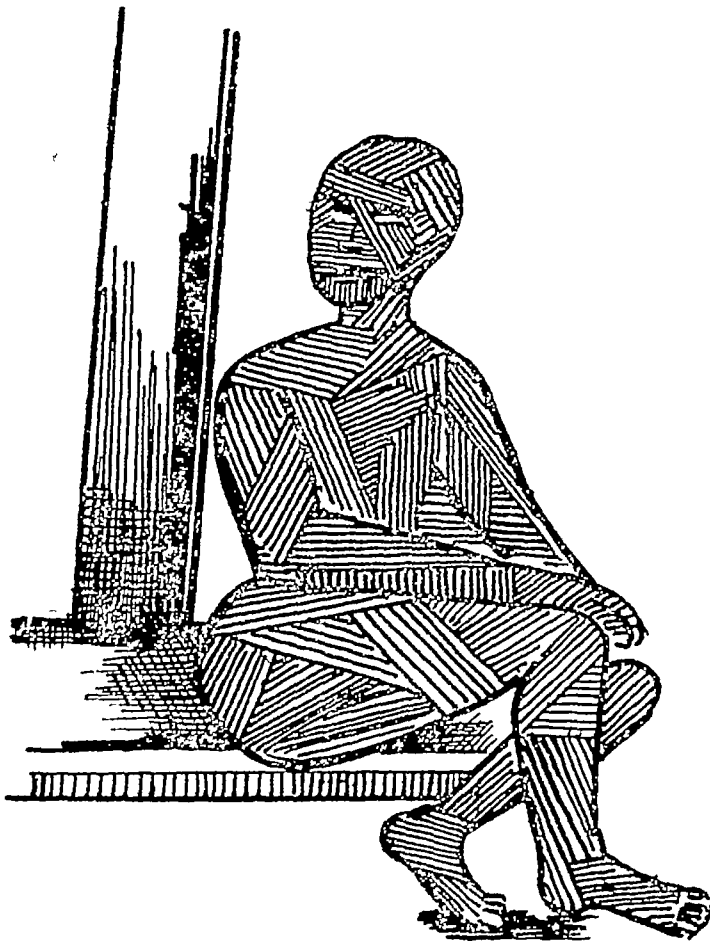
ठण्डी मिट्टी का सर्वांग लेप

मिनट या एक घण्टे तक धूप मे मिट्टी सूख जाने पर ठण्डे पानी से सब मिट्टी धोकर त्वचा को साफ करने के लिए शरीर पर नीबू के रस की मालिश करके नारियल का तेल लगाकर स्नान किया जाए। स्मरण रहे मिट्टी बिलकुल स्वच्छ और मलाई की तरह चिकनी होनी चाहिए। इस रोग के रोगी को मिट्टी का लेप कर धूप की बजाय छाया मे ठण्डी हवा मे आधे या एक घण्टे बैठना चाहिए। मिट्टी के कुछ सख्त हो जाने पर ठण्डे पानी से स्नान किया जाए। इसके अलावा ६ फुट लम्बा, ढाई फुट चौडा व पैरो की ओर से ३ फुट व सिर की तरफ से १ फुट गहरा गड्ढा किसी पेड के नीचे या छाया मे बनाकर उसमे छनी हुई मिट्टी रात भर भिगो दी जाए। प्रात उसे कीचड की तरह बना कर नगे शरीर या छोटी लगोटी पहन कर गड्ढे मे लिटा कर मरीज के मुँह और नाक को छोड कर सारे शरीर पर मिट्टी की मोटी तह रखनी चाहिए। यह २० मिनट से लेकर ६० मिनट तक किया जा सकता है। गड्ढे मे निकालने के बाद ठण्डे पानी से स्नान कर शरीर को गर्म करने के लिए कपडे ओढ कर बिस्तर मे आराम करे।

लाभ

सभी प्रकार के चर्म रोगो मे मिट्टी का लेप लाभदायक है। श्वेत कुष्ठ मे सर्वांग मिट्टी का लेप फायदा करता है। घाव पर ठण्डी मिट्टी का लेप करने से आराम रहता है।

कटि स्नान

कटि स्नान प्रात· काल एनिमा के बाद बिना कुछ खाये खाली पेट करना ज्यादा फायदामन्द है। ठण्डे कटि स्नान के लिए रात को टब मे पानी भरकर हवा मे रख देना चाहिए जिससे पानी अच्छी तरह ठण्डा हो जाए। मरीज की सहन-शक्ति कम होने पर ताजे पानी का भी उपयोग किया जा सकता है।

ठण्डे कटि स्नान से पूर्व व्यायाम द्वारा शरीर को थोडा गर्म कर लेना चाहिए, जिससे ठण्डे पानी की अनुकूल प्रतिक्रिया हो। अशक्त मरीज को ठण्डा कटि स्नान लेते समय गर्म पानी के वेसिन में पैर डुवाकर रखने से ठण्ड की अनुमति कम होती है। स्नान के वाद
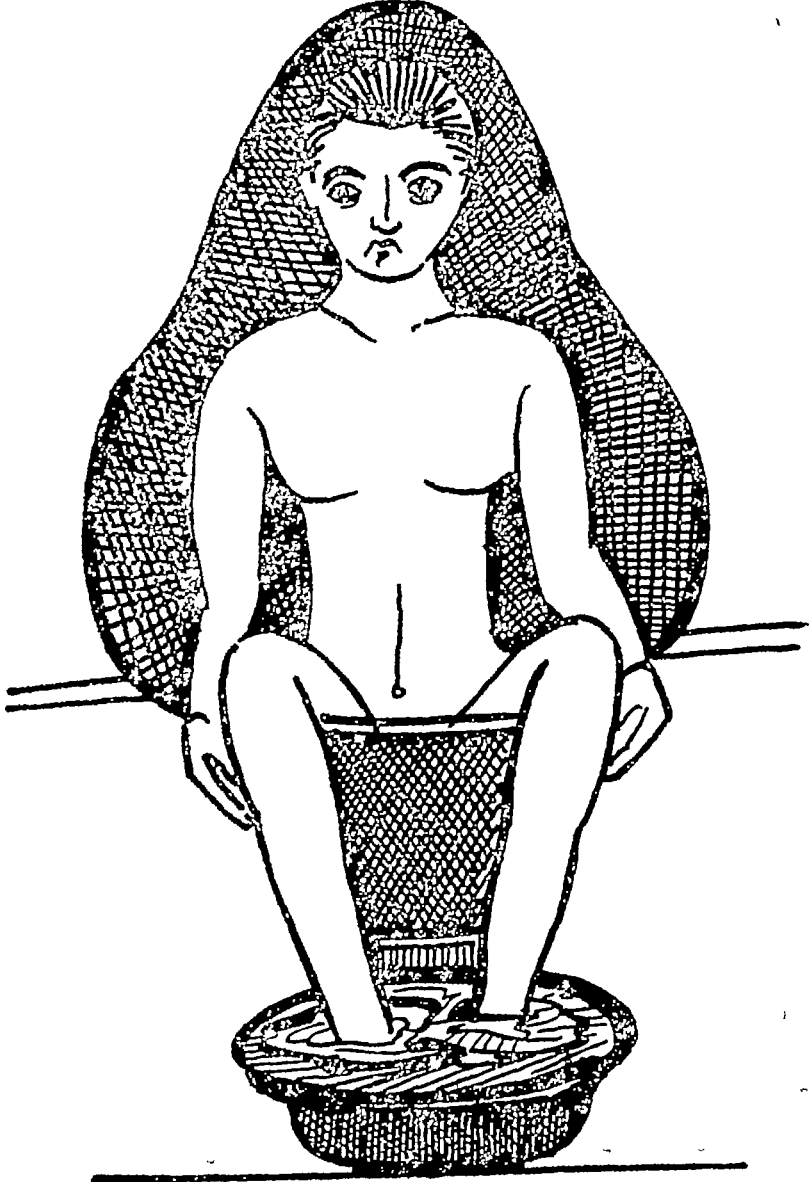
गर्म पानी के वेसिन सहित ठण्डा कटि स्नान

शरीर मे १०-१५ मिनट गर्मी लाने के लिए गर्म कपडे लपेट कर मरीज को लेटा देना चाहिए। गर्म-ठण्डा कटि स्नान के लिए दो टब की आवश्यकता होती। एक टब मे १०० डिग्री या १०२ डिग्री तक गर्म पानी और दूसरे टब मे ऊपर बताये गये ठण्डे कटि स्नान की तरह ठण्डा पानी भरना चाहिए। कटि स्नान गर्म पानी के टब मे शुरू करके अन्त मे ठण्डा पानी के टब मे करना चाहिए।

लाभ

पेशाब मे रूकावट, गर्भाशय सम्बन्धी रोग, छोटी-बडी आँत के रोग, मूत्राशय, वृक्क आदि मे सूजन, दर्द, क्रियाहीनता इन सब बीमारियो मे गर्म ठण्डे कटि स्नान से लाभ होता है। पथरी के रोगो मे इस स्नान का प्रयोग लाभप्रद है।

गर्म पाद-स्नान

पाद-स्नान के लिए पन्द्रह इन्च चौडा तथा पौने दो फुट गहरा बर्तन होना चाहिये। चौडे मुँह की बडी बालटियो का भी प्रयोग किया जा सकता है। ९८ डिग्री से १०० डिग्री उष्णाक का समशीतोष्ण पानी उपर्युक्त प्रकार के बर्तन मे भरकर सोने के पूर्व गर्म पाद स्नान करना चाहिये। आवश्यकतानुसार ५ से १५ मिनट तक पैरो को पानी मे रखने के बाद सूखे तौलिये से पोछ लेना चाहिये। इससे कभी-कभी सिर पर हल्का पसीना आता है। इससे नीद मे मदद मिलती है। कमजोर मरीज के सिर पर ठण्डे पानी से भीगा हुआ तौलिया रखना चाहिए। नही तो चक्कर तथा कमजोरी आने की सम्भावना रहती है।

लाभ

गर्मपाद स्नान से मलेरिया की कंपकपी तुरन्त दूर हो जाती है। बुखार का जोर भी कम हो जाता है। दमा के दौरे के

समय गर्म-पाद स्नान से रोगी को काफी आराम मिलता है। अनिद्रा तथा सिर दर्द, जुकाम या भारीपन दूर करने के लिए गर्म पाद-स्नान का प्रयोग लाभप्रद है।

गर्म पाद स्नान

गर्म पाद स्नान लेते समय कम्बल लपेटकर सौम्य वाष्प-स्नान

दसवाँ भाग

कुछ महत्वपूर्ण सुझाव

गलत रहन सहन, गलत खान-पान और गलत आदतो से लोग बीमार पडते हैं यह बात तो निर्विवाद है। रोग से मुक्ति पाने के लिये अनेक चेष्टाएँ की जाती है और करनी भी चाहिये। सबसे अनोखी बात तो यह है कि लोग रोग से बहुत डरते है। अनुभवो के आधार पर यह बात दृढता पूर्वक कही जा सकती है कि रोग से डरना नही चाहिये। रोग आपका शत्रु नही वरन् मित्र है। वह आपका भला करने के लिये आता है क्योकि शरीर को स्वस्थ रखने के लिए प्रकृति के पास यही मात्र साधन है। जब कभी प्रकृति के नियमो की अवहेलना होती है, शरीर से ज्यादती की जाती है तो उसकी प्रतिक्रिया शरीर के उस कमजोर अग पर होती है, जिसकी सबसे अधिक मरम्मत की आवश्यकता है। रोग का कार्य विनाशकारी नही है, बल्कि शरीर के दोषो को बाहर निकाल फेकना और उसे स्वस्थ बना डालना है। स्वास्थ्य प्राप्ति के लिये शरीर के अन्दर से ही सब प्रकार का सहयोग मिलना चाहिये। दवाओ का सेवन हानिकारक है और यह बात डॉक्टर लोग भी मानने लग गये है। दवाओ का कार्य रोग के लक्षणो को दवा देना है जो प्रकृति के चिकित्सा कार्य मे बाधक है, उनसे रोग जड सहित नही मिटता। वेदना या दर्द रोग का प्रधान लक्षण है, वेदना स्वय रोग नही है। दर्द का काम है रोग होने की अग्रिम सूचना मस्तिष्क तक पहुँचा देना। उस चेतावनी को अनसुनी करना, वल्कि उसकी चेतावनी की घण्टी की ध्वनी को औषधियो द्वारा मन्द कर देना या दवा देना नितान्त भूल है। और इसके परिणाम भी बुरे होते है। अत मित्र की तरह हमे रोग का स्वागत करना चाहिये और शरीर की सफाई के कार्य मे

हमे उसकी पूरी मदद करनी चाहिये, जिससे हमारा खोया हुआ स्वास्थ्य भी लौट आयेगा और रोग भी चला जायेगा ।

रोग होने पर उसको मिटाने की चेष्टा तो सभी को करनी पडती है, पर कितना अच्छा हो रोग होने ही न दिया जाय। हमारे स्वयं के विपय मे ज्ञान, शारीरिक, मानसिक एव नैतिक स्वच्छता एव पवित्रता, स्वास्थ्य विज्ञान, सफाई विज्ञान एव शरीर क्रिया-विज्ञान आदि ऐसे आवश्यक विषय है, जिनका समुचित ज्ञान होना और उनका आचरण करना अनिवार्य है, जिससे रोग हमारे पास ही नही आयेगा ।

जव तक किसी भी यन्त्र का प्रत्येक पुर्जा दुरस्त न हो, चालू अवस्था मे न हो, तव तक उस यन्त्र से अधिकतम परिणाम प्राप्त नही हो सकते । तव आप स्वय ही सोच सकते है कि शरीर के अग प्रत्यगो को अपनी सही स्वाभाविक अवस्था मे रखना कितना अधिक आवश्यक है । मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जो शरीर-रचना विज्ञान एव शरीर-क्रिया विज्ञान के सिद्धान्तो को जाने बिना उसे मनमाने ढग से घसीटता रहता है, उस पर अत्याचार करता है । यही कारण है कि शरीर जल्दी ही नष्ट हो जाता है । आहार-विहार, व्यायाम, पोशाक आदि के प्रयोग के विषय मे हमे मालूम होना चाहिए कि शुद्ध वायु एव सीधे सरल भोजन का हमारे शरीर के साथ कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है । यह कहना अति युक्ति नही होगी कि अन्य अर्थकारी अथवा कला-कौशल आदि विद्याओ मे निष्णात होने से पहले मनुष्य को पाचन क्रिया के मूलभूत सिद्धान्त, सन्तुलित आहार, शुद्ध वायु के सेवन से लाभ और असन्तुलित भोजन और विषाक्त वातावरण के दुष्परिणामो का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है ।

भोजन के विषय मे इतना बता देना पर्याप्त होगा कि सर्व प्रथम अधिक मात्रा मे भोजन नही करना चाहिये । जीभ के स्वाद के वशीभूत होकर पेट ठूँस-ठूँस कर नही भरना चाहिये ।

मिर्च-मसालो का प्रयोग हानिकारक है। साग-सब्जियो को जितना सम्भव हो सके उनके प्राकृतिक रूप मे ही ग्रहण करना चाहिये। कई प्रकार की कच्ची तरकारियो के सेवन से आशातीत लाभ होते है। आग के प्रयोग से अन्न व साग सब्जियो के बहुत से गुण अथवा विटामिन नष्ट हो जाते है। आग से पकाये हुए अन्नो की अपेक्षा अकुरित-अन्न कही अधिक लाभदायक होते है। जो सब्जियाँ प्राकृतिक रूप मे नही खाई जा सकती, वे भाप मे उबाल कर अथवा हल्की आँच मे पका कर काम मे लाई जा सकती है।

शुद्ध वायु मे नियमपूर्वक प्रात काल टहलना तथा अन्य प्रकार के व्यायाम करना मनुष्य को नीरोग बनाता है। लोगो की प्राय शिकायत रहती है कि हमे व्यायाम के लिए समय नही मिलता। पर व्यायाम न करने से मनुष्य आयु और बल दोनो ही खो बैठता है। फिर दौड धूप किस काम की ?

जब कभी शरीर अस्वस्थ हो तो उपवास कर लेना चाहिये अथवा फलाहार या रसाहार से शरीर के विकारो से मुक्ति पा लेनी चाहिये। पर दवा का प्रयोग से कभी नही करना चाहिये, डॉक्टर भी मानने लगे है कि दवाओ के प्रयोग से लाभ के स्थान पर उल्टे नुकसान होता है। इसलिए मौसम के फलो का सेवन करने से और शरीर को आराम देने से अल्प ही समय मे रोग-मुक्ति हो सकती है। अधिकाश बीमारियाँ पेट खराब होने से ही होती है। तली हुई वस्तुओ के सेवन से, जैसे आँतो मे चिपकने वाले पदार्थो के सेवन से अक्सर कब्ज हो जाती है। कब्ज से दूर रहने के लिये भोजन मे चोखर सहित आटे का प्रयोग और छिलके सहित साग सब्जी का प्रयोग एव नारियल, अमरूद, मूली, गाजर आदि का सेवन वाछनीय है। फिर भी पेट साफ न हो तो बीच-बीच मे एनिमा का प्रयोग किया जा सकता है।

वहुत से ऐसे आसन व्यायाम भी है जो पेट साफ रखने मे बहुत मदद करते हैं और आसनो के निरन्तर अभ्यास से स्थायी काम होता है।

मनुष्य शरीर मे छीजन (catabolism) व सृजन (anabolism) की प्रक्रिया हरदम चलती रहती है, अगर क्षय की प्रक्रिया ही अधिक रहती तो स्वास्थ्य मे निरन्तर गिरावट आती जायेगी। इन दोनो प्रक्रियाओ के बीच सतुलन रखना चाहिये।

प्रतिद्वन्दता, होड, दूसरे से आगे बढने की प्रवृति और उसी चेष्टा मे स्वास्थ्य को बिगाड लेना आदि कारणो से मन मे हर समय तनाव बना रहता है। आज के जीवन मे तनाव ही दृष्टिगोचर होता है, मन प्रसाद अथवा मानसिक शान्ति शान्ति का स्पर्श तो मनुष्य कर ही नही पाता और हर समय वह थका-माँदा रहता है। शारीरिक और मानसिक विश्राम न मिलने से तन्त्रिकावसाद (neurasthemia),हृदय रोग (Heart attack) आदि बीमारियाँ हो जाती है। अभ्यास के द्वारा शवासन जैसे प्रयोगो से इन घातक बीमारियो से राहत मिल सकती है। काम के क्षणो मे भी शिथलीकरण के अभ्यास द्वारा मानसिक शान्ति प्राप्त हो सकती है।

स्मरण रहे की शरीर को स्वस्थ रखने के लिये मन का वडा हाथ है। यद्यपि यह कहा जाता है कि स्वस्थ शरीर मे मन भी स्वस्थ पाया जाता है पर यह कथन भी सत्य है कि मन स्वस्थ रहने से शरीर भी स्वस्थ रहता है। मन और शरीर को स्वस्थ रखने के लिये मनुष्य को हर समय आनन्द मे मस्त रहना चाहिये, अन्य चीजे भूली जा सकती हैं, पर हर वक्त और हर हालत मे मनुष्य को प्रसन्न रहना न भूलना चाहिये। आनन्द का बहुमूल्य खजाना हमारे अन्दर ही छिपा हुआ है। अगर हम हर समय प्रसन्न रहने का दृढ सकल्प करेंगे तो हमे अवश्य ही सफलता

मिलेगी। बार बार अपने आप से कहे कि आनन्द मे हूँ, मैं आनन्द मे हूँ। थोड़े दिन के अभ्यास से हम देखेंगे कि हमारे अन्दर मानसिक, भौतिक और शारीरिक वल मे काफी वृद्धि हुई है। सन्तोष और सुख स्वस्थ शरीर का आधार है।

कहा भी है—

चाह गई चिन्ता मिटी मनवा वेपरवाह
जाको कछु न चाहिये वे है शाहनशाह ।।

इसका अभिप्राय अकर्मण्य वनने का नही है। काम मे भी यह भाव रखा जा सकता है। अगर हमे स्वय प्रसन्न रहना है तो हमे चाहिये कि हम दूसरो को, अपने पडौसियो को एव प्राणी मात्र को किसी प्रकार का कोई कष्ट न पहुँचाएँ। प्रसन्न रहने के लिये इससे कोई दूसरा सुगम उपाय नही है। निराशा और पराजय स्वीकार करके बैठ जाना मनुष्य की सवसे वडी भूल है। अगर आकाश मेघाच्छन्न है चारो ओर अन्धकार ही अन्धकार फैला हुआ है, शोक ही शोक छाया हुआ है तो उसमे प्रकाश की रक्तिम रेखा का अवलोकन कीजिए।

"हर हाल खुशी, हर वक्त खुशी,
हर गम मे अमीरी है वावा।"

अगर इन साधारण से नियमो का पालन किया जा सकता है तो यह समझ लीजिए कि आरोग्य, आनन्द और कर्म-कुशलता की छडी हमारे हाथ मे आ गई।

विद्यार्थियो के लिए कुछ सुझाव

विद्याध्ययन का समय जीवन मे सुनहला अवसर है। इसी काल मे अपने जीवन की नीव डाली जाती है। शारीरिक, नैतिक

एवं मानसिक शक्तियो का विकास होता है, जिसके आधार पर जीवन की यात्रा आरम्भ होती है और तय होती है। अगर विद्यार्थी वर्ग इस वहुमूल्य समय का सदुपयोग करेंगे तो नि सन्देह ही उनका भविष्य उज्ज्वल होगा।

पर आज का विद्यार्थी समाज अपने मे ही उलझा हुआ है। आज का युवक लक्ष्य को भूला हुआ सा प्रतीत होता है, उसके पास भावी जीवन की कोई रूप रेखा नही है। लगता है उन्हे दिग्भ्रम सा हो गया है। न स्वास्थ्य निर्माण के लिए कोई प्रयत्न है, न अध्ययन का कोई निश्चित कार्यक्रम है, न ही चरित्र निर्माण मे रूचि है। पर इस नैराश्यपूर्ण जीवन मे उनके मन मे सिवाय विनाश लीला के और कुछ नही सूझता। उसी निराशा के वातावरण मे समय समय पर विद्यालयो अथवा अन्य शिक्षा सस्थानो मे विद्यार्थियो के आन्दोलन चलते रहते है। समय पर परीक्षाएँ नही हो पाती। प्रश्न पत्र कुछ कठिन आ गया तो हडताल कर वैठते है। परीक्षा मे नकल करने की प्रवृति बढती जा रही है। निरीक्षको पर आक्रमण होते है। गुरू शिष्य मे आत्मीयता का भाव तो दूर रहा, आपस मे खिचाव तनाव वना रहता है। यह कहना चाहिये कि छात्रो मे अनुशासनहीनता अपनी चर्म सीमा पर है।

विद्यार्थी-समाज ही इस अनुशासनहीनता के लिये पूर्णतया दोषी नही है। प्रथम तो हमारी शिक्षा पद्धति ही दोषपूर्ण है। लम्वे अर्से तक पढ लिख कर तथा उसमे जीवन का वहुमूल्य समय लगाकर जव विद्यार्थी कॉलेज से वाहर आता है, तो उसके सामने रोजी रोटी का एक वहुत वडा प्रश्न होता है। सहज मे ही उसे नौकरी पेशा नही मिलता और न ही उसके द्वारा प्राप्त डिग्रियाँ उसे उदर-पोषण योग्य वना सकती है। तव तो उसे पढ लिखकर और भी निराशा प्राप्त होती है और वह समाज के लिए भार-स्वरूप बन जाता है।

इस सन्दर्भ मे विद्यार्थी-समाज का क्या कर्तव्य है, इस पर हम सक्षेप मे प्रकाश डालना चाहेगे। सर्व प्रथम हमें इस पहलू पर विचार करना चाहिये कि हम स्वय विद्यार्थी जीवन मे अपने विकास के लिये सम्पूर्ण प्रयत्न करें। रहन सहन, वेश भूषा, वोल चाल और विचारो मे हम पश्चात्य देशो की नकल कर रहे हैं। धूम्रपान, मद्यपान तथा अन्य दुर्व्यसन इस आधुनिक सभ्य समाज के लक्षण माने जाते हैं। ये व्याधियाँ विद्यार्थी समाज में वहुत जोरो से घर कर रही हैं। जहाँ आधुनिक विज्ञान की श्रेष्ठता को अस्वीकार नही किया जाता और वहाँ हमारे छात्र समाज को भी समय की गति के साथ कदम मिलाकर आगे वढ़ना है। पाश्चात्य देशो की इस ऊपरी सतह पर नकल करना आत्म प्रवचना के सिवाय और क्या हो सकता है ? इस पाश्चात्य सभ्यता के आवरण मे हम अपने गौरव पूर्ण अतीत को भूलते जा रहे है। हमे अपनी वैदिक-शिक्षा की मौलिकता यह कह कर नही टाल देना चाहिए कि ये पुराने जमाने की वाते सिर्फ पुराने जमाने योग्य रही होगी पर आधुनिक युग मे इसका कोई स्थान नही है। वैदिक काल मे वालक अपने माता पिता को छोडकर, ऊँच नीच का भेदभाव मन से हटाकर जव गुरुकुल मे प्रवेश पाता था, तव उसे यह पहला सवक सिखाया जाता था कि "कर्म कुरू," "दिवा मा स्वाप्सी"। "क्रोधानृते वर्जये," "उपरि शैय्या वर्जये"॥

अर्थात् "काम करते रहना, श्रम का जीवन विताना, निठल्ले न रहना, रात को सोना, दिन सोने के लिये नही, काम करने के लिये है, क्रोध न करना, भूँठ न वोलना, गन्दे पर न पडे रहना, तपस्या का जीवन विताना।" शिक्षा के जिस उद्देश्य को सामने रखकर वैदिक गुरूकुल प्रणाली की नीव रखी गयी थी उसका आधार "तपस्या" था याने निरन्तर परिश्रम करने की क्षमता वढाना। यहाँ यह कहने का प्रयोजन नही है कि अव भी

विद्यार्थी गुरुकुल मे जाकर विद्याध्ययन करे। पर यह स्पष्ट है कि देश और समाज को हर काल मे ऐसे युवको की आवश्यकता रहती है, जिनका प्रारम्भिक जीवन तपस्या की आग से तप कर निकला हो, जो फूल की तरह नाजुक न हो, चट्टान की तरह जिनका जीवन कठोर हो और जो शीत उष्ण, हानि लाभ और सुख दु:ख को हँसते हँसते झेल सके। आज विद्यार्थी आराम का जीवन विताते है। उनके शरीर नाजुक हैं, वे रोग ग्रस्त है और उनका दिमाग इतना असन्तुलित रहता है कि थोडी सी उत्तेजना मे वे उखड पडते है। ऐसे व्यक्ति भला जीवन की चुनौतियो का कैसे सामना कर सकता है? अगर हम अपनी प्राचीन सस्कृति को छात्रावासो मे रहकर पुन: जीवित करना चाहे तो कोई असगत बात नही है। छात्रावास भी तो विद्यार्थियो के अध्ययन के लिये एक तरह का गुरुकुल ही है। यहाँ रहकर वैदिक काल की तरह उन्ही भावनाओ को लेकर हम जीवन का सामूहिक रूप से विकास कर सकते है। यहाँ रह करके सभी एक स्तर पर पहुँच जाते है, न कोई अमीर और न कोई गरीव, न कोई ऊँचा और न कोई नीचा, सभी भाई भाई। अब भी छात्र निवासो मे भोजन के पहले यह सामूहिक प्रार्थना गायी जाती है

"ॐ सह नाववतु। सह नौ भुनवतु। सह वीय करवावहै।
तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्वषावहै।।
ॐ शान्ति, शान्ति, शान्ति।

अर्थात् "हे परमात्न्, एक साथ ही हम दोनो (आचार्य शिष्य) की रक्षा करो। साथ ही हम दोनो का पालन करो, हम दोनो साथ ही बल को बढावे, हम दोनो का पढना स्वाध्याय तेज युक्त हो, कभी हम एक दूसरे का अहित न सोचे। हे प्रभो हम दोनो को त्रिविध शान्ति प्राप्त हो।"

गुरू-शिष्य परम्परा मे कितनी सुन्दर, कितनी पावन भावनाओ को सजोया जाता है यह इसकी एक झलक है। इस तरह के पावन वातावरण मे अध्ययन करने से छात्रो का बौद्धिक विकास होता है, मन सयमित और एकाग्र होता है। उज्जवल भविष्य की रूपरेखा बन जाती है।

इसी विद्याध्ययन के समय अपने स्वास्थ्य निर्माण पर पूरा जोर देना चाहिये। किसी प्रकार के दुर्व्यसनो को नही लगाना चाहिये। चाय, काफी, धूम्रपान, मद्यपान एव अन्य नशीले पदार्थों का पूरा परहेज करना। नित्य प्रात काल उठकर व्यायाम करने का अभ्यास करना चाहिये। भोजन जितना सादा, सरल, मिर्च मसालो से रहित होगा, उतना ही सुपाच्य और आरोग्य-प्रद होगा। अच्छी तरह चबाकर जल्दीबाजी न करके भोजन करना चाहिये। कहने का अभिप्राय यह है कि छोटी छोटी आदतो को सुधारने का तथा उस आदत को बनाये रखने का निरन्तर अभ्यास करना चाहिये।

अन्त मे एक बात और ध्यान मे रखनी चाहिये कि हमारे समय का कुछ भाग समाज के दीन-हीन कमजोर वर्ग की सेवा मे अर्पित किया जाना चाहिए। अपने तन-मन-धन का कुछ अश परमार्थ मे लगे तो अपूर्व आत्म-सन्तोप प्राप्त होता है। जब अपनी वस्तु दूसरे योग्य पात्र के भोग के लिये छोड दी जाती है, तो त्याग करने वाले को जो आनन्द मिलता है, उसका वर्णन करना सहज नही।

वैदिककाल मे शिक्षा समाप्त करने के बाद युवक से जो आशा की जाती है उसका उल्लेख तैत्तिरीयोपनिषद् मे इस प्रकार आता है ·

"सत्य वद । धर्म चर । स्वाध्यायान्या प्रमद । सत्यान्म प्रमदितव्यम् । धर्मान्न प्रमदितव्यम् । कुशलान्न प्रमदितव्यम् । स्वाध्याय प्रवचनाभ्याम् न प्रमदितव्यम् । मातृ देवो भव । आचार्य देवो भव । अतिथि देवो भव ।"

अर्थात् गुरू के सहचर्य मे जो कुछ विद्यार्थी ने सीखा है उससे यह आशा की जाती है कि वह जीवन मे सत्य का आचरण करेगा, धार्मिक जीवन वितायेगा, माता पिता की सेवा करेगा और बड़ो का सम्मान करेगा ।

इस शिक्षा प्रणाली मे कितने उच्च भाव निहित है । हमारी आधुनिक शिक्षा पद्धति मे बहुत त्रुटियाँ हैं । उसमे मूलत. परिवर्तन की आवश्यकता है । अगर वर्तमान के साथ मे अतीतकाल की शिक्षा प्रणाली की मौलिकता को ग्रहण किया जायेगा, तभी हमारी शिक्षण नीतिपूर्ण होगी । जव तक ऐसा नही होगा छात्र वर्ग नैराश्य के अन्धकार मे अपना मार्ग टटोलता रहेगा ।